(सल्ल.) मुहम्मद
इनसानियत के पैग़म्बर

एस०एस०यू० तबरेज़

विषय-सूची

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम
'ईश्वर के नाम से जो बड़ा दयावान, अत्यन्त कृपाशील।'

दो शब्द

इतिहास ऐसे महा पुरुषों से भरा पड़ा है जिन्होंने मानव-समाज पर विभिन्न रूप से प्रभाव डाला और मानव-कल्याण के लिए विभिन्न कार्य किए। लेकिन इन महापुरुषों में से किसी ने भी मानव-समाज पर एक ही समय में आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और व्यक्तिगत स्तर पर ऐसी अमिट छाप नहीं डाली जैसी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने! मुहम्मद (सल्ल॰) का प्रभाव मानव-समाज पर इतना गहरा और मज़बूत है कि उसने मानव-इतिहास की दिशा को सदैव के लिए बदल दिया। मानव-जीवन का कोई पहलू ऐसा नहीं है जिसमें पैग़म्बर (सल्ल॰) का पवित्र व्यक्तित्व हमारे लिए रौशनी और मार्गदर्शन उपलब्ध न कराता हो।

क़ुरआन, जो अन्तिम ईश्वरीय ग्रन्थ (आसमानी किताब) है, हम से यह माँग करता है कि हम आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को अपनी ज़िन्दगी के हर पहलू के लिए नमूना बनाएँ और आप (सल्ल॰) के पद-चिन्हों पर चलकर अनन्त सफलता हासिल कर लें।

> "वास्तव में तुम लोगों के लिए अल्लाह के रसूल (के व्यक्तित्व) में बेहतरीन नमूना है, प्रत्येक उस आदमी के लिए जो अल्लाह (से मुलाक़ात) और आख़िरत के दिन की उम्मीद रखता हो और बहुत ज़्यादा अल्लाह का ज़िक्र करता हो।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-21)

क़ुरआन की यह आयत इतनी विस्तृत और व्यापक है कि यह हमारी ज़िन्दगी के सारे पक्षों को अपने घेरे में ले लेती है। लेकिन इसकी व्यापकता को हम उसी वक़्त समझ सकते हैं जब हम हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के पवित्र जीवन-चरित्र और नबी (सल्ल॰) के अद्भुत कार्यों से अवगत हों। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ईशदूत, समाज सुधारक, करुणापूर्व शासक, योद्धा एवं सेनापति,

ईमानदार व्यापारी, उच्च कोटि के शिक्षक, भावकतापूर्ण पिता और पति, उदार हृदय साथी और सबसे बढ़कर एक आदर्श व्यक्ति थे।

अल्लाह के नबी (सल्ल०) की वास्तविक महानता का पता आप (सल्ल०) की उन सफलताओं से चलता है जो आप (सल्ल०) के मानवीय प्रयासों से हासिल हुईं और जिन कोशिशों की वजह से आप (सल्ल०) अल्लाह के पैग़ाम को पूरी दुनिया तक पहुँचा सके। अल्लाह के प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के संघर्षों के मानवीय पक्ष का प्रदर्शन न केवल आप (सल्ल०) के अपने जीवन-वृत्तांतों से होता है, बल्कि क़ुरआन में भी विभिन्न जगहों पर इसका उल्लेख किया गया है। क़ुरआन में है—

"ऐ नबी! कहो कि मैं तुम ही जैसा एक इनसान हूँ, मेरी तरफ़ वह्य की जाती है कि तुम्हारा ख़ुदा बस एक ही ख़ुदा है। अतः जो कोई अपने रब की मुलाक़ात का उम्मीदवार हो उसे चाहिए कि नेक अमल करे और बन्दगी में अपने रब के साथ किसी और को सम्मिलित न करे।" (क़ुरआन, सूरा-18 कहफ़, आयत-110)

एक और जगह पर क़ुरआन कहता है—

"ऐ नबी! उनसे कहो, मैं तुम से यह नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं और न (यह कि) मैं परोक्ष का ज्ञान रखता हूँ और न यह कहता हूँ कि मैं फ़रिश्ता हूँ। मैं तो केवल उस वह्य (प्रकाशना) की पैरवी करता हूँ जो मुझ पर अवतरित की जाती है और फिर उनसे पूछो : क्या अंधा और आँखोंवाला दोनों बराबर हो सकते हैं? क्या तुम विचार नहीं करते।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-50)

ये केवल दो उदाहरण हैं, उन अनेक उदाहरणों में से जो क़ुरआन में बार-बार आए हैं और जो आप (सल्ल०) को मानव होने के पक्ष को स्पष्ट करते हैं।

यह पुस्तक एक साधारण-सी कोशिश है, जो पाठक को पैग़म्बर (सल्ल०) के जीवन-चरित्र के महत्वपूर्ण पक्षों एवं घटनाओं से अवगत कराना चाहती

है। वे पाठकगण जो प्रमाणिक स्रोतों से इस्लाम के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) के जीवन-चरित्र के जानने के इच्छुक हैं, किन्तु उनके पास इसका अवसर नहीं कि वे मोटी-मोटी किताबें पढ़ सकें तो ईश्वर ने चाहा तो यह किताब उनके लिए बहुत लाभप्रद सिद्ध होगी। इस बात की पूरी कोशिश की गई है कि नबी (सल्ल॰) की जीवनी के सारे पक्षों एवं घटनाओं को इसमें लाया जा सके, लेकिन पुस्तक की मोटाई को कम करने के लिए विभिन्न पहलुओं की लम्बी-लम्बी बहसों को छोड़ दिया गया है। जब भी किसी पक्ष पर एक से अधिक पारस्परिक प्रमाण और हदीसें सामने आई हैं तो ऐसी दशा में उस प्रमाण और हदीस को सामने रखा गया है जो क़ुरआन से अधिक क़रीब हो। हमारी इस कोशिश पर किसी को हैरत नहीं होनी चाहिए। इसके स्पष्ट कारण हैं। जीवनी-लेखक चाहे कितना ही भरोसेमंद और विश्वसनीय क्यों न हो, उसके विचार उसके वातावरण, उसकी शिक्षा की शैली तथा व्यक्तिगत अनुभव से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। इसके विपरीत क़ुरआन किसी भी तरह की मानवीय-सीमाओं और कमियों से परे है। यह अल्लाह का कलाम (वाणी) है जिसके बारे में कोई शक-व-सन्देह नहीं है। तथा जहाँ भी किसी घटना का विवरण सही हदीसों में मिलता है, तो हमने उसे व्यक्तिगत लिखनेवालों से अधिक महत्व दिया है। अपनी इस कोशिश में मैं कितना सफल हुआ हूँ, इसका फ़ैसला केवल और केवल पाठकगण ही कर सकते हैं। यह पुस्तक लिखना मेरे बस की बात नहीं थी। **इसका सौभाग्य तो केवल ईश्वर ही प्रदान करता है।**

—एस॰एस॰यू॰ तबरेज़
ssutabrez@gmail.com

अध्याय 1
मुहम्मद (सल्ल०) मक्का में

1:1 इस्लाम से पहले का अरब

क़ुरआन कहता है—

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! अल्लाह से डरो जैसा कि उससे डरने का हक़ है। तुमको मौत न आए मगर इस दशा में कि तुम मुस्लिम (आज्ञाकारी) हो। सब मिलकर अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ लो और तफ़रक़े (विभेद) में न पड़ो। अल्लाह के उस एहसान को याद रखो जो उसने तुम पर किया है। तुम एक-दूसरे के दुश्मन थे, उसने तुम्हारे दिल जोड़ दिए और उसकी कृपा से तुम भाई-भाई बन गए। तुम आग से भरे हुए एक गड्ढ़े के किनारे खड़े थे, अल्लाह ने तुमको उससे बचा लिया। इस तरह अल्लाह अपनी निशानियाँ तुम्हारे सामने स्पष्ट करता है। शायद कि इन निशानियों से तुम्हें अपनी सफलता का सीधा रास्ता दिखाई दे जाए।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयतें-102, 103)

क़ुरआन का यह उल्लेख इस्लाम के आने से पहले के अरब के हालात का संक्षिप्त विवरण हमारे सामने स्पष्ट रूप में पेश करता है और फिर इस्लाम के आगमन ने पूरे अरब को किस प्रकार परिवर्तित कर दिया यह भी बताता है।

इस्लाम के आगमन से पहले मक्का और उसके आस-पास किसी राज्य-सत्ता की अवधारणा नहीं थी। बददुओं पर आधारित आबादियाँ थीं जो विभिन्न क़बीलों में यहाँ-वहाँ रहती थीं। यद्यपि कुछ शहरी आबादियाँ मक्का, मदीना और ताइफ़ की सूरत में मौजूद थीं, लेकिन उनकी हैसियत आटे में नमक के बराबर थी। हर आदमी की प्रतिबद्धता अपने क़बीले या अपने समुदाय से जुड़ी होती थी और वह क़बीले के रीति-रिवाजों और परम्पराओं में पूरी तरह

डूबा रहता था। ये लोग अपने क़बीले के लिए मौत को गले लगाने को न केवल हर समय तैयार रहते थे, बल्कि इसको अपने लिए मान-सम्मान और गर्व की बात समझते थे। ये क़बीले हमेशा एक-दूसरे से लड़ने-मरने और युद्ध करने पर उतारु रहते थे। मामूली-मामूली बात पर ख़ून की नदियाँ बह जातीं और यह उनके लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। कभी-कभी तो दो क़बीलों के दो लोगों का मामूली झगड़ा उन क़बीलों के बीच वर्षों तक चलनेवाले युद्ध का कारण बन जाता और यह युद्ध पूरे क्षेत्र में भयानक तबाही का कारण हो जाता।

शराब पीना, जुवा खेलना और वेश्यावृत्ति को समाज में सामान्य स्वीकृति प्राप्त थी। ग़ुलामों, महिलाओं और समाज के कमज़ोर वर्गों को उनके मौलिक मानवीय अधिकार तक प्राप्त न थे और समाज के मालदार और सम्पन्न लोग उन समुदायों के ख़ून चूस-चूसकर अपनी ख़ुशहाली और प्रभुता को क़ायम रखते। अंधविश्वास और बहुदेववाद उनकी प्रकृति में समाए हुए थे। हज़रत इबराहीम (अलैहि०) से अपना रिश्ता जोड़ने के बावजूद उनमें बुतों की पूजा आम थी। विभिन्न क़बीलों के अपने-अपने बुत और देवता थे। भविष्यवक्ताओं, शगुन विचारनेवालों और जादूगरों को अरब के उस अंधविश्वासी समाज में विशेष महत्व प्राप्त था और लोग उनका सम्मान करते थे।

लेकिन इन सब बुराइयों और कमियों के बावजूद उस अरब समाज में कुछ ऐसी अच्छाइयाँ भी थीं जो उनको दुनिया के दूसरे समाजों से अलग श्रेष्ठता का स्थान देती थीं। वे इज़्ज़तदार लोग थे और अपनी बात के पक्के थे। यदि वे किसी से वादा कर लेते तो वादा निभाने के लिए जान तक क़ुरबान कर देने के लिए तैयार रहते और यदि क़बीले का एक व्यक्ति भी किसी से कोई वादा कर लेता तो पूरा क़बीला उस वादे का पाबन्द होता।

उस अरब समाज में शिक्षा आम नहीं थी और गिने-चुने लोग ही पढ़-लिख सकते थे लेकिन उनको एक ऐसी भाषा प्राप्त थी जो आशय को अच्छी तरह व्यक्त करने के लिए बहुत अधिक अनुकूल और प्रभावी थी। अरबी, दुनिया की परिष्कृत भाषाओं में से एक भाषा उस समय भी थी और आज भी है। अरब अपनी इस भाषा पर इतना गर्व करते थे कि ग़ैर अरब को वे 'अजमी'

कहकर पुकारते थे। 'अजमी' का साधारण अनुवाद गूंगा किया जा सकता है। अरबों की स्मरण शक्ति अद्वितीय है और यह क्षमता ही थी जिसने शिक्षा की कमी को बहुत हद तक पूरा कर दिया था।

अनेकेश्वरवाद के दलदल में फँसे होने के बावजूद हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) के ताल्लुक़ से वे सब काबा से पूरी तरह जुड़े हुए थे। उनको यह पता था कि हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) ने काबा का एक अल्लाह की इबादत के लिए निर्माण किया था और पूरे अरब महाद्वीप में काबा को उसी रूप में जाना जाता था।

'हज', जिसकी शुरूआत हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) ने पालनहार परमेश्वर अल्लाह के हुक्म से की थी वह पूरे जोश के साथ आयोजित किया जाता था। यद्यपि अरबों ने इसमें बहुत-से बहुदेववाद वाले रस्मो-रिवाज को मिला दिया था, लेकिन वे अब भी उसको 'हज' का ही नाम देते थे। क़ुरैश का क़बीला केवल ख़ाना काबा की वजह से पूरे अरब में धार्मिक मार्गदर्शक के रूप में देखा जाता था। पूरा अरब अशांत था लेकिन मक्का में काबे के सम्मान के कारण अमन-चैन बना रहता था। यही कारण था कि मक्का के व्यापारी साल भर अरब की यात्रा करने, व्यापारी क़ाफ़िलों को यमन और सीरिया तक ले जाने और बद्दुओं के किसी भी तरह के हमले से सुरक्षित रहने में सफल रहते। व्यापार में इसी सफलता ने मक्का में ऐसा आर्थिक स्थायित्व ला दिया था, जिसका अरब के किसी भी दूसरे शहर या इलाक़े में कल्पना करना सम्भव नहीं था। क़ुरआन अरबों को उनके इस सम्मानजनक स्थिति की ओर ध्यान दिलाते हुए कहता है—

> "क्योंकि क़ुरैश मानूस हुए (यानी) जाड़े और गर्मी की यात्राओं से मानूस; अतः उन्हें चाहिए कि इस घर (काबा) के रब की इबादत करें जिसने उन्हें भूख से बचाकर खाने को दिया और भय से बचाकर अमन दिया।" (क़ुरआन, सूरा-106 क़ुरैश, आयतें-1-4)

प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के जन्म के समय आपके दादा अब्दुल-मुत्तलिब क़ुरैश के एक क़बीले बनू-हाशिम के सरदार थे और हज के दौरान हाजियों को पानी पिलाने (सक़ाया) की ज़िम्मेदारी उनके ऊपर थी। उनके

ज़िम्मे वहाँ होनेवाली आमदनी को एकत्रित करने की ज़िम्मेदारी भी थी। अब्दुल-मुत्तलिब बहुत ही दानवीर और नेकदिल इनसान थे और अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण समाज में बहुत लोकप्रिय थे।

अब्दुल-मुत्तलिब के दस पुत्र थे। उनमें से अब्दुल्लाह, अब्दुल-मुत्तलिब को बहुत प्रिय थे। वे अपने पिता की आँख का तारा थे। अब्दुल्लाह का विवाह बनू ज़ोहरा (एक क़बीला) के सरदार की बेटी आमना से हुआ था। लेकिन अल्लाह को कुछ और ही मन्ज़ूर था। विवाह के कुछ दिन के बाद ही अब्दुल्लाह व्यापार के लिए यात्रा पर गए और यात्रा के बीच ही बीमार पड़े और उनकी मृत्यु हो गई। अब्दुल्लाह की मृत्यु के समय बीबी आमना गर्भ से थीं।

इस अवसर पर मक्का को इतिहास की एक बड़ी परीक्षा से गुज़रना पड़ा। यमन का ईसाई शासक अब्रहा, काबा के मान-सम्मान से इतना अधिक जल उठा कि एक बड़ी सेना लेकर मक्का की ईंट से ईंट बजाने के लिए चला आया। उसकी सेना में बड़ी संख्या में हाथी भी थे। लेकिन वह अपने शैतानी संकल्प में सफल नहीं हो सका और अपनी सेना समेत बर्बाद हो गया। अरब इतिहास में उस वर्ष को 'हाथी वाला साल' कहा जाता था।

1:2 अल्लाह के नबी (सल्ल॰) का आगमन

हाथी वाले साल, 12 रबीउल-अव्वल को अल्लाह के नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का जन्म हुआ। नबी (सल्ल॰) के जन्म से कुछ महीने पहले ही उनके पिता हज़रत अब्दुल्लाह की एक व्यापारिक यात्रा के दौरान मृत्यु हो चुकी थी। आप (सल्ल॰) के जन्म के बाद से ही आपके दादा अब्दुल-मुत्तलिब ने आपके लालन-पालन की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। शुरू में पैग़म्बर (सल्ल॰) ने अपनी माँ का दूध पिया। कुछ दिनों के लिए अपने चचा अबू लहब की लौंडी सोबिआ का दूध भी पिया। उसके बाद अरब की परम्पराओं के अनुसार मुहम्मद (सल्ल॰) को साफ़ वातावरण में पालन पोषण के लिए पास के ही एक गाँव में भेज दिया गया जहाँ आप (सल्ल॰) का लालन-पालन दाई हलीमा ने किया। हलीमा क़बीला बनू-सअद से थीं, जो बनू-हवाज़िन की शाख थी। आप (सल्ल॰) दाई हलीमा के पास छः साल तक रहे और फिर मक्का वापिस आ गए। कुछ ही समय बाद आप (सल्ल॰) की माँ का देहांत हो गया।

मुहम्मद (सल्ल॰) अभी आठ साल के ही थे कि आप (सल्ल॰) ने अपने दादा को भी खो दिया। दादा की मृत्यु आप (सल्ल॰) के लिए एक बहुत बड़ी दुर्घटना थी। अब्दुल-मुत्तलिब ने अपनी मृत्यु से पहले अपने बेटे अबू-तालिब को आप (सल्ल॰) के लालन-पालन और देख-भाल की ज़िम्मेदारी सौंप दी थी।

अबू-तालिब ने आप (सल्ल॰) के लालन-पालन और देख-रेख में कोई कसर नहीं छोड़ी। वे आप (सल्ल॰) से अत्यधिक प्यार करते और ग़रीब होने के बावजूद आपका ख़ास ख़याल रखते। एक कारवाँ के साथ 12 वर्ष की आयु में आप (सल्ल॰) को क़ुरैश के सबसे ख़ास पेशे व्यापार से परिचित कराया गया। कुछ कथनों के अनुसार व्यापारियों के उस कारवाँ ने एक

ईसाई मठ के पास डेरा डाला। उस मठ का सबसे बड़ा धर्म-गुरु बुहैरा उस क़ाफ़िले के स्वागत के लिए स्वयं उस डेरे तक आया। क़ुरैश के लिए यह एक अनहोनी-सी बात थी, क्योंकि ऐसा पहली बार हुआ था कि बुहैरा ज्ञान-ध्यान को छोड़कर क़ाफ़िले से मिलने मठ से बाहर आया हो।

जब वह आप (सल्ल॰) के पास आया तो उसने उनके अभिभावक के बारे में पूछा। जब लोग अबू-तालिब को उसके पास लाए तो उसने उनसे कहा कि वे आप (सल्ल॰) को लेकर रोम की भूमि पर क़दम न रखें; ऐसा न हो कि वे लोग आप (सल्ल॰) को कोई नुक़सान पहुँचा दें। यह भी कहा जाता है कि उसने अबू-तालिब से कहा कि वह इस बच्चे में पैग़म्बरी की खुली निशानियाँ देख रहा है। अबू-तालिब ने बुहैरा के इस सुझाव को स्वीकार कर लिया और आप (सल्ल॰) को अपने विश्वसनीय लोगों के साथ वापस मक्का भेज दिया।[1]

जब मुहम्मद (सल्ल॰) की आयु 15 वर्ष की हुई तो उस समय अरब की अराजकता में एक ख़ास घटना घटी। अरब समाज कई वर्षों तक चलनेवाले रक्तपाती युद्धों के लिए जाना जाता था और एक क़बीला दूसरे क़बीले से लम्बे समय लड़ने-मरने में लगा रहता। अकसर इन जंगों की शुरुआत बहुत ही मामूली घटनाओं से होती और अन्ततः कमज़ोर और लाचार जनता की तबाही पर समाप्त होती।

एक जंग—जिसमें क़ुरैश और बनू-कनाना एक ओर तथा क़ैस और बनू-हवाज़न के क़बीले दूसरी ओर थे—पाँच साल तक चली। इस जंग के बाद लोगों को होश आया और क़बीले के बुद्धिजीवियों ने यह फ़ैसला किया कि वे कमज़ोर और मासूम लोगों के अधिकारों की रक्षा करेंगे। आप (सल्ल॰)

1. कुछ पश्चिमी लेखकों ने आप (सल्ल॰) की इस छोटी-सी मुलाक़ात को आप (सल्ल॰) की ज्ञान प्राप्ति का स्रोत बताने का प्रयास किया है। परन्तु पहले तो इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि आप (सल्ल॰) की बुहैरा से सीधी बात हुई और अगर ऐसा हुआ भी तो इन लेखकों को मुहम्मद (सल्ल॰) की स्मरण शक्ति के आगे नम्न-मस्तक हो जाना चाहिए कि एक बालक ने छोटी-सी भेंट के इतना कुछ ग्रहण कर लिया और फिर लम्बे समय के बाद उसे दुनिया के सामने रखने में समर्थ रहा। लेकिन ऐसा करने के लिए इन लेखकों को बहुत साहस और ईमानदारी चाहिए।

भी इस सन्धि में शामिल थे। इस समझौते या सन्धि को "हलफ़ुल-फ़ुज़ूल" (बुद्धिजीवियों का संकल्प या शपथ) के नाम से याद किया जाता है। बाद के वर्षों में आप (सल्ल०) इस सन्धि को याद करते और कहते–

"यह अज्ञान के दौर की कुछ अच्छी चीज़ों में से थी।"

समय के साथ हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) एक बेहतरीन आचरणवाले, ईमानदार और भरोसेमन्द नवजवान के रूप में सामने आए। पैग़म्बर (सल्ल०) के चरित्र की पवित्रता के कारण लोग आप (सल्ल०) को सादिक़ (सच्चा) और अमीन (विश्वसनीय) कहने लगे।

आप (सल्ल०) को शराब और जुए से सख़्त नफ़रत थी। आप (सल्ल०) क़िस्से कहानियों और नाच-गाने की महफ़िलों से पूरी तरह परहेज़ करते। आश्चर्य की बात यह है कि ये सारी बुराइयाँ अरब समाज का अनिवार्य अंग थीं। एक और विशिष्ट बात यह थी कि मुहम्मद (सल्ल०) अनेकेश्वरवादियों और उनकी सभाओं से भी सदा दूर रहते और उनकी प्रार्थनाओं में कभी भी शामिल न होते। अरब की परम्पराओं के अनुसार आप (सल्ल०) ने बचपन में भेड़-बकरियाँ चराने का काम भी किया।

बाद में आप (सल्ल०) ने व्यापार के कामों में भाग लेना शुरू किया और कुछ ही दिनों में आप (सल्ल०) ने एक नेक, ईमानदार और भरोसेमन्द व्यापारी के रूप में पूरे इलाक़े में प्रसिद्धि प्राप्त कर ली। आप (सल्ल०) न केवल एक ईमानदार व्यापारी थे, बल्कि लाभ भी भरपूर देते थे। ख़दीजा-बिन्ते-ख़ुवैलिद (रज़ि०) मक्का की एक प्रतिष्ठित धनवान विधवा महिला थीं जो लोगों को व्यापार के लिए सामान देकर विभिन्न इलाक़ों में भेजा करती थीं। जब ख़दीजा (रज़ि०) ने पैग़म्बर (सल्ल०) की ईमानदारी और बुद्धिमत्ता की चर्चा सुनी तो उन्होंने पैग़म्बर (सल्ल०) को अपने व्यापारी क़ाफ़िलों के साथ सीरिया भेजने का फ़ैसला किया। ख़दीजा (रज़ि०) ने पैग़म्बर (सल्ल०) के साथ अपने ग़ुलाम मैसरा को भी भेजा। पैग़म्बर (सल्ल०) ने व्यापारिक यात्रा की वापसी पर ख़दीजा (रज़ि०) को बेहतरीन मुनाफ़ा दिया। मैसरा, जो पूरी यात्रा में पैग़म्बर (सल्ल०) के साथ-साथ था, ने ख़दीजा (रज़ि०) से उनकी बहुत तारीफ़ की।

उनके व्यापार करने के तरीक़े, उनकी व्यापार की समझ, उनकी दूरदर्शिता, मामले की समझ और उनकी ईमानदारी की भरपूर प्रशंसा की।

ख़दीजा (रज़ि०) इस व्यापारी यात्रा से पहले ही उनकी बहुत-सी तारीफ़ें सुन चुकी थीं और आप (सल्ल०) के व्यक्तित्व से बहुत अधिक प्रभावित थीं। अब मैसरा से उनकी तारीफ़ सुनकर इतनी प्रभावित हुईं कि उन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के पास शादी का पैग़ाम भेज दिया। आप (सल्ल०) ने अपने चचा अबू-तालिब से सलाह करने के बाद ख़दीजा (रज़ि०) से शादी करने का फ़ैसला कर लिया। शादी के समय हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की आयु 25 वर्ष और ख़दीजा (रज़ि०) की आयु 40 वर्ष थी।

हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) से आप (सल्ल०) की चार बेटियाँ—ज़ैनब (रज़ि०), रुक़य्या (रज़ि०), उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) और फ़ातिमा (रज़ि०) हुईं और चारों बड़ी होकर न केवल मुसलमान हुईं, बल्कि इस्लाम और मुसलमानों की बेहतरीन सेवाएँ कीं। ख़दीजा (रज़ि०) से पैग़म्बर (सल्ल०) के दो बेटे—क़ासिम और अब्दुल्लाह भी हुए, लेकिन दोनों की कम उम्र में ही मृत्यु हो गई।

आप (सल्ल०) और हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) का वैवाहिक सम्बन्ध आदर्श था। इन दोनों के बीच इतना प्यार था कि हज़रत आइशा (रज़ि०), जिनसे पैग़म्बर (सल्ल०) ने हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) की मृत्यु के बाद शादी की, वे हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) की तारीफ़ें सुन-सुनकर उनसे कभी-कभी ईर्ष्या (रश्क) महसूस करने लगतीं। वे कहा करती थीं कि उनको पैग़म्बर (सल्ल०) की किसी दूसरी पत्नी पर कभी इतना रश्क नहीं आया, जितना हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) पर आता था। यह इस वजह से था कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) को हमेशा बेहतरीन शब्दों में याद करते।

जब मुहम्मद (सल्ल०) 35 वर्ष के हुए तो उस साल एक महत्वपूर्ण घटना घटी। मक्का में उस साल बहुत अधिक वर्षा हुई और ज़बरदस्त सैलाब आया। उस सैलाब ने न केवल मक्का को नुक़सान पहुँचाया बल्कि काबा की इमारत भी बहुत हद तक ख़राब हो गई। काबा के नवनिर्माण में मक्का के सभी क़बीलों ने हिस्सा लिया, लेकिन जब हज्रे-असवद (काला पत्थर) को उसकी

जगह पर स्थापित करने का अवसर आया तो उसपर विवाद खड़ा हो गया। हज्रे-असवद के महत्व के कारण हर क़बीले का सरदार यह चाहता था कि उसे स्थापित करने का सौभाग्य उसे प्राप्त हो। विवाद बढ़कर युद्ध का रूप लेना ही चाहता था कि मक्का के एक बुज़ुर्ग व्यक्ति अबू-उमैया-बिन-मुग़ैरा ने यह सुझाव दिया कि जो भी कल प्रातः सबसे पहले ख़ाना काबा के परिसर में दाख़िल हो उसकी बात इस मामले में मान ली जाए। सौभाग्य से मुहम्मद (सल्ल॰) सबसे पहले परिसर में दाख़िल हुए। आप (सल्ल॰) को देखते ही लोगों ने कहा—

> "अमीन आ गए, अमीन आ गए। हम उनके फ़ैसले को स्वीकार करेंगे।"

पूरे विवाद का विवरण सुनने के बाद आप (सल्ल॰) ने एक बड़ी चादर मंगाई। हज्रे-असवद को उसके बीचों-बीच रखा और वहाँ पर मौजूद क़ुरैश के सब सरदारों से कहा कि वे उस चादर को पकड़कर उस जगह ले जाकर रखें, जहाँ हज्रे असवद को स्थापित किया जाना था। जब वे लोग उसको वहाँ ले गए तो आप (सल्ल॰) ने हज्रे-असवद को उठाकर उसकी जगह पर स्थापित कर दिया। इस विवाद में सम्मलित सभी लोगों को हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का यह फ़ैसला बहुत पसंद आया। एक बड़ी समस्या के समाधान का इससे बेहतर कोई दूसरा रास्ता सम्भवतः था ही नहीं।

अब आप (सल्ल॰) समाज में प्रतिष्ठित व्यक्तित्व के मालिक थे। लोग पैग़म्बर (सल्ल॰) का सम्मान करते। उनकी सज्जनता (शराफ़त) और उनके उच्च सदाचार के कारण लोग उनसे बहुत अपनापन महसूस करते। वे आप (सल्ल॰) की समझ-बूझ की वजह से उनसे अपनी समस्याएँ बयान करते, और उनका समाधान चाहते। अपनी परेशानी में आप (सल्ल॰) से सहायता चाहते।

विचारणीय बातें

(1) इस बात में कोई सन्देह नहीं कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) सारे पिछले नबियों के समान अनेकेश्वरवाद के विषय में ईश्वर के विशिष्ट सरंक्षण

में थे। आप (सल्ल॰) का अनेकेश्वरवाद से दूर का भी सम्बन्ध न था। बुराइयों में आप (सल्ल॰) कभी भी संलिप्त नहीं हुए। आप (सल्ल॰) का आचरण और चरित्र और आपका पूरा प्रशिक्षण ईश्वर द्वारा जिस शैली पर किया जा रहा था उससे प्रतीत होता है कि पैग़म्बर (सल्ल॰) उस महान कार्य के लिए तैयार किए जा रहे थे जो भविष्य में उनको करना था।

(2) एक ग़लत धारणा दुनिया में यह पाई जाती है कि ईशपरायण और पवित्र (मुत्तक़ी) लोगों को दुनिया से दूर रहना चाहिए और यह कि धर्मपरायणता और दुनियादारी दो अलग-अलग चीज़ें हैं। लेकिन क़ुरआन हमें यह बात स्पष्ट रूप से बताता है कि दुनिया में भेजे गए तमाम पैग़म्बर (हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ सहित) आम लोगों की तरह थे। ये सारे पैग़म्बर दूसरे मनुष्यों से केवल अपने ऊँचे आचरण और उच्च जीवन-शैली की वजह से श्रेष्ठ एवं विलग थे।

(3) लोग हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से आप (सल्ल॰) की ईमानदारी, शराफ़त और श्रेष्ठ सदाचार एवं चरित्र के आधार पर मुहब्बत करते। लेकिन क़ुरैश के सरदारों का रवैया आप (सल्ल॰) के साथ उस समय बिलकुल बदल गया जब आप (सल्ल॰) ने उनको एक वास्तविक ईश्वर यानी एक अल्लाह की ओर बुलाना शुरू किया, बहुदेववाद से बचने को कहा, और उनसे यह कहा कि मानव होने की दृष्टि से सभी मनुष्य बराबर हैं। जब पैग़म्बर (सल्ल॰) ने मानवता, मानव-समानता और एकेश्वरवाद की ओर बुलाना शुरू किया तो क़ुरैश के सरदारों को अपनी चौधराहट ख़तरे में महसूस हुई। उनको लगा कि इनसानी बराबरी की सोच और एकेश्वरवाद समाज में ऊँच-नीच और वर्ग-व्यवस्था को समाप्त करके उनकी सरदारी को ख़तरे में डाल देगी। इसमें आश्चर्य की कोई बात भी नहीं थी क्योंकि पिछले तमाम नबियों को भी इन जैसी परेशानियों से जूझना पड़ा था जिनका पैग़म्बर (सल्ल॰) को सामना करना पड़ा। क़ुरआन हज़रत सालेह (अलैहि॰) (एक पूर्व पैग़म्बर) की क़ौम के उस जवाब को विस्तार से उल्लेख करता है जो उन्होंने अल्लाह के पैग़म्बर की दावत के जवाब में दिया—

"और हमने समूद (की क़ौम) की तरफ़ उनके भाई सालेह (अलैहि॰) को भेजा। उसने कहा : ऐ मेरी क़ौम के लोगो! तुम अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है, उसने तुम्हें ज़मीन से पैदा किया और उसी ने तुम्हें उसमें आबाद किया। इसलिए तुम उसी से क्षमा माँगो, फिर उसी की तरफ़ तौबा करो, बेशक मेरा रब बहुत क़रीब है, (दुआएँ) क़बूल करनेवाला है। उन्होंने कहा : ऐ सालेह! इससे पहले तू हमारे मध्य ऐसा व्यक्ति था जिससे बड़ी उम्मीदें सम्बद्ध थीं। क्या तू हमें इस बात से रोकता है कि हम उनकी इबादत न करें जिनकी हमारे बाप-दादा इबादत करते थे और निस्सन्देह जिस चीज़ एकेश्वरवाद की ओर तू हमें बुलाता है हम उसके सम्बन्ध में ऐसे सन्देह में हैं जो परेशान करनेवाले हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयतें-61, 62)

यह बात दिन की रौशनी की तरह स्पष्ट है कि उनका सन्देह केवल उनके व्यक्तिगत हितों को छुपाने का एक बहाना था। वह व्यक्ति जिसको वे भविष्य का सरदार समझते थे, अपने ऊँचे आचरण के होने पर भी एकाएक उनकी नज़रों से गिर गया, क्योंकि वह उस सोच की ओर बुलाता था जो इनसानी बराबरी, समानता और एकेश्वरवाद पर क़ायम थी। यही बात हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के बारे में भी सटीक बैठती थी।

1:3 नुबूवत (पैग़म्बरी) का मिलना

हमने यह बात पिछले पृष्ठों में स्पष्ट कर दी है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) स्वभाव से ही अनेकेश्वरवाद और अनेकेश्वरवादी विचारों से कोसों दूर थे। पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कभी भी न तो मूर्तियों के सामने हाथ फैलाया और न ही उनकी पूजा की। आप (सल्ल॰) अनेकेश्वरवादी रीति व रिवाज से बहुत दूर रहे। आप (सल्ल॰) शराब, जुआ, नाच-गाने के आयोजनों जैसी ख़राबियों से भी सदा दूर रहे।

जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) चालीस वर्ष के निकट हुए तो आप (सल्ल॰) को ध्यान करने और चिन्तन-मनन से बहुत अधिक दिलचस्पी हुई। आप (सल्ल॰) घंटों चिन्तन-मनन में व्यस्त रहते। कुछ दिनों बाद जब आप (सल्ल॰) चिन्तन-मनन में कुछ अधिक ही लीन रहने लगे तो आप खाने-पीने का कुछ सामान लेकर ग़ारे-हिरा (हिरा नामक गुफ़ा) चले जाते, जो मक्का के क़रीब जबल नूर नामक पहाड़ी में है और वहाँ अल्लाह से हिदायत माँगते। अल्लाह को याद करते, और मनुष्य और जगत् की उत्पत्ति पर सोच-विचार करते। आप (सल्ल॰) वहाँ से उसी समय वापस आते जब खाने-पीने का सामान समाप्त हो जाता।

यह क्रम लगभग तीन साल तक चला और जैसे-जैसे आप (सल्ल॰) चालीस साल के क़रीब होते गए इस दशा में तीव्रता आती गई। आप (सल्ल॰) अपना अधिक से अधिक समय अल्लाह के स्मरण में लगाने लगे।

इसी प्रकार के एक अवसर पर जब आप (सल्ल॰) ग़ारे-हिरा में ध्यानयोग में डूबे हुए थे, अल्लाह के भेजे हुए फ़रिश्ते, हज़रत जिबरील (अलैहि॰) अल्लाह का सन्देश लेकर आप (सल्ल॰) के पास आए। इस पूरी घटना का विवरण जो हज़रत आइशा (रज़ि॰) द्वारा उल्लेख की गई, सहीह बुख़ारी में मौजूद है—

"प्रारम्भ में अल्लाह तआला की ओर से अल्लाह के रसूल (सल्ल॰)

की ओर सच्चे स्वप्न के रूप में सन्देश अवतरित होने शुरू हुए। पैग़म्बर (सल्ल॰) के स्वप्न बिलकुल सही और सटीक सिद्ध होते थे ऐसा ही जैसा कि सुबह का उजाला। उसके बाद पैग़म्बर (सल्ल॰) एकान्त में और सोच-विचार में अधिक से अधिक समय व्यय करने लगे। पैग़म्बर (सल्ल॰) ग़ारे-हिरा के एकान्त में लगातार कई दिनों और रातों तक अल्लाह तआला की इबादत और स्मरण में व्यस्त रहते और कई-कई दिनों बाद वापस आते। अपने साथ खाने-पीने की कुछ चीज़े ले जाते और जब वह समाप्त हो जातीं तभी वापस आते। इसी दौरान अचानक, जबकि पैग़म्बर (सल्ल॰) ग़ारे हिरा में थे, हज़रत जिबरील (अलैहि॰) आप के निकट आए। पुनीत फ़रिश्ते ने पैग़म्बर (सल्ल॰) को पढ़ने को कहा। उसके जवाब में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने कहा : "मैं पढ़ना नहीं जानता।"

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने बताया कि, "फिर फ़रिश्ते ने मुझे ज़ोर से भींचा, जो मेरे लिए असहनीय हो गया। फिर फ़रिश्ते ने मुझे अपनी पकड़ से आज़ाद किया (यानी मुझे छोड़ दिया) और मुझ से पढ़ने को कहा। मैंने फिर कहा, मुझे पढ़ना नहीं आता, फिर उसने मुझे पकड़ा और इतनी ज़ोर से दबाया कि मेरे लिए असहनीय हो गया। उसने फिर मुझसे पढ़ने को कहा लेकिन मैंने फिर वही कहा, मैं पढ़ना नहीं जानता। फिर फ़रिश्ते ने मुझे तीसरी बार पकड़ा और मुझसे कहा—

> "पढ़ो अपने रब के नाम से जिसने पैदा किया। उसने मनुष्य को जमे हुए ख़ून से पैदा किया। पढ़ो और तेरा रब बड़ा कृपालु है। जिसने इनसान को क़लम के ज़रिए सिखाया। उसने मनुष्य को वह चीज़ सिखाई जो वह नहीं जानता था।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-96 अलक़, आयतें-1-5)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) इस घटना के बाद घबरा गए और उसी दशा में घर वापस आए। पैग़म्बर (सल्ल॰) की दशा असामान्य लग रही थी। आप (सल्ल॰) की साँस बहुत तेज़ चल रही थी। अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) के पास गए और कहा : "मुझे उढ़ाओ, मुझे

उढ़ाओ।" घरवालों ने पैग़म्बर (सल्ल॰) को कम्बल उढ़ाया और आप (सल्ल॰) का साहस बढ़ाते रहे। यहाँ तक कि आप (सल्ल॰) का भय कम हुआ। तब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) को पूरी घटना कह सुनाई और कहा, "मुझे लगता है कि मेरे साथ कोई दुर्घटना घटित होने वाली है।"

हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने कहा : "कभी नहीं! अल्लाह की क़सम! अल्लाह आपको कभी भी रुसवा (अपमानित) नहीं करेगा। आप अपने रिश्तेदारों के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं, ग़रीबों की मदद करते हैं, अपने मेहमानों का सम्मान करते हैं और ज़रूरतमन्दों और परेशानहाल लोगों की हर तरह से मदद करने की कोशिश करते हैं।"

हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) पैग़म्बर (सल्ल॰) को अपने चचेरे भाई वरक़ा-बिन-नौफ़ल के पास ले गईं। वरक़ा-बिन-नौफ़ल ने जिहालत के दौर में ईसाई धर्म क़बूल कर लिया था और इब्रानी भाषा में बाइबल लिखा करते थे। वरक़ा काफ़ी बूढ़े हो चुके थे और आँख की रौशनी भी कमज़ोर हो गई थी। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने उनसे कहा, "सुनिए! आपके भतीजे के साथ क्या बीता।" पैग़म्बर (सल्ल॰) ने उनको पूरी घटना कह सुनाई। जब पैग़म्बर (सल्ल॰) अपनी बात कह चुके तो वरक़ा-बिन-नौफ़ल ने कहा : "यह तो वही (फ़रिश्ता जिबरील) है जिसे अल्लाह ने हज़रत मूसा (अलैहि॰) पर भेजा था। ऐ काश! मैं उस समय मौजूद होता और उस वक़्त तुम्हारी मदद कर सकता, जब तुम्हारी क़ौम तुमको यहाँ से बाहर निकाल देगी।" पैग़म्बर (सल्ल॰) यह सुनकर परेशान हो गए और पूछा : "क्या ये लोग मुझे निकाल देंगे?" वरक़ा ने इसका उत्तर हाँ में दिया और आगे कहा : "इससे पहले जितने भी लोग यह संदेश लेकर आए उनको दुश्मनी और सख़्ती का सामना करना पड़ा। यदि मैं उस समय तक ज़िन्दा रहा जब ऐसा होगा तो मैं तुम्हारा साथ दूँगा।" लेकिन कुछ ही दिनों बाद वरक़ा-बिन-नौफ़ल चल बसे। वह्य का सिलसिला भी कुछ दिनों के लिए बन्द हो गया। (हदीस : बुख़ारी-3)

वह्य के सिलसिले का रुकना एक ईश्वरीय योजना थी। जितना महान काम हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को सौंपा गया था और जो कठिनाइयाँ आगे आने वाली थीं। उनके लिए ज़रूरी था कि पैग़म्बर (सल्ल॰) को कुछ समय

मिले ताकि सच्चाई पैग़म्बर (सल्ल॰) के दिल में बैठ जाए और न केवल पैग़म्बर (सल्ल॰) आनेवाले महान कार्य के लिए मानसिक तौर पर तैयार हो जाएँ, बल्कि बेचैनी के साथ अगली वह्य की प्रतीक्षा भी करें।

हज़रत जिबरील (अलैहि॰) से पैग़म्बर (सल्ल॰) की दूसरी मुलाक़ात का उल्लेख करते हुए जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह अनसारी (रज़ि॰) कहते हैं—

"नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : 'मैं कहीं जा रहा था कि अचानक मुझे आसमान से एक आवाज़ आई। जब मैंने अपनी दृष्टि ऊपर उठाई तो मैंने उसी फ़रिश्ते को देखा जो ग़ारे-हिरा में मेरे पास आया था। वह आसमान और ज़मीन के बीच एक कुर्सी पर बैठा था। मुझे डर का एहसास हुआ, मैं घर वापस आया और मैंने कहा : 'मुझे कम्बल उढ़ा दो।' उसके बाद अल्लाह तआला ने मुझपर निम्नलिखित आयतें अवतरित कीं—

> "ऐ ओढ़-लपेटकर लेटनेवाले! उठो और सचेत करो और अपने रब की बड़ाई का एलान करो और अपने कपड़े पाक (स्वच्छ) रखो और गन्दगी से दूर रहो।" (क़ुरआन, सूरा-74 मुद्दस्सिर, आयतें-1-5)

इसके बाद वह्य का निरन्तर क्रम शुरू हो गया और एक के बाद दूसरी वह्य नाज़िल (अवतरित) होने लगी। (हदीस : बुख़ारी-4)

इसके बाद नबी (सल्ल॰) ने इस्लाम के प्रचार-प्रसार का काम शुरू कर दिया। प्रचार-प्रसार का यह प्रथम काल लगभग तीन वर्ष का है। इस अवधि में प्रचार का तरीक़ा व्यक्तिगत सम्पर्क पर आधारित था। पैग़म्बर (सल्ल॰) एक-एक व्यक्ति से मिलते और अल्लाह का आह्वान एवं संदेश पेश करते। सबसे पहले पैग़म्बर (सल्ल॰) पर ईमान लानेवाला कोई और नहीं, वह पैग़म्बर की जीवन संगनी, हर दुख-दर्द में साथ देनेवाली, उनकी प्रिय पत्नी हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) थीं। क़ुरैश के प्रमुख लोगों में सबसे पहले इस्लाम क़बूल करनेवाले हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) थे जो पैग़म्बर (सल्ल॰) के क़रीबी दोस्त थे। बच्चों में सबसे पहले हज़रत अली (रज़ि॰) ईमान लाए जो पैग़म्बर (सल्ल॰) के साथ ही रहते थे। ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) जो पैग़म्बर (सल्ल॰) के आज़ाद किए हुए ग़ुलाम थे, इस्लाम क़बूल करनेवालों में आगे थे। पैग़म्बर (सल्ल॰)

की बेटियाँ—हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰), हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि॰), हज़रत रुक़य्या (रज़ि॰) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) सबसे पहले ईमान लानेवालों में से थीं।

ये सभी लोग जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है, आपके मित्र और निकट सम्बन्धी थे और ये सभी लोग एक लम्बी अवधि से आप (सल्ल॰) को जानते थे। उनको इस बात का पूरा विश्वास था कि पैग़म्बर (सल्ल॰) जो कुछ कह रहे हैं वह सत्य है और उन पर इन सभी लोगों को पूरा भरोसा था।

हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के आह्वान से हज़रत उसमान-बिन-अफ़्फ़ान (रज़ि॰), अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰), साद-बिन-अबी-वक़्क़ास (रज़ि॰), ज़ुबैर-बिन-अव्वाम (रज़ि॰) और तलहा-बिन-उबैदुल्लाह (रज़ि॰) इस्लाम की ओर आकर्षित हुए। ये सभी लोग मक्का के मशहूर एवं सुपरिचित व्यक्ति और महत्वपूर्ण ख़ानदानों के सदस्य थे।

ये तमाम लोग जिन्होंने इस्लाम स्वीकार कर लिया था, वे चाहते थे कि किसी तरह उनके क़रीबी सम्बन्धीजन भी इस सत्य-धर्म को स्वीकार कर लें। इन लोगों के आह्वान एवं प्रचार का इतना प्रभाव पड़ा कि एक छोटी-सी अवधि में ही इस्लाम के अनुयायिओं की संख्या चालीस से भी आगे बढ़ गई। इनमें पुरुष भी थे और महिलाएँ भी।

जब हम प्रारम्भिक दौर के उन मुसलमानों को देखते हैं तो हमें लगभग सभी वर्गों एवं हैसियत के लोग मिलते हैं। यदि उनमें अबू-बक्र (रज़ि॰), उस्मान (रज़ि॰), और अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) जैसे मक्का के धनी एवं सम्पन्न लोग थे, तो ख़ब्बाब-बिन-अरत (रज़ि॰), और बिलाल (रज़ि॰) जैसे ग़ुलाम और ग़रीब लोग भी शामिल थे। ये लोग विभिन्न परिवारों और क़बीलों से सम्बन्ध रखते थे और समाज के अलग-अलग वर्गों से जुड़े हुए थे। अल्लाह पर अटूट विश्वास और पक्का ईमान और पैग़म्बर (सल्ल॰) की रिसालत पर पक्के विश्वास ने उनको मज़बूत दीवार के समान जोड़ रखा था।

ये ईश्वर पर दृढ़विश्वास रखनेवाले एवं सदाचारी लोग पैग़म्बर (सल्ल॰) से लगातार सम्पर्क में रहते और एक-दूसरे से भी अधिक-से-अधिक क़रीब रहने की कोशिश करते। ये लोग हज़रत अरक़म (रज़ि॰) के घर पर पाबन्दी

से मिलते और क़ुरआन की नई अवतरित आयतों को याद करने और समझने की कोशिश करते। उन दिनों पैग़म्बर (सल्ल॰) पर लगातार क़ुरआनी आयतें अवतरित हो रही थीं। पैग़म्बर (सल्ल॰) को अब यह अन्दाज़ा हो चला था कि वह दिन दूर नहीं जब पैग़म्बर (सल्ल॰) को इस्लाम की ओर लोगों को सामान्य रूप से आह्वान करने का हुक्म दे दिया जाएगा। पैग़म्बर (सल्ल॰) अरक़म (रज़ि॰) के घर पर सहाबियों की मुलाक़ात को उस महान कार्य में प्रशिक्षण देते जो उन लोगों से भविष्य में लिया जाना था।

पैग़म्बर (सल्ल॰) के बेहतरीन प्रशिक्षण के नतीजे में ईमानवाले साथियों (सहाबा) ने न केवल अल्लाह के वह्य का ज्ञान पैग़म्बर (सल्ल॰) से सीखा और सच्चे धर्म को समझा बल्कि अपने पूरे व्यक्तित्व को भी बेहतर बनाया। एक छोटी-सी अवधि में उन सहाबियों के व्यक्तित्व में चार चाँद लग गए और वे भविष्य में आनेवाली ज़िम्मेदारियों को निभाने के लिए बहुत हद तक तैयार हो गए।

ये सहाबा (रज़ि॰) विभिन्न गरोहों की शक्ल में भी आपस में लगातार मिलते रहने की कोशिश करते और इस बात का प्रयास करते कि आपस में विभिन्न विषयों पर विचारों का आदान-प्रदान करें और एक-दूसरे को समझने की कोशिश करें। ये लोग छोटे-छोटे ग्रुपों में नमाज़ का आयोजन भी करते।

विचारणीय बातें

(1) सच्चाई यही है कि पैग़म्बर (सल्ल॰) हज़रत जिबरील (अलैहि॰) के आने पर और उनसे पहली मुलाक़ात में विचलित हो गए थे और यह इस बात का प्रमाण है कि पैग़म्बर (सल्ल॰) पहले से इसकी तैयारी नहीं कर रहे थे। पैग़म्बर (सल्ल॰) को सपने में भी इसका अन्दाज़ा नहीं था। इससे यह बात भी स्पष्ट है कि जिबरील (अलैहि॰) से आप (सल्ल॰) की मुलाक़ात पूरी चेतन अवस्था और जीते-जागते हुई थी। यह सपना नहीं था।

(2) हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) का पैग़म्बर (सल्ल॰) के बेहतरीन आचरण, व्यवहार एवं चरित्र के बारे में गवाही देना इस्लामी इतिहास का एक सुनहरा अध्याय है। किसी व्यक्ति के जीवन की छोटी-से-छोटी बात पर केवल

जीवन साथी की निगाह होती है। एक व्यक्ति की पत्नी उसको उन बेहतरीन शब्दों में दिलासा दे, उससे अधिक उसके व्यक्तित्व की पूर्णता और उसके नेक होने में कोई दूसरा प्रमाण नहीं हो सकता।

(3) जिन लोगों ने पैग़म्बर (सल्ल॰) के आह्वान को स्वीकार किया। वे आप (सल्ल॰) को भली-भाँति जानते थे और यह स्पष्ट करता है कि वे सभी पैग़म्बर (सल्ल॰) के नेक व्यक्तित्व से प्रभावित थे। उन्हें आपकी बात पर पूरा भरोसा और आपकी ईमानदारी पर पूरा विश्वास था। उनको यह भी भरोसा था कि नबी (सल्ल॰) कभी भी धोखा और ग़लत बात की ओर नहीं बुलाएँगे।

(4) सबसे ख़ास कारनामा जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कर दिखाया, वह यह कि इस्लाम उन लोगों के दिलों में दाख़िल हो गया जो इस आह्वान से जुड़े। इस्लाम ने पैग़म्बर (सल्ल॰) के प्यारे साथियों (रज़ि॰) को हिम्मत, हौसला और उच्च चारित्रिक शक्ति प्रदान की।

(5) शुरू-शुरू में वह्य का पूरा ज़ोर आख़िरत (परलोक) के जीवन के सम्बन्ध में था। ऐसा करना ज़रूरी था ताकि आख़िरत की जवाबदेही पर पूर्ण ईमान और यक़ीन हो जाए और उन ईमान लानेवालों को अल्लाह के सामने जवाब देने का निरन्तर एहसास रहे। हिसाब के दिन के विश्वास के बिना एक मज़बूत एवं सर्वश्रेष्ठ चरित्र की आधार-शिला नहीं रखी जा सकती।

1:4 जन-आह्वान

इस्लाम का यह छोटा-सा क़ाफ़िला लगातार आगे बढ़ रहा था और आध्यात्मिक उन्नति कर रहा था। आरम्भ में व्यक्तिगत रूप से दूसरे को सत्यधर्म की ओर बुलाने पर ज़ोर दिया गया था। तीन वर्ष की कोशिशों ने नबी (सल्ल०) को लगभग 40 ऐसे साथियों का साथ दे दिया जिन्होंने सत्यधर्म के लिए अपने आपको पूरी तरह से बदल लिया और वे सभी लोग पूरे मक्का में अच्छे व्यवहार और सुचरित्रता का चलता-फिरता नमूना बन गए।

लेकिन तीन साल समाप्त होते-होते पैग़म्बर (सल्ल०) को आदेश मिला कि खुलकर इस्लाम की ओर आमंत्रित करें और इसका आरम्भ अपने निकट सम्बन्धी परिजनों से करें। क़ुरआन ने कहा—

> "और आप अपने अधिक निकट सम्बन्धियों रिश्तेदारों को डराएँ और मोमिनों में से जो लोग आप की पैरवी करने लगें उनके साथ ससम्मान पेश आएँ। किन्तु यदि वे नाफ़रमानी करें तो उनसे कह दो कि जो कुछ तुम करते हो, मैं उससे बरी हूँ।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-26 शोअरा, आयतें-214 से 216)

पैग़म्बर (सल्ल०) ने अल्लाह के इस आदेश के पालन करने में कोई देर नहीं की और तुरन्त इस आह्वान का आरम्भ कर दिया। सहीह बुख़ारी में अब्दुल्लाह-बिन-अब्बास (रज़ि०) का उल्लेख है—

"जब यह आयत अपने 'रिश्तेदारों को डराओ' अवतरित हुई तो नबी (सल्ल०) सफ़ा की पहाड़ी पर चढ़ गए और आप (सल्ल०) ने बनी-फ़हर, बनी अदी, और क़ुरैश के दूसरे तमाम क़बीलों को आवाज़ देनी शुरू की यहाँ तक कि सब जमा हो गए। जो लोग स्वयं किसी कारण से नहीं आ सकते थे, उन्होंने अपने प्रतिनिधियों को भेज दिया। सब जानना चाहते थे कि आख़िर मामला क्या है? अबू-लहब और क़ुरैश के दूसरे सरदार भी जमा हो गए। तब

नबी (सल्ल॰) ने कहा : 'यदि मैं तुम से कहूँ कि इस पहाड़ी के पीछे दुश्मन घुड़सवारों की एक बड़ी टोली तुम पर हमला करने को तैयार है, क्या तुम मेरी बात पर विश्वास करोगे?' वहाँ मौजूद सब लोगों ने कहा : हाँ, हमने आपसे कभी भी सच के सिवा कुछ नहीं सुना। तब आप (सल्ल॰) ने कहा : 'मैं तो केवल सचेत करनेवाला हूँ और उस दर्दनाक यातना के बारे में होशियार करनेवाला हूँ जो तुम्हारा इन्तिज़ार कर रही है।' अबू-लहब ने यह सुनकर आप (सल्ल॰) से कहा (ईश्वर की पनाह!) : 'तुम बरबाद हो। क्या केवल इसी बात के लिए तुमने हम सबको यहाँ पर बुलाया था।' उस समय ये आयतें (सूरा-111 लहब) अवतरित हुईं–

> "अबू-लहब के दोनों हाथ टूट गए और वह विनष्ट हो गया। न उसके माल ने उसे कोई लाभ दिया और न उसकी कमाई ने। वह ज़रूर भड़कती हुई आग में डाला जाएगा और उसकी पत्नी भी, लगाई-बुराई करनेवाली। उसके गर्दन में मूज की बनी हुई रस्सी होगी।" (हदीस : बुख़ारी-293)

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि॰) फ़रमाते हैं–

> "नबी (सल्ल॰) उठ खड़े हुए। जब क़ुरआन की आयत 'अपने रिश्तेदारों को डराओ' अवतरित हुई, आप (सल्ल॰) ने कहा : "ऐ क़ुरैश के लोगो! या ऐसा ही कुछ आप (सल्ल॰) ने कहा, अपने आपको बचाओ। मैं तुम्हें अल्लाह की यातना से नहीं बचा सकता, यदि तुम उसकी अवज्ञा करते रहे। ऐ अब्बास-बिन-अब्दुल-मुत्तलिब! मैं तुम्हें अल्लाह से नहीं बचा सकता (यदि तुम अल्लाह की अवज्ञा करोगे)। ऐ सफ़िया (चची)! मैं तुमको अल्लाह से सुरक्षित नहीं रख सकता (अगर तुम उसकी अवज्ञा करोगी)। ऐ फ़ातिमा (बेटी)! तुम मेरी जायदाद में से जो चाहो माँग लो, लेकिन मैं तुम्हें अल्लाह की यातना से सुरक्षित नहीं कर सकता (अगर तुम उसकी अवज्ञा करोगी)।" (हदीस : बुख़ारी-294)

अब पैग़म्बर (सल्ल॰) ने सत्य धर्म की ओर लोगों को बुलाने के काम को पूरे उत्साह और खुलेआम करना शुरू कर दिया। आप (सल्ल॰) ने उन सभी

लोगों को सत्यधर्म की ओर बुलाया जिन तक भी आप (सल्ल॰) पहुँच सकते थे। चाहे ये क़बीले क़ुरैश के ख़ानदान हों, या मक्का के आस-पास से गुज़रते हुए व्यापारियों के क़ाफ़िले हों, या मक्का आनेवाले हाजी या आम लोग हों। पैग़म्बर (सल्ल॰) इन लोगों तक पहुँचते और उनको अच्छे अन्दाज़ में ईश्वर के सत्यधर्म की ओर आह्वान करते और उन्हें एकेश्वरवाद (तौहीद) की तरफ़ बुलाते। पैग़म्बर (सल्ल॰) उनको बताते कि झूठे एवं मिथ्या पूज्य-प्रभुओं का दामन छोड़कर एक सत्य एवं यथार्थ ईश्वर (अल्लाह) का दामन थाम लो और उसके समान किसी और को न पूज्य-प्रभु समझो और न किसी की बन्दगी करो।

इसके फलस्वरूप क़ुरैश के सरदारों के जिन्होंने शुरू के तीन सालों में पैग़म्बर (सल्ल॰) की व्यक्तिगत दावत को जानने के उपरान्त इस पर कोई आपत्ति नहीं की थी, कान खड़े होने शुरू हुए। अब उन्होंने भी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और उनके आह्वान (दावत) का विरोध करना शुरू कर दिया।

यह एक सच्चाई है कि क़ुरैश के इस्लाम के विरोध का कारण यह नहीं था कि वे पैग़म्बर (सल्ल॰) के सन्देश को समझ नहीं पाए। वे इस्लाम के आह्वान और उसके नतीजे से पूरी तरह अवगत थे। उनके लिए एकेश्वरवाद और एक परमेश्वर (अल्लाह) की इबादत की धारणा नई न थी। बल्कि उन्हें अल्लाह के अस्तित्व पर पूरा विश्वास था। लेकिन वे केवल अकेले एक परमेश्वर की पूजा करने और दूसरे मिथ्या प्रभुओं की पूजा छोड़ने को तैयार नहीं थे। उन्हें लगता था कि एकेश्वरवाद और एक ईश्वर की बन्दगी की यह सोच मक्का की राजनीतिक एवं सामाजिक अस्तित्व को हिलाकर रख देगी और यही उनके लिए सबसे बड़ी ख़तरे की घंटी थी।

काबा के मुतवल्ली (न्यासी) होने के कारण क़ुरैश को पूरे अरब में एक उच्च स्थान प्राप्त था। काबा में 300 से अधिक मूर्तियां स्थापित थीं। अरब का लगभग हर एक क़बीला उनमें से किसी एक मूर्ति को अपना देवता या देवी मानता था और उनसे अपना सम्बन्ध जोड़ता था। यद्यपि ये दूसरे देवताओं से भी जुड़े हुए थे, लेकिन उनकी एक विशिष्ट देवी या देवता हुआ करता था।

अरब का कोई भी क़बीला क़ुरैश को इसलिए भी नाराज़ करने का साहस नहीं कर सकता था क्योंकि उनके देवी देवता तो क़ुरैश के एक तरह से बंधक थे। वे ख़ाना काबा में थे और काबा क़ुरैश के क़ब्ज़े में था। अब यदि क़ुरैश केवल एक अल्लाह की इबादत और उसकी बन्दगी करने के लिए तैयार हो जाते हैं तो वे उन सारे खुदाओं को न केवल झुठलाएँगे, बल्कि उन देवी-देवताओं के मान-सम्मान को झुठलाकर उन्हें केवल पत्थर का टुकड़ा स्वीकार करेंगे और यह एक ऐसा फ़ैसला होगा जो पूरे अरब में उनकी धाक को समाप्त कर देगा।

क़ुरैश राजनीतिक दृष्टि से भी अरब में मज़बूत समझे जाते थे। यह उनकी धार्मिक श्रेष्ठता ही थी जिसने उनको राजनीतिक स्तर पर मज़बूत बना दिया था और आस-पास के बहुत-से क़बीले जो सत्ता, शक्ति और आर्थिक दृष्टि से क़ुरैश से मज़बूत थे, वे भी क़ुरैश के धार्मिक वर्चस्व को स्वीकार करते थे। अब यदि वे इस्लाम को स्वीकार करते तो न केवल उनकी धार्मिक चौधराहट को नुक़सान पहुँचता बल्कि राजनीतिक वर्चस्व भी समाप्त हो जाता।

इस्लाम की सार्वभौमिक शिक्षाएँ जो मुनष्यों में समानता और ईशपरायणता को कसौटी स्वीकार करने पर बल देती हैं, वे समाज के दबे-कुचले समुदायों को मान-सम्मान प्रदान करा रही थीं और समाज में उनको मनुष्यों होने के आधार पर एक-दूसरे के बराबर ठहरा रही थीं। यह बात क़ुरैश के लिए असहनीय थी। नबी (सल्ल॰) की संगत और उनके प्रशिक्षण ने लोगों में आत्मविश्वास और आत्म-सम्मान कूट-कूट कर भर दिया था। उनको क़ुरआन की शिक्षाओं पर पूरा विश्वास था। क़ुरआन कहता है—

> "ऐ लोगो! निस्सन्देह हमने तुम्हें एक मर्द और औरत से पैदा किया और हमने तुम्हारे ख़ानदान और क़बीले बना दिया, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो, निस्सन्देह अल्लाह के यहाँ तुम में सबसे अधिक श्रेष्ठ एवं माननीय वह है जो तुममें सबसे अधिक ईशपरायण है। निस्सन्देह ईश्वर सर्वज्ञ एवं सबकी ख़बर रखनेवाला है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-49 हुजुरात, आयत-13)

लेकिन ये बातें उन लोगों के लिए असह्य थीं जो समाज के अन्दर ज़ात-पात में विश्वास करते थे और लोगों को तुच्छ और उच्च वर्गों में बाँटते थे। समाज के इस विभाजन पर किसी को न कोई आपत्ति होती थी और न ही आश्चर्य।

काबे पर उनकी चौधराहट की वजह से क़ुरैश को आर्थिक लाभ मिलता था। उन्हें पता था कि यदि वे एकेश्वरवाद को स्वीकार कर लेंगे तो ये सभी लाभ तुरन्त समाप्त हो जाएँगे। उनकी विशिष्ट भूमिका छिन जाएगी और यह उनको किसी भी दशा में स्वीकार न था। वे कैसे इस आर्थिक लाभ और चौधराहट को अपने हाथ से जाने देते?

इन सब कारणों के होते हुए क़ुरैश ने एकेश्वरवाद और मुहम्मद (सल्ल॰) को ईश्वर का संदेष्टा (रसूल) मानने से इनकार कर दिया। न केवल उन्होंने इनकार कर दिया, बल्कि इस्लाम के प्रचार-प्रसार को रोकने के लिए बहुमुखी कूटनीति तैयार की और लोगों को उत्प्रेरित करने, अत्याचार और दुष्प्रचार का सहारा लेकर इस्लाम को जड़ से मिटाने की कोशिश की।

प्रेरित करने की कोशिश

क़ुरैश के लोगों ने नबी (सल्ल॰) को तरह-तरह का लालच देकर इस सत्य की ओर बुलाने के प्रयासों को रोकने की कोशिश की। उन्होंने पैग़म्बर (सल्ल॰) को सरदारी, धन-सम्पत्ति, सुन्दर महिलाओं से विवाह करा देने जैसी लालच देकर उस आह्वान से हटाने की कोशिश की।

ऐसी ही कोशिश में क़ुरैश के सरदारों का एक प्रतिनिधिमण्डल पैग़म्बर (सल्ल॰) के चचा और आपके सरपरस्त (अभिभावक) अबू-तालिब के पास आया और इस बात की कोशिश की कि पैग़म्बर (सल्ल॰) के सिर से अबू-तालिब अपना हाथ हटा लें। जब अबू-तालिब ने नबी (सल्ल॰) को इस सम्बन्ध में बात करने के लिए बुलाया तो नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "ऐ मेरे आदरणीय चचा जान! मैं इस दावत से कदापि बाज़ नहीं आऊँगा चाहे वे मेरे एक हाथ में चाँद और दूसरे हाथ में सूरज ही क्यों न रख दें। या तो ईश्वर (अल्लाह) मुझे सफलता प्रदान करेगा

या मैं इस श्रेष्ठ कार्य को करते-करते अपनी जान दे दूँगा।"

पैग़म्बर (सल्ल॰) की संकल्प से भरपूर बातें सुनकर अबू-तालिब की आँखें भर आईं। वे उनके अपने उद्देश्य के प्रति साहस और निष्ठा से बहुत प्रभावित हुए और अपनी पूरी ज़िन्दगी में कभी भी पैग़म्बर (सल्ल॰) का साथ न छोड़ा।

यह इस तरह की पहली और आख़िरी घटना नहीं है। बाद में भी क़ुरैश ने इस तरह की अनेक कोशिशें कीं। ऐसी ही एक कोशिश में क़ुरैश के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति उतबा-बिन-रबीआ को पैग़म्बर (सल्ल॰) के पास भेजा। उतबा अपनी बुद्धि और विवेक के लिए मशहूर था। उतबा ने अपनी भरपूर कोशिश की कि पैग़म्बर (सल्ल॰) को किसी तरह इस काम से रोक दें लेकिन आप (सल्ल॰) उनकी बातों से थोड़ा भी प्रभावित नहीं हुए। नबी (सल्ल॰) से बात करते हुए उतबा ने कहा : "क़ुरैश और अरब के लोगों को बाँटने की कोशिश मत करो। यदि तुम्हारे इस आह्वान का उद्देश्य धन इकट्ठा करना है तो बता दो। हम तुम्हें इतना धन दे देंगे कि तुम क़ुरैश के सबसे अधिक धनी व्यक्ति बन जाओगे। यदि तुम किसी ख़ूबसूरत और रूपवती स्त्री से शादी के इच्छुक हो तो हम तुम्हारा विवाह अरब की सबसे सुन्दर महिला से करा देंगे। इस आह्वान को छोड़कर जो कुछ भी तुम कहोगे, हम करने को तैयार हैं।"

उत्तर में पैग़म्बर (सल्ल॰) ने क़ुरआन की सूरा "हा-मीम अस-सजदा की निम्नलिखित आयतें उतबा-बिन-रबीआ के सामने पढ़ीं—

> "हा-मीम—यह क़ुरआन अत्यन्त दयालु एवं करुणामय ईश्वर (अल्लाह) की ओर से अवतरित किया गया है। यह ऐसी किताब है, जिसकी आयतें ख़ूब खोल-खोल कर बयान की गई हैं। (यह) अरबी भाषा का क़ुरआन, उन लोगों के लिए जो ज्ञान एवं विवेक रखते हैं, जो शुभसूचना देनेवाला और डराने वाला है। किन्तु उनमें से अधिकांश लोगों ने उससे मुँह मोड़ लिया और वे सुनते नहीं। उन्होंने कहा : जिसकी ओर तुम हमें बुलाते हो, उससे हमारे दिल परदों में है और हमारे कानों में डाट हैं और हमारे और तुम्हारे बीच एक परदा है। अतः तुम (अपना) काम करो, निस्सन्देह हम (अपना) काम करनेवाले हैं। ऐ नबी! कह दीजिए बस मैं तो तुम्हारे जैसा

ही एक बन्दा हूँ। मेरी ओर ईश्वरीय वह्य (प्रकाशना) की जाती है; यह कि तुम्हारा केवल एक ही पूज्य-प्रभु है। अतः उसी की ओर एकाग्रता के साथ ध्यान दो और उसी से क्षमा माँगो और अनेकेश्वरवादियों के लिए विनाश है।

(क़ुरआन, सूरा-41 हा-मीम-सजदा, आयतें-1-6)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) इस तरह उतबा के सामने क़ुरआन की इस सूरा को पढ़कर सुनाते रहे और वह चुप-चाप सुनता रहा। जब नबी (सल्ल॰) इस आयत-13 पर पहुँचे–

"अब अगर ये लोग मुँह मोड़ते हैं तो इनसे कह दो कि मैं तुमको उसी प्रकार एक अचानक टूट पड़नेवाली यातना से डराता हूँ जैसे आद और समूद (जातियों) पर उतरी थीं।"

यह आयत सुनकर उतबा काँपने लगा और नबी (सल्ल॰) से चुप हो जाने का निवेदन किया। उसने कहा : रिश्तेदारी और अल्लाह के लिए चुप हो जाएँ। वह वापस क़ुरैश के सरदारों के पास गया और उनसे कहा : "अल्लाह की क़सम! जो बात मैंने मुहम्मद (सल्ल॰) से सुनी है वह शायरी नहीं। मैंने इससे पहले ऐसा प्रवचन कभी नहीं सुना। मैं तुमसे निवेदन करता हूँ कि तुम मुहम्मद (सल्ल॰) को उनके हाल पर छोड़ दो। यदि अरब के दूसरे क़बीले इनको पराजित कर देते हैं तो तुम्हारा काम आसान हो जाएगा और यदि मुहम्मद (सल्ल॰) सफल हो जाते हैं तो तुम्हारे मान-सम्मान में और बढ़ोत्तरी होगी, क्योंकि वे तुम में से ही हैं।

ज़ुल्म व अत्याचार

जब लालच देने और समझाने-बुझाने से काम नहीं चला और क़ुरैश अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को सत्यधर्म के प्रचार-प्रसार से नहीं रोक सके तो उन्होंने ज़ुल्म व अत्याचार करके पैग़म्बर (सल्ल॰) और उनके साथियों (सहाबियों) को इससे रोकने की कोशिश की। उन सहाबियों को जो कमज़ोर परिवारों से सम्बन्ध रखते थे और विशेष रूप से ग़ुलामों को अत्यन्त कष्टदायक शारीरिक पीड़ा देनी शुरू कीं। सामाजिक और आर्थिक रूप से मज़बूत और प्रतिष्ठित

मुसलमानों का बहिष्कार करके उन पर दबाव बनाने का प्रयास किया गया।

फिर इतने पर ही नहीं रुके। आर्थिक और सामाजिक रूप से मज़बूत लोगों को भी शारीरिक कष्ट देना और हिंसा का निशाना बनाने की कोशिश की। हज़रत बिलाल (रज़ि॰), हज़रत यासिर (रज़ि॰), उनकी पत्नी सुमैया (रज़ि॰), बेटा अम्मार (रज़ि॰) और ख़ब्बाब (रज़ि॰) उन लोगों में से थे जिनको कल्पना से भी अधिक शारीरिक कष्ट सहना पड़ा। महिलाओं पर भी इन ज़ालिमों को तरस नहीं आया। सुमैया, ज़न्नीरा, नहदिया और उम्मे-अबीर (रज़ि॰) पर अत्याचार के वह पहाड़ ढाए गए कि शैतान भी शर्मा जाए। सुमैया (रज़ि॰) को तो अबू-जहल ने इतना मारा कि वे शहीद हो गईं। उनके पति यासिर (रज़ि॰) ने भी अपनी जान उन ज़ालिमों के ज़ुल्मो-सितम के हवाले कर दी और शहादत पाई।

यह अत्याचार केवल ग़ुलामों तक ही सीमित नहीं था। आज़ाद और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के धनवान साथी, जिनमें उसमान-बिन-अफ़्फ़ान और मुसअब-बिन-उमैर (रज़ि॰) भी सम्मिलित हैं, को भी आत्यान्तिक शारीरिक हिंसा का शिकार बनाया गया। लेकिन इन तमाम कोशिशों के उपरान्त वे अपने घटिया उद्देश्य में असफल रहे। वे पैग़म्बर (सल्ल॰) के साथियों (रज़ि॰) को इस सत्यधर्म और एकेश्वरवाद से नहीं फेर सके और न ही दूसरों को इस्लाम में दाख़िल होने से रोक सके।

नबी (सल्ल॰) भी हमेशा उनके संताप के शिकार रहे। वे पैग़म्बर (सल्ल॰) को पत्थरों से मारते, आपके रास्ते में काँटे बिछाते, आप (सल्ल॰) पर गन्दगी डालने की कोशिश करते और आप (सल्ल॰) के घर तक में कीचड़ और गन्दगी फेंक दिया करते। आप (सल्ल॰) के घर पर पत्थर फेंकना उनका सबसे बड़ा मनोरंजन था। इस काम में सबसे आगे अबू-लहब और उसकी पत्नी थी।

अबू-लहब ने वैसे तो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को कई तरह से कष्ट पहुँचाए और मानसिक एवं शारीरिक यातनाएँ दीं। लेकिन सबसे घृणित एवं कुत्सित काम जो उसने किया वह यह कि उसने अपने बेटों उतबा और उतैबा को मजबूर कर दिया कि वे अपनी पत्नियों रुक़ैया (रज़ि॰) और

उम्मे-कुलसूम (रज़ि॰) को तलाक़ दे दें। ये दोनों नबी (सल्ल॰) की बेटियाँ थीं और आप (सल्ल॰) के पैग़म्बरी की उद्घोषणा से पहले ही इन दोनों का विवाह अबू-लहब के बेटों से हो गया था। लेकिन इन तमाम परेशानियों, हिंसा एवं मानसिक प्रताड़नाओं के बावजूद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) तथा उनके साथी सत्यधर्म की ओर लोगों को बुलाने के काम को बिना रुके करते रहे। आप (सल्ल॰) के साथियों ने बड़े धैर्य व संयम का प्रमाण दिया।

दुष्प्रचार

लालच और ज़ुल्म व अत्याचार के अलावा क़ुरैश ने नबी (सल्ल॰) और आप (सल्ल॰) के साथियों पर एक और ख़तरनाक षड्यन्त्र का प्रयोग किया और वह था दुष्प्रचार (Propaganda)। इस मुहिम में निम्नलिखित चीज़ें सम्मिलित थीं–

(1) नबी (सल्ल॰) के चरित्र पर हमला।

(2) इस्लाम की शिक्षाओं को ग़लत तरीक़े से पेश करना और उसको बदनाम करना।

(3) मज़ाक़ उड़ाना।

(4) आम लोगों और मक्का में बाहर से आने वालों को किसी भी स्थिति में नबी (सल्ल॰) से मिलने से रोकना, क़ुरआन सुनने से रोकना और हज के दिनों में हाजियों को आप (सल्ल॰) से मिलने से रोकना।

जहाँ तक चरित्र पर हमला करने की बात है, उन लोगों ने नबी (सल्ल॰) पर और आप (सल्ल॰) के चरित्र पर अनेकों प्रकार के झूठे आरोप लगाए। नबी (सल्ल॰) के उच्च चरित्र एवं श्रेष्ठ सदाचार को जानते हुए भी उन लोगों ने आप (सल्ल॰) के व्यक्तित्व पर तरह-तरह से हमले किए। आप (सल्ल॰) के ख़िलाफ़ अफ़वाहें फैलाने की कोशिशें कीं और आपको कवि, काहिन, जादूगर और न जाने क्या-क्या कहकर दुष्प्रचार किया। मक्का में किसी भी नए व्यक्ति के आते ही ये बातें उसके कान में इस तरह भर जातीं कि वह पैग़म्बर (सल्ल॰) से मिलने से पहले ही उनसे नफ़रत करने लगता। लेकिन उनमें से

कुछ सच्चाई जानने के लिए उठ खड़े होते और जब पैग़म्बर (सल्ल॰) के पास आते, क़ुरआन सुनते तो ईश्वरीय सन्देश और तौहीद (एकेश्वरवाद) से प्रभावित हुए बिना न रहते। आप (सल्ल॰) के सम्बन्ध में जो कुछ भी सुने हुए होते वह सब झूठा पाते, तो इसका उलटा असर यह होता कि वे आपके प्रशंसक हो जाते।

उनमें से बहुत-से लोग तो इस्लाम क़बूल कर लेते, जबकि बहुत-से लोग जो इस्लाम क़बूल नहीं करते वे भी इस्लाम के सन्देश से अवगत तो हो ही जाते। ऐसी ही एक घटना ज़म्माद अल-अज़्दी (रज़ि॰) की है। मक्का के एक सफ़र के दौरान क़ुरैश के सरदारों ने उन्हें सुझाव दिया कि वे मुहम्मद (सल्ल॰) से दूर रहें। उन्होंने यह कहकर ज़म्माद (रज़ि॰) को दूर रखने की कोशिश की कि (ईश्वर बचाए) आप (सल्ल॰) पागल हैं। ज़म्माद अल-अज़्दी (रज़ि॰) अपने क़बीले के सरदार और एक माहिर हकीम थे। उन्होंने फ़ैसला किया कि वे मुहम्मद (सल्ल॰) से मुलाक़ात करेंगे और उनका इलाज करने की कोशिश करेंगे।

नबी (सल्ल॰) से मिलने के बाद ज़म्माद (रज़ि॰) ने न केवल इस्लाम क़बूल कर लिया, बल्कि इसका वादा भी किया कि वे सार्वभौमिक सत्यधर्म और एकेश्वरवाद के इस पैग़ाम का अपने क़बीले और ख़ानदान के लोगों में प्रचार-प्रसार करेंगे।

नबी (सल्ल॰) के विरोधी आप (सल्ल॰) और आपके साथियों (सहाबियों) पर ज़बानी हमले करते, उनका मज़ाक़ उड़ाते और उनके ख़िलाफ़ अफ़वाहें फैलाते। छोटी-छोटी बातों पर वे पैग़म्बर (सल्ल॰) पर और उस सन्देश पर हमला करते जो नबी (सल्ल॰) लेकर आए थे। ऐसे अवसरों पर अल्लाह तआला ने बहुत-सी ऐसी आयतें अवतरित कीं जिनमें अल्लाह तआला ने आप (सल्ल॰) का साहस बढ़ाया और आप (सल्ल॰) और आप (सल्ल॰) के साथियों को हौसला दिया। क़ुरआन कहता है—

> "और (ऐ नबी) आप से पहले बहुत-से रसूलों का मज़ाक़ उड़ाया जा चुका है, किन्तु उन मज़ाक़ उड़ानेवालों पर अन्ततः वही सच्चाई

प्रभावी होकर रही, जिसका वे मज़ाक़ उड़ाते थे।”

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-10)

“विनाश है हर उस झूठे अपकर्म करनेवाले व्यक्ति के लिए; जिसके सामने ईश्वर की आयतें पढ़ी जाती हैं और वह उनको सुनता है, फिर पूरे अभिमान के साथ अपने अधर्म पर इस प्रकार अड़ा रहता है कि मानो उसने उनको सुना ही नहीं। ऐसे व्यक्ति को अत्यन्त पीड़ादायक नरक की सूचना दे दो। हमारी आयतों में से कोई बात जब उसके ज्ञान में आती है तो वह उनका मज़ाक़ बना लेता है। इस प्रकार के सभी लोगों के लिए अपमानजनक यातना है।”

(क़ुरआन, सूरा-45 जासिया, आयतें-7 से 9)

विचारणीय बातें

(1) यह बात आश्चर्यजनक और रुचिकर है कि सत्य के विरोधियों का अन्दाज़ और उनकी इस्लाम के विरुद्ध प्रतिक्रियाएँ पूरे इतिहास में अब तक लगभग एक समान ही रहीं हैं। मानव-इतिहास में इस कार्यशैली में अब तक कोई बदलाव नहीं आया है।

(2) साथ ही यह बात भी बहुत महत्वपूर्ण है कि उन दुष्ट तत्वों के तमाम षड्यंत्रों और कोशिशों के उपरांत हमेशा उनको विफलता का सामना करना पड़ा है। न केवल उनकी योजनाएँ धरी-की-धरी रह गईं, बल्कि उल्टा मुसीबत उन्हीं के गले पड़ी। लेकिन इस ऐतिहासिक असफलता के उपरान्त न तो उनकी दुश्मनी में कोई अन्तर आया है और न ही उनकी दुष्टता एवं उपद्रव में।

1:5 हबशा की ओर हिजरत (पलायन)

इस्लाम तेज़ी से मक्का और आस-पास के क़बीलों में फैल रहा था। इस्लाम के इस बढ़ते प्रभाव ने क़ुरैश के सरदारों की रातों की नींद और दिन का चैन छीन लिया था। इस्लाम की सफलता उनके सीनों पर साँप की तरह लोट रही थी। यही कारण था कि जैसे-जैसे इस्लाम का आह्वान लोगों में लोकप्रियता प्राप्त कर रहा था, वैसे-वैसे क़ुरैश के अत्याचार में बढ़ोत्तरी भी होती जा रही थी। जब ये अत्याचार अपनी सीमाओं को लाँघ गया तो अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) के साथियों (सहाबियों) का एक क़ाफ़िला, जिसमें ग्यारह पुरुष और चार महिलाएँ शामिल थीं, मक्का से हिजरत (पलायन) करके हबशा चला गया। यह घटना नुबूवत के पाँचवें साल में घटी।

नबी (सल्ल०) का यह अनुमान था कि हबशा का ईसाई बादशाह नजाशी एक रहमदिल बादशाह है और यह कि मुसलमान उसके देश में अमन से रहेंगे।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के साथियों का यह क़ाफ़िला चुप-चाप मक्का से चला और सकुशल हबशा पहुँच गया। जब तक क़ुरैश को यह सूचना मिलती और वे उनको रोकने की कोशिश करते, हिजरत करनेवाला क़ाफ़िला नावों में सवार होकर हबशा की ओर रवाना हो चुका था।

अभी ये लोग मुश्किल से हबशा पहुँचे ही थे कि एक अफ़वाह फैल गई कि क़ुरैश का पूरा क़बीला मुसलमान हो गया।

घटना यह घटी कि एक दिन दैनिक रीति के मुताबिक़ क़ुरैश के कई सरदार काबा के पास बैठे हुए थे कि नबी (सल्ल०) वहाँ आ गए और क़ुरआन की सूरा नज्म का ऊँचे स्वर में पाठ करना शुरू कर दिया। इनमें बहुत से लोगों ने इससे पहले क़ुरआन का पाठ कभी नहीं सुना था। इन्होंने केवल दूसरों की कही बातों को सुनकर इस्लाम से नफ़रत और क़ुरआन के प्रति

उपेक्षा दिखानी शुरू कर दी थी।

परिष्कृत, बोधगम्य एवं प्रभावकारी भाषाशैली तथा अनेकेश्वरवाद एवं मूर्तिपूजा के प्रति उदासीनता ने सुननेवाले समस्त क़ुरैश के सरदारों पर ज़बरदस्त प्रभाव डाला। इस्लाम और नबी (सल्ल॰) के कट्टर-से-कट्टर दुश्मन भी क़ुरआन की विशिष्टता और शैली से प्रभावित हुए बिना न रह सके और जब नबी (सल्ल॰) ने सजदावाली आयत को पढ़ा तो वे सब भी नबी (सल्ल॰) के साथ सजदे में गिर गए। केवल दो व्यक्तियों ने सजदा नहीं किया। उनमें से एक उमैया-बिन-ख़लफ़ ने सजदा करने की जगह ज़मीन से मिट्टी उठाकर माथे पर रगड़ ली और कहा कि यही पर्याप्त है। दूसरा व्यक्ति जिसने उस वक़्त सजदा नहीं किया वह मुत्तलिब-बिन-अबी-वदाआ था। लेकिन बाद में वे नबी (सल्ल॰) पर ईमान ले आए।

उस समय तो वे लोग सजदे में गिर गए, लेकिन जब उस दशा से बाहर निकले और बाद में दूसरे लोगों को उस घटना का पता चला तो उन क़ुरैशी सरदारों का ख़ूब मज़ाक़ उड़ाया गया। जब यह मज़ाक़ किसी तरह कम नहीं हुआ तो उन लोगों ने एक झूठी कहानी गढ़ ली। उन लोगों ने कहना शुरू किया कि सजदे में गिरने की वजह यह थी कि मुहम्मद (सल्ल॰) ने उनके देवी-देवताओं के गुणगान में कुछ ऐसे सुन्दर और प्रभावशाली शब्द कहे कि उनको यह करना पड़ा। सजदे में पड़ जाने का यही कारण था।

नुबूवत के पाँचवे वर्ष में रमज़ान के महीने में यह घटना घटित हुई थी और क़ुरैश के ईमान लाने की अफ़वाहें कुछ ही दिनों में हबशा हिजरत (पलायन) करनेवालों तक पहुँच गईं। अगले ही महीने यानी शव्वाल के महीने में सभी हिजरत करनेवाले मक्का वापस लौट आए।

जब ये लोग मक्का के क़रीब पहुँचे तब उन लोगों को पता चला कि यह तो केवल अफ़वाह थी। सच्चाई से इसका दूर-दूर तक कोई लेना-देना नहीं था। इसलिए कुछ लोगों ने हबशा लौट जाने का साहस दिखाया, शेष लोग किसी-न-किसी क़ुरैश सरदार की शरण लेकर मक्का में दाख़िल हो गए।

इस घटना के बाद क़ुरैश के सरदारों को इतना अधिक अपमान का

सामना करना पड़ा कि उन्होंने प्रतिक्रिया में ज़ुल्म व अत्याचार की सारी सीमाएँ लाँघ डालीं। हबशा की हिजरत से परेशान क़ुरैश के सरदारों ने मुसलमानों को बड़ी कठोरता के साथ उत्पीड़न का निशाना बनाना शुरू कर दिया। इस क्रूरता और हिंसा ने लोगों को फिर मजबूर किया कि वे नबी (सल्ल॰) से हिजरत की अनुमति माँगें। नबी (सल्ल॰) ने दोबारा लोगों को हिजरत की अनुमति दे दी।

इस बार काफ़ी बड़ी संख्या में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के साथियों (सहाबा रज़ि॰) ने हिजरत का फ़ैसला किया। 82 मर्द और 18 औरतों के क़ाफ़िले ने दोबारा हबशा की ओर हिजरत की। इस बार क़ुरैश के सरदार पूरी तरह तैयार थे कि इस हिजरत को असफल बना दें। लेकिन फिर भी मुसलमान किसी-न-किसी तरह बच-बचा कर हबशा पहुँचने में सफल हो गए।

इस असफलता ने क़ुरैश को बुरी तरह हिलाकर रख दिया। लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी और एक प्रतिनिधिमंडल को नजाशी के दरबार में भेजा। उनके दो सर्वश्रेष्ठ प्रवक्ता अम्र-बिन-अल-आस और अब्दुल्लाह-बिन-रबीआ क़ुरैश की ओर से प्रतिनिधित्व कर रहे थे। उन लोगों का उद्देश्य नजाशी से यह माँग करना था कि मक्का के उन बाग़ियों को वापस मक्का भेज दिया जाए।

पहले तो ये लोग बादशाह के दरबारियों और उसके निकटवर्ती लोगों से मिले। उनको क़ीमती तोहफ़े भेंट किए और उन्हें इस बात के लिए तैयार किया कि नजाशी के सामने उनकी इस माँग का समर्थन करें। जब नजाशी के दरबारी उनके समर्थन के लिए तैयार हो गए तो अम्र-बिन-अल-आस और अब्दुल्लाह-बिन-रबीआ नजाशी के समक्ष उपस्थित हुए और मुसलमान शरणार्थियों को उनके हवाले करने का निवेदन किया। दरबार में उपस्थित ईसाई धर्म-गुरुओं ने क़ुरैश के प्रतिनिधिमण्डल का समर्थन किया।

लेकिन नजाशी ने साफ़-साफ़ कह दिया कि वह उस समय तक कोई फ़ैसला नहीं करेगा जब तक कि शरण लेनेवालों की ज़बान से उनकी बात न सुन ले कि वास्तव में सच्चाई क्या है? जब मुसलमानों को दरबार में बुलाया गया तो हज़रत जाफ़र-बिन-अबी-तालिब (रज़ि॰) जो कि नबी (सल्ल॰) के

चचेरे भाई थे, मुसलमानों का प्रतिनिधत्व करते हुए बड़े ही ज़ोरदार अन्दाज़ में न केवल मुसलमानों के पक्ष को सामने रखा, बल्कि बादशाह के सामने बहुत ही अच्छे अन्दाज़ में सत्यधर्म का आह्वान किया। उन्होंने कहा–

"हे राजन! हम जाहिल और गुमराह (भटके हुए) थे, बुतों की पूजा करते थे, मुरदार खाते थे। नाना प्रकार के कुकर्मों में संलिप्त थे। न तो सगे-सम्बन्धियों का ख़याल रखते थे, न पड़ोसियों का हक़ अदा करते थे। हम में से जो बलशाली था वह निर्बल पर अत्याचार करता और हर प्रकार से उन्हें दबाता। हमारी इस दुखद परिस्थिति को देखते हुए अल्लाह ने हम में से ही एक नबी भेजा। जिसके उच्च आचरण, शालीनता, सच्चाई, अमानतदारी, ईमानदारी और सदाचार को हम सब जानते थे। उसका जीवन एक खुली पवित्र किताब की तरह हमारे सामने था। उसने हमें एक ईश्वर की प्रार्थना की ओर बुलाया। हम से कहा कि हम बुतों की पूजा न करें। अनेकेश्वरवाद और अनेकेश्वरवादी परम्पराओं का त्याग कर दें। उसने हमको सच बोलना सिखाया। वादा निभाने को प्रेरित किया। रिश्तेदारों को मान-सम्मान देने का आदेश दिया और पड़ोसियों का ख़याल रखने को कहा। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हमको नेकी का आदेश दिया, बुरी बातों और गन्दे कामों से रोका। उसने हमें नमाज़ (ईश-प्रार्थना) का हुक्म दिया, ज़कात (अनिवार्य दान) अदा करने को कहा और ज़ुल्म व अत्याचार और हत्या से बचने का आदेश दिया। उसने हमें व्यभिचार, गन्दे काम, झूठ बोलने, अनाथों का माल हड़पने और दूसरों पर झूठे दोष लगाने से मना किया।

इस रसूल ने हमें क़ुरआन सिखाया, जब हम उसपर और उसकी शिक्षाओं पर ईमान ले आए तो उसके बदले में हमारे क़बीले और शहर के लोगों ने हम पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। उन्होंने कोशिश की हम उस आसमानी धर्म और उसकी शिक्षाओं को त्याग दें। बुतों की पूजा और अनेकेश्वरवाद में दोबारा लौट जाएँ। जब उन लोगों के अत्याचार हद से आगे बढ़ गए तब हमने आपके देश में शरण चाही और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की अनुमति से आपके देश में आ गए हैं।"

नजाशी ने उनको आदेश दिया कि क़ुरआन की कुछ आयतों का पाठ

करें। हज़रत जाफ़र तय्यार (रज़ि॰) ने सूरा-19 मरयम की शुरू की कुछ आयतों का पाठ किया। इन आयतों में हज़रत ईसा (अलैहि॰) के चमत्कारिक जन्म और हज़रत मरयम (अलैहि॰) के उच्च-चरित्र का उल्लेख है। क़ुरआन की इन आयतों ने न केवल नजाशी, बल्कि ईसाई धर्म-गुरुओं को भी झिंझोड़कर रख दिया। कोई भी इससे प्रभावित हुए बिना न रह सका। नजाशी ने कहा : इस धर्म में और वे शिक्षाएँ जो हज़रत ईसा (अलैहि॰) लाए थे उसमें कोई अन्तर नहीं है। दोनों एक ही चिराग़ की किरणें हैं।

नजाशी इस्लाम की सच्चाई और यथार्थता से पूरी तरह प्रभावित हो गया। उसने न केवल मुहाजिरीन (शरणार्थियों) का स्वागत किया, बल्कि क़ुरैश के सारे तोहफ़े वापस कर दिए और उनके संवादकों को ख़ाली हाथ लौटा दिया।

हमज़ा (रज़ि॰) और उमर (रज़ि॰) का इस्लाम क़बूल करना

इस असफलता से झुंझलाकर क़ुरैश ने मुस्लिमों को तकलीफ़ पहुँचाने का क्षेत्र और अधिक विस्तृत कर दिया। नबी (सल्ल॰) पर भी वे स्वतंत्र होकर हमले करने लगे और इसमें तीव्रता आ गई। उन्होंने इसकी भी कोशिश शुरू कर दी कि किसी तरह नबी (सल्ल॰) का भी (ईश्वर न करे) काम तमाम कर दिया जाए। पैग़म्बर (सल्ल॰) का जीवन-चरित्र लिखनेवालों ने विस्तार के साथ इन घटनाओं का उल्लेख किया है जब क़ुरैश के सरदारों ने नबी (सल्ल॰) को शारीरिक कष्ट देना शुरू किया। ऐसी एक घटना का उल्लेख मिलता है जिसमें अबू-जहल ने नबी (सल्ल॰) के सिर पर पत्थर फेंक कर मारा और नबी (सल्ल॰) ख़ून से तर हो गए।

आप (सल्ल॰) के सबसे छोटे चचा हमज़ा (रज़ि॰) जो आप (सल्ल॰) की उम्र के ही थे, क़ुरैश के कोटि के बहादुर लोगों में गिने जाते थे। जोशीले और शिकार के रसिया थे। अब तक हमज़ा (रज़ि॰) क़ुरैश और मुसलमानों के बीच चल रहे विवाद से बिलकुल अलग-थलग थे। आम तौर पर जानवरों के शिकार के लिए जंगलों और पहाड़ों में घूमते रहते थे।

जिस दिन यह घटना घटित हुई उस दिन हमज़ा (रज़ि॰) शिकार से

वापस आ रहे थे तो रास्ते में एक महिला ने उन्हें बताया कि किस तरह अबू-जहल ने उनके भतीजे मुहम्मद (सल्ल॰) को पत्थर मार कर ज़ख़्मी कर दिया है। हमज़ा (रज़ि॰) घर का रास्ता छोड़कर अबू-जहल की खोज में निकल खड़े हुए। काबा के पास उन्होंने अबू-जहल को पकड़ लिया और उसके सिर को बुरी तरह ज़ख़्मी कर दिया और कहा—

> "तुम मुहम्मद (सल्ल॰) को परेशान करते हो और उसपर ज़ुल्म करते हो। मैं ऐलान करता हूँ कि मैंने मुहम्मद (सल्ल॰) के मज़हब को स्वीकार कर लिया है।"

यह अबू-जहल की बहुत बड़ी बेइज़्ज़ती थी। अबू-जहल के चेले-चपाटे उसकी सहायता के लिए दौड़े, लेकिन अबू-जहल ने उनको यह कहते हुए रोक दिया कि वास्तव में उसने मुहम्मद (सल्ल॰) के साथ ज़्यादती की थी।

यह घटना नुबूवत के छठे वर्ष में ज़िल-हिज्जा के महीने की है। हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) के इस्लाम में आने से मुसलमानों को बहुत बल मिला। यद्यपि हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) केवल भावनाओं में बहकर इस्लाम में दाख़िल हुए थे, लेकिन शीघ्र ही वे इस्लाम और उसकी शिक्षाओं से प्रभावित होकर पूरे तौर पर इस्लाम का आदर्श बन गए।

एक दूसरी बड़ी घटना जो लगभग उसी समय की है, वह है हज़रत उमर (रज़ि॰) का इस्लाम को स्वीकार करना। उमर (रज़ि॰) क़ुरैश के मशहूर फ़ौजी सरदार (यौद्धा) थे और युद्ध-कौशल के लिए जाने जाते थे। उनके बारे में मशहूर था कि जिस बात को वे सच मान लेते उसपर जम जाते। वे अपने बाप-दादा के धर्म और उनके तौर-तरीक़ों से पूरी तरह संतुष्ट थे। यही कारण था कि वे अपने धर्म के लिए मर मिटने के लिए सदैव तैयार रहते और इस्लाम के कट्टर दुश्मन थे।

एक दिन वह नंगी तलवार लेकर यह सोचकर घर से निकले कि आज मुहम्मद (सल्ल॰) का (ईश्वर न करे) अन्त कर देंगे। रास्ते ही में उनकी भेंट एक पुराने जान-पहचान वाले व्यक्ति से हुई, जिनको इतिहासकार अब्दुल्लाह-बिन-नईम के नाम से याद करते हैं। इतिहासकार लिखते हैं कि अब्दुल्लाह-बिन-नईम

उस समय तक मुसलमान हो चुके थे। जब अब्दुल्लाह-बिन-नईम ने उमर (रज़ि॰) को ग़ुस्से में नंगी तलवार लिए जाते हुए देखा तो पूछा कि कहाँ का इरादा है। जब उमर (रज़ि॰) ने उन्हें अपना लक्ष्य बताया तो उन्होंने कहा—

"पहले अपने घर की तो ख़बर लो! क्योंकि तुम्हारी बहन और बहनोई दोनों इस्लाम स्वीकर कर चुके हैं।"

यह सुनना था कि उमर (रज़ि॰) का ग़ुस्सा और अधिक भड़क उठा और वे सीधे अपनी बहन के घर पहुँचे। उस समय बहन के घर पर हज़रत ख़ब्बाब-बिन-अरत्त (रज़ि॰) क़ुरआन की कुछ आयतों का पाठ कर रहे थे। ये आयतें काग़ज़ के एक टुकड़े पर लिखी हुई थीं। जब उनको हज़रत उमर (रज़ि॰) के आने की आहट मिली तो हज़रत ख़ब्बाब-बिन-अरत्त (रज़ि॰) को घर में कहीं छुपा दिया। लेकिन उस समय तक बहुत देर हो चुकी थी और उमर (रज़ि॰) के कानों में क़ुरआन के पढ़ने की आवाज़ पहुँच चुकी थी। घर में घुसते ही उमर (रज़ि॰) ने बहन फ़ातिमा (रज़ि॰) और बहनोई सईद-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) से पूछा कि वे क्या पढ़ रहे थे। पहले तो उन्होंने अनजान बनने की कोशिश की, लेकिन जब उमर (रज़ि॰) ने बार-बार पूछा तो दोनों ने अपने इस्लाम में प्रवेश करने को स्वीकार कर लिया।

यह सुनना था कि उमर (रज़ि॰) का ग़ुस्सा सातवें आसमान को छूने लगा और उमर (रज़ि॰) ने अपने बहनोई सईद-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) पर हमला कर दिया। जब बहन अपने पति को बचाने आई तो उमर (रज़ि॰) ने उन्हें भी नहीं छोड़ा और बुरी तरह ज़ख़्मी कर दिया। उनके माथे पर चोट लगी और ख़ून बहने लगा। बहन को ज़ख़्मी देखकर उमर (रज़ि॰) का ग़ुस्सा कुछ कम हुआ। वे कुछ नर्म पड़े और उन्होंने उस लेख को देखने की बात कही, जिसकी वे लोग तिलावत (पाठ) कर रहे थे। उन्होंने कहा : "तुम उसको नहाए बिना हाथ नहीं लगा सकते।"

जब नहा-धोकर उमर (रज़ि॰) ने उसे पढ़ना शुरू किया तो उनका दिल पिघलने लगा। उस लेख में सूरा-20 ता-हा की आयतें लिखी हुई थीं। हज़रत उमर (रज़ि॰) उन आयतों से इतने प्रभावित हुए कि उनको इस्लाम के सत्य

होने का पक्का यक़ीन हो गया। उमर (रज़ि॰) में यह स्पष्ट परिवर्तन देखकर ख़ब्बाब-बिन-अरत्त (रज़ि॰) भी बाहर निकल आए और उमर (रज़ि॰) को बताया कि किस तरह अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उमर-बिन-ख़त्ताब (रज़ि॰) और उमर-बिन-हश्शाम (यानी अबू-जहल) में से किसी एक के इस्लाम क़बूल करने की दुआ की थी। उन्होंने कहा कि अल्लाह ने नबी (सल्ल॰) की दुआ क़बूल कर ली और उमर-बिन-ख़त्ताब (रज़ि॰) को सत्य को स्वीकार करने का सौभाग्य प्रदान किया।

हज़रत उमर (रज़ि॰) बहन के घर से सीधे अरक़म (रज़ि॰) के घर पर पहुँचे, जहाँ नबी (सल्ल॰) अपने साथियों के साथ बैठे हुए थे। उमर (रज़ि॰) सत्य के आह्वान को स्वीकार करने और उसकी उद्घोषणा करने वहाँ आए थे। लेकिन उनको इसका एहसास नहीं था कि उनके हाथ में अब तक एक नंगी तलवार है। जब उमर (रज़ि॰) ने दरवाज़ा खटखटाया तो एक सहाबी द्वार खोलने के लिए द्वार पर आए, लेकिन बिना दरवाज़ा खोले भयभीत अवस्था में वापस आ गए और लोगों को बताया कि उमर (रज़ि॰) नंगी तलवार लिए द्वार पर खड़े हैं। हज़रत हमज़ा (रज़ि॰), जो उस समय वहाँ मौजूद थे, उन्होंने कहा : “यदि दोस्त बनकर आया है तो उसका स्वागत है, अन्यथा उसी की तलवार से उसकी ख़बर ले लूँगा।”

जब उमर (रज़ि॰) अन्दर आए तो नबी (सल्ल॰) ने पूछा : “कहो! कैसे आना हुआ?” जिस समय हज़रत उमर (रज़ि॰) ने इस्लाम स्वीकार करने की इच्छा व्यक्त की तो वहाँ मौजूद सभी लोग ख़ुशी से झूम उठे और लोगों ने इस ज़ोर से ‘अल्लाहु अकबर’ का नारा बुलन्द किया कि उसकी आवाज़ काबा तक सुनाई दी।

हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) और हज़रत उमर (रज़ि॰) के इस्लाम स्वीकार करने से मुसलमानों को बहुत बल मिला। क़ुरैश की हठधर्मिता की बुनियाद एक-एक करके टूट रही थी। इस्लाम दिन-प्रति-दिन एक शक्ति बनकर उभर रहा था। लेकिन क़ुरैश अब भी इस सच्चाई को स्वीकार करने को तैयार नहीं थे। उनकी नाकामियों और इस्लाम की लगातार सफलताओं ने न केवल उनकी हठधर्मिता में बढ़ोत्तरी की, बल्कि निराशा, पराजय और वंचित होते

जाने के एहसास ने क़ुरैश के सरदारों की कठोरता में और अधिक झुँझलाहट भर दी। अन्ततः उन्होंने बनू-हाशिम के बहिष्कार का फ़ैसला किया। बनू-हाशिम नबी (सल्ल॰) का क़बीला था, जिसने अब तक पूरी तरह पैग़म्बर (सल्ल॰) का सहयोग और सहायता की थी। आप (सल्ल॰) के चचा अबू-तालिब बनू-हाशिम के सरदार थे और इस कारण से भी क़बीला बनू-हाशिम आप (सल्ल॰) के समर्थन में लगा हुआ था।

मक्का के बड़े क़बीले और क़ुरैश का नेतृत्व करनेवाले व्यक्तियों ने आपस में एक समझौता किया। बनू-हाशिम के पूर्ण आर्थिक बहिष्कार एवं प्रतिबंध का फ़ैसला लिया गया। इस समझौते का उद्देश्य बनू-हाशिम की आर्थिक रूप से ईंट-से-ईंट बजा देना था। उन्होंने तय किया कि बनू-हाशिम के आवासीय क्षेत्र में किसी भी प्रकार से खाने-पीने की वस्तुएँ नहीं पहुँचने दी जाएँगी। उनसे क्रय-विक्रय को भी उस समय तक पूर्ण रूप से बन्द रखा जाएगा जब तक कि वे नबी (सल्ल॰) के समर्थन से अलग न हो जाएँ और नबी (सल्ल॰) को क़ुरैश के दया व अनुग्रह पर न छोड़ दें। बनू-हाशिम 'शिअब-ए-अबी तालिब' नामक घाटी में बन्दी होकर रह जाने पर विवश हो गए। यह आर्थिक बहिष्कार नबी होने की उद्घोषणा के सातवें वर्ष, (अरबी महीना) मुहर्रम में आरम्भ हुआ।

इस आर्थिक और सामाजिक बहिष्कार ने बनू-हाशिम की कमर तोड़ दी। उनको ऐसे असाधारण संकटों का सामना करना पड़ा जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। पूरा-का-पूरा क़बीला इस पूर्ण बहिष्कार से प्रभावित हुआ। बच्चे, बूढ़े और नौजवान सबको भुखमरी, तकलीफ़ों, बीमारियों और आर्थिक संकट का शिकार होना पड़ा। कई लोगों की तो इस निरंतर भूखा रहने के कारण जान भी चली गई। किन्तु इन समस्त संकटों का सामना करने के उपरान्त भी बून-हाशिम, जिनकी बहुसंख्या, जिसमें बनू-तालिब भी सम्मिलित थे, अब तक इस्लाम की परिधि से बाहर थी, वह पैग़म्बर (सल्ल॰) के समर्थन एवं सहयोग में पूरी तरह कंधे-से-कंधा मिलाकर खड़ी रही। अन्ततः तीन वर्ष की भारी परीक्षा के बाद कुछ सुहृदय लोगों के कारण इस बहिष्कार का अन्त हुआ। क़ुरैश क़बीले के कुछ सरदार हिश्शाम-बिन-अम्र, मुतइम-बिन-

अदी, अदी-बिन-क़ैस, ज़ुहैर-बिन-अबी-उमय्या और ज़मआ-बिन-अल-असवद ने मिलकर बनू-हाशिम के इस प्रलयकाल जैसी परेशानी से निकालने और अमानवीय सन्धि से निकालने के लिए प्रयास शुरू किए और अन्ततः क़ुरैशी सरदारों को इस बात पर तैयार कर लिया गया कि अब इस अमानवीय बहिष्कार एवं प्रतिबंध को ख़त्म कर देना चाहिए।

ग़म का साल

यद्यपि बनू-हाशिम का सामाजिक बहिष्कार समाप्त हो चुका था, लेकिन उसके प्रभाव बनू-हाशिम पर प्रलयकालिक थे। इस बहिष्कार के समाप्त होने के बाद नबी (सल्ल॰) को एक के बाद एक दो बहुत बड़े दुखों से गुज़रना पड़ा। आप (सल्ल॰) के चचा अबू-तालिब इस दुनिया से चल बसे, जो इस्लाम क़बूल न करने के बावजूद एक मज़बूत चट्टान की तरह आप (सल्ल॰) के साथ हमेशा खड़े रहे और क़ुरैश के अत्याचार से आप (सल्ल॰) की रक्षा करते रहे। उनकी मृत्यु के बाद आप (सल्ल॰) एक मज़बूत सहारे से वंचित हो गए और क़ुरैश को षड्यंत्र तथा अत्याचार की खुली छूट मिल गई।

अभी अबू-तालिब की मौत का घाव भरा भी नहीं था कि आप (सल्ल॰) की प्रिय जीवन-संगनी हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) इस दुनिया से चल बसीं। यह ऐसा सदमा था कि जिससे बाहर आने में आप (सल्ल॰) को बहुत समय लगा।

यदि अबू-तालिब क़ुरैश के सामने मुहम्मद (सल्ल॰) के सबसे बड़े समर्थक एवं सहायक थे तो ख़दीजा (रज़ि॰) ने हमेशा परेशानी और दुख में आप (सल्ल॰) को मानसिक सुकून और राहत दिलाई थी। वे एक मज़बूत आर्थिक सहारा भी थीं और उनके होते हुए आप (सल्ल॰) को घर की ओर से पूरी निश्चिंतता प्राप्त थी। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) की मृत्यु ने आप (सल्ल॰) के जीवन में एक बड़ी कमी पैदा कर दी।

कुछ दिनों के बाद मुहम्मद (सल्ल॰) ने क़रीबी रिश्तेदारों के कहने पर एक अधेड़ और विधवा महिला सौदा-बिन्ते-ज़मआ (रज़ि॰) से शादी कर ली, ताकि वे आपके घर का ध्यान रख सकें और बच्चों की देख-भाल कर सकें।

कुछ दिनों के बाद आप (सल्ल०) ने अपने दोस्त हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) की बेटी हज़रत आइशा (रज़ि०) से निकाह किया, लेकिन उनकी रुख़सती (विदाई) मदीना पहुँचने के बाद ही हुई।

इन दो ज़बरदस्त सदमों की वजह से नबी (सल्ल०) इस साल को 'ग़म का साल' के नाम से याद करते। एक आम आदमी तो सम्भवतः ऐसे झटकों से बाहर नहीं आ सकता था, लेकिन नबी (सल्ल०) आम आदमी न थे। आप (सल्ल०) ने अपनी व्यक्तिगत समस्याओं के कारण रिसालत की इस ईश्वरीय ज़िम्मेदारी को प्रभावित नहीं होने दिया। ज़िम्मेदारी के एहसास ने आप (सल्ल०) को कभी शिथिल नहीं होने दिया।

अबू-तालिब और हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) की मृत्यु के बाद नबी (सल्ल०) को यह आभास हो गया था कि क़ुरैश की दुष्ट हरकतों में और अधिक बढ़ोत्तरी होगी और परेशानियाँ और बढ़ेंगी और ठीक ऐसा ही हुआ। क़ुरैश को लगा कि अबू-तालिब की मौत के बाद वे मुहम्मद (सल्ल०) और उनके पैग़ाम को ख़त्म करने के लिए आज़ाद हैं। लेकिन नबी (सल्ल०) ने इस परेशानी का इलाज सोचा। आप (सल्ल०) इस आह्वान (सन्देश) को ताइफ़ ले गए। आप (सल्ल०) ने सोचा कि हो सकता है कि ताइफ़ शहर के बड़े-बड़े सरदार और आम लोग इस ईश्वरीय आह्वान के समर्थन में आगे आएँ।

ताइफ़ की घटना

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) जो कुछ सोचकर ताइफ़ गए थे उसके बिलकुल विपरीत हुआ। जब आप (सल्ल०) ने ताइफ़ के सरदारों को एकेश्वरवाद की ओर बुलाया और बुतों को पूजने और अनेकेश्वरवाद से बचने को कहा तो उन्होंने न केवल आह्वान को स्वीकार करने से इनकार कर दिया, बल्कि ऐसे क्रूर एवं असामाजिक तत्वों को आप (सल्ल०) के पीछे लगा दिया जिन्होंने पत्थर मार-मार कर आप (सल्ल०) को बुरी तरह घायल कर दिया और ताइफ़ से बाहर निकाल दिया।

ज़ैद (रज़ि०) ने जो आप (सल्ल०) के विश्वासपात्र साथी थे और इस सफ़र में नबी (सल्ल०) के साथ थे, आप (सल्ल०) को बचाने का भरसक

प्रयत्न किया। लेकिन उन क्रूर लोगों ने उनको भी नहीं छोड़ा और उनको भी घायल कर दिया। अन्ततः आप (सल्ल॰) ने एक बग़ीचे में शरण ली। वह बग़ीचा रबीआ का था। रबीआ मक्का का एक मशहूर सरदार था और वहाँ के धनवान लोगों की तरह उसने ताइफ़ में भी एक बग़ीचा लगा रखा था। इस घायल अवस्था में भी आप (सल्ल॰) ने ईश्वर से जो प्रार्थना की वह जब तक दुनिया रहेगी, याद रखी जाएगी। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की प्रतिष्ठावाला एक उच्च सहनशीलता वाला ईश्वर का संदेष्टा (रसूल) ही इस अवसर पर ईश्वर से यह प्रार्थना कर सकता था। आप (सल्ल॰) ने कहा—

> "हे प्रभु! मैं केवल आपके सामने ही अपनी कमज़ोरी बता सकता हूँ। मेरे पास संसाधन बहुत कम हैं और लोगों ने मुझे जी भर कर अपमानित किया है। हे दयाविधान करुणामय प्रभु! आप दुर्बलों के स्वामी और संरक्षक हैं। आप मेरे भी स्वामी हैं। आपने किन लोगों के सिपुर्द मुझे कर रखा है। उनके, जो सामने आने पर मुझसे ठीक से पेश न आएँ या ऐसे दुश्मन जिनको आपने मेरे ऊपर पूरा अधिकार दे रखा है। हे मेरे मालिक! यदि आप मुझसे नाराज़ नहीं हैं तो मुझे अपनी इस दुर्दशा का कोई दुख नहीं। आपकी प्रसन्नता चाहता हूँ। आपके मुख-मण्डल की आभा जो अंधेरे को उजाले में बदल देती है और जो इहलोक और परलोक के जीवन पर पूरा आधिपत्य रखती है, मैं उसकी प्रसन्नता चाहता हूँ। मैं कभी भी आपकी अप्रसन्नता सहन नहीं कर सकता और न यह चाहता हूँ कि मेरा कोई काम आपको नाराज़ कर दे। मैं आपकी हर अप्रसन्नता को दूर करना चाहता हूँ, यहाँ तक कि आप मुझसे ख़ुश हो जाएँ। आपके अलावा न कोई ताक़त है और न ही कोई अधिकार।"

ताइफ़ की यात्रा के बहुत दिनों बाद जब हज़रत आइशा (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) से पूछा कि आप (सल्ल॰) पर कभी उहुद (की जंग) से अधिक बुरा दिन बीता है तो आप (सल्ल॰) ने कहा : तुम्हारे क़बीलों ने मुझे बहुत सताया है और मेरे लिए सबसे दुखद दिन अक़बह का दिन (ताइफ़ का दिन) था।

यह वह दिन था जब इब्ने-अब्द यालैल-बिन-अब्द-कुलाल ने मेरे आह्वान को ठुकरा दिया। मैं परेशानियों से चूर वहाँ से लौटा, यहाँ तक कि मैंने अपने आपको क़र्न अस्सालिब (वर्तमान नाम सैल अल-कबीर) में पाया।

वहाँ पहुँचकर जब मैंने आकाश की ओर नज़र उठाई तो देखा कि बादल मुझपर छाया किए हुए था। फिर मैंने जिबरील (अलैहि॰) को देखा। जिब्रील (अलैहि॰) ने कहा : "अल्लाह ने सुन लिया जो उन लोगों ने आप से कहा। अल्लाह ने पहाड़ों के दारोग़ा (फ़रिश्ते) को आप की सेवा में भेजा है। आप उसको जो भी आदेश दें वह उसका पालन करेगा। उन लोगों को जो भी सज़ा देना चाहें दे सकते हैं।"

उस समय पहाड़ों के दारोग़ा (फ़रिश्ते) ने मुझे सलाम किया और कहा : "ऐ मुहम्मद! आप जो चाहें, आदेश दें। यदि आप चाहें तो मैं ताइफ़वालों को दो पहाड़ों के बीच पीस दूँ।"

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "नहीं, मुझे आशा है कि अल्लाह उनकी सन्तानों में से ऐसे लोग पैदा करेगा जो केवल उसकी उपासना करेंगे और उसके अलावा किसी दूसरे की इबादत से बचेंगे।"

नबी (सल्ल॰) के इस फ़ैसले और इससे पहले आप (सल्ल॰) की दुआ से यह अच्छी तरह स्पष्ट है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) मानवता से कितना अधिक प्रेम करते थे। पहाड़ों के दारोग़ा की बात के जवाब में जो कुछ आप (सल्ल॰) ने कहा उससे स्पष्ट है कि नबी (सल्ल॰) पर अत्याचार के उपरान्त भी आप (सल्ल॰) ताइफ़वासियों और उनकी सन्तानों की पारलौकिक सफलता के शुभाकांक्षी थे। आप (सल्ल॰) ने उनके लिए बद-दुआ (अभिशाप) का एक शब्द भी मुँह से नहीं निकाला। आप (सल्ल॰) और फ़रिश्ते की इस बात-चीत से यह भी सिद्ध हो गया कि ईश्वरीय योजना यही थी कि लोग नबी (सल्ल॰) और उनके अनुयायिओं की मानवीय स्तर पर की गई कोशिशों से इस धर्म को स्वीकार करें।

ताइफ़ से वापसी के बीच एक बड़ी विचित्र घटना घटी। जिन्नों का एक समूह इस्लाम में दाख़िल हो गया। ये वे जिन्न थे जिन्होंने अल्लाह के रसूल

(सल्ल॰) की ज़बान से रात के आख़िरी पहर में क़ुरआन का पाठ सुना। बाद में वह्य के माध्यम से इस घटना की ख़बर दी गई। क़ुरआन कहता है—

> "(और वह घटना भी उल्लेखनीय है) जब हम जिन्नों के एक गरोह को तुम्हारी ओर ले आए थे, ताकि वे क़ुरआन सुनें। जब वे उस स्थान पर पहुँचे (जहाँ तुम क़ुरआन पढ़ रहे थे) तो उन्होंने आपस में कहा ख़ामोश हो जाओ। अतएव जब क़ुरआन पाठ समाप्त हुआ तो वे अपनी क़ौम की ओर डरानेवाले बनकर आए। उन्होंने कहा : ऐ हमारी क़ौम के लोगो! निस्सन्देह हमने एक किताब सुनी है जो मूसा (अलैहि॰) के बाद अवतरित की गई है। वह उन किताबों की पुष्टि करती है जो इससे पहले अवतरित हो चुकी हैं। वह सीधे रास्ते की ओर मार्ग दिखाती है। ऐ हमारी क़ौम के लोगो! अल्लाह की ओर बुलाने के सन्देश को स्वीकार कर लो और उस पर ईमान ले आओ। ईश्वर (अल्लाह) तुम्हारे (कुछ) गुनाह बख़्श देगा और वह तुम्हें निहायत दर्दनाक यातना से बचा देगा।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-46 अहक़ाफ़, आयतें-29 से 31)

यह घटना उक़बा की घाटी में घटित हुई। यह उन लोगों के लिए सन्देश है जो अल्लाह के रास्ते में प्रयास करते हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि अल्लाह की मदद हमेशा ऐसे लोगों के साथ है चाहे स्थितियाँ कितनी ही प्रतिकूल क्यों न हो और (देखने में) निराशा, अंधकार और मुसीबतों का पहाड़ उनके सामने क्यों न हों—अल्लाह की मदद ऐसे रास्तों से आती है जिनकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते।

इस घटना से यह भी स्पष्ट होता है कि यदि नबी (सल्ल॰) को अपने सन्देश के क्षेत्र में कामयाबी मिलने से देर हो रही थी तो इसमें आप (सल्ल॰) का कोई क़ुसूर या कमी नहीं थी। यह तो उन विरोधियों की हठधर्मी और अल्लाह के संदेश से उनका बैर था जिसकी वजह से उन्होंने सच्चाई को स्वीकार करने से इनकार कर दिया था।

यह उन एकेश्वरवाद की ओर बुलानेवालों और ईश्वर के समक्ष समर्पित

कर देने का आह्वान करनेवालों के लिए भी एक संदेश है जो सच्चाई को फैलाना चाहते हैं। उनको यह बात स्पष्ट रूप से मन में बिठा लेनी चाहिए कि न तो परिणाम उनके हाथ में है और न ही हमेशा उनके अनुमान के अनुसार सामने आता है, चाहे वे भरपूर कोशिशें क्यों न करें। कभी तो सफलता उन जगहों से भी नहीं निकलती जहाँ से उनको इसकी पूरी आशा होती है। लेकिन कभी-कभी उन जगहों से मिल जाती हैं जिनकी वे कल्पना भी नहीं कर सकते।

जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने ताइफ़ से मक्का वापस आने का इरादा किया तो हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) ने आपकी सुरक्षा को लेकर चिन्ता व्यक्त की कि अबू-लहब जो बनू-हाशिम का नया सरदार था, उसने आप (सल्ल॰) के प्रति अपनी दुश्मनी और विरोध पूरी तरह से स्पष्ट कर दिया था। फिर ताइफ़ में जो कुछ घटित हुआ उसकी सूचना मक्का तक पहुँच चुकी थी और दुष्ट तत्वों को मज़ाक उड़ाने का अवसर मिल गया था। ज़ैद (रज़ि॰) को ऐसा आभास हुआ कि इसके बाद क़ुरैश और खुल्लम-खुल्ला प्रताड़ित करने को उतर आएँगे। लेकिन अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को अल्लाह पर पूरा भरोसा और दृढ़ विश्वास था।

आप (सल्ल॰) ने कहा : "ज़ैद! तुम देखना कि ईश्वर किस तरह ज़मीन को मेरे लिए नर्म कर देगा। ईश्वर अपने सन्देश की सहायता करेगा और अपने नबी (सल्ल॰) को सफलता प्रदान करेगा।"

ईश्वर पर आप के अटूट भरोसे ने आप (सल्ल॰) को अनिवार्य एवं अपेक्षित अग्रसरता पर जमाए रखा। एक मनुष्य होने के नाते आप (सल्ल॰) ने प्रत्येक उन उपायों को अपनाया और उन सारे संसाधनों का इस्तेमाल किया जो आप (सल्ल॰) के उद्देश्य में सहायक सिद्ध हो सकते थे। इसी लिए मक्का में दाख़िल होने से पहले आप (सल्ल॰) ने मुतइम-बिन-अदी से सुरक्षा का वादा लिया। मुतइम-बिन-अदी क़ुरैश का एक शक्तिशाली सरदार था। इससे पहले भी उसने मुसलमानों की मदद की थी। बनू-हाशिम के बहिष्कार की समाप्ति में उसके सहयोग को कौन भूल सकता है। नबी (सल्ल॰) ने कभी भी उसके एहसानों को नहीं भुलाया। बद्र की जंग के बाद जब मक्का के

बहुत से सरदार क़ैदी बनाए गए उस समय आप (सल्ल०) ने फ़रमाया—

> "यदि आज मुतइम-बिन-अदी ज़िन्दा होता और मुझसे कहता कि इन क़ैदियों को रिहा कर दो तो मैं उसकी यह बात मान लेता।"
>
> (हदीस : बुख़ारी-4023)

विचारणीय बातें

(1) मुसलमानों पर हो रहे अत्याचार ने इस्लाम और मुसलमानों को कमज़ोर नहीं किया, बल्कि उनके साहस को और बल दिया और उनकी हिम्मत में और अधिक अभिवृद्धि हुई। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के प्रशिक्षण और अत्याचार के पहाड़ ने उन लोगों को ऐसा नेक और चरित्रवान बना दिया जो मज़बूती के साथ धर्म पर चट्टान की भाँति जमे हुए थे और नबी (सल्ल०) का साथ दे रहे थे। उन सबका उद्देश्य था एक ऐसे नेक समाज की स्थापना जो ईश्वरीय संदेश और दिव्य-विधान के अधीन हो।

(2) इस्लाम ने अपने अनुयायिओं को ऐसी हिम्मत और हौसला दे दिया था जिनको अत्याचारों के पहाड़ भी अपनी जगह से नहीं डिगा पाए। उनकी सोच साफ़ और स्पष्ट थी। नजाशी के दरबार में हज़रत जाफ़र (रज़ि०) का बेहतरीन भाषण इसका खुला प्रमाण है। यह उस समाज की छवि को भी स्पष्ट रूप से दर्शाता है जिसको हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) क़ायम करना चाहते थे।

(3) ताइफ़ की दुखद यात्रा के बाद हज़रत जिबरील (अलैहि०) का आगमन नबी (सल्ल०) के लिए सुकून और इत्मीनान का कारण था। लेकिन हमें यह दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि अल्लाह की मदद केवल रसूलों और नबियों तक ही सीमित नहीं है। अल्लाह की मदद का वादा हर उस व्यक्ति से और हर उस नेक काम पर है जो केवल उसी एक ईश्वर के लिए हो और उसके आदेशानुसार हो।

1:6 इस्लाम मदीना पहुँचा

पैग़म्बर (सल्ल॰) ने ताइफ़ से मक्का वापसी के बाद भी इस्लाम के प्रचार-प्रसार का काम उसी लगन और तेज़ी के साथ जारी रखा जिस तरह आप (सल्ल॰) पहले करते रहे थे। हज का मौसम निकट था। हज के अवसर पर पूरे अरब से लोग मक्का आते थे। आप (सल्ल॰) का पूरा प्रयास होता कि अधिक-से-अधिक हाजियों तक इस अवसर पर ईश्वरीय सन्देश को पहुँचा दें। बहुत-से लोग इस अवसर पर आप (सल्ल॰) के सन्देश को ध्यान से सुनते और आप (सल्ल॰) के उपदेश से प्रभावित हुए बिना नहीं जाते। धीरे-धीरे आप (सल्ल॰) की अनथक कोशिशों के नतीजे सामने आने लगे और अरब महाद्वीप के विभिन्न इलाक़ों से आए हुए लोग आप (सल्ल॰) की बातों से प्रभावित होकर इस्लाम को गले लगाने लगे।

नुबूवत के ग्यारहवें साल में मदीना के ख़ज़रज क़बीले के 6 लोगों की अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से मुलाक़ात हुई। आप (सल्ल॰) ने इस्लामी शिक्षाओं को प्रभावशाली ढंग से उनके सामने पेश किया, जिसके कारण ख़ज़रज क़बीले के लोग आप (सल्ल॰) के सन्देश से काफ़ी प्रभावित हुए और तुरन्त समझ गए कि निस्सन्देह ये वही नबी हैं जिनका उल्लेख बार-बार मदीना के यहूदी क़बीले के लोग करते रहते हैं। यहूदी मदीने के क़बीलों को धमकाते थे कि जब वह रसूल, जिसके आने की भविष्यवाणी पाई जाती है, आएगा तो यहूदियों की शक्ति बढ़ जाएगी और वे सबको अपने अधीन कर लेंगे।

मदीना अभी भी बुआस की जंग के प्रभाव से उभर नहीं पाया था। मदीना के दो बड़े क़बीले औस और ख़ज़रज को इस जंग ने एक-दूसरे का जानी दुश्मन बना दिया था। दोनों को ज़बरदस्त जन-धन के नुक़सान का सामना करना पड़ा था और दोनों क़बीलों की दुश्मनी अपनी चरम सीमा पर थी।

इन 6 पुण्यात्माओं ने इस्लाम के सन्देश को स्वीकार करने में कोई

समय नहीं लगाया। उन्होंने वादा किया कि वे अल्लाह के इस सन्देश को अपने साथ मदीना ले जाएंगे और मदीना के विभिन्न क़बीलों के सामने पेश करेंगे। आशा है कि अल्लाह औस और ख़ज़रज क़बीलों को इस्लाम के झंडे के नीचे एकत्र कर दे। यदि ऐसा हो जाए तो मदीना में नबी (सल्ल॰) से अधिक प्रिय एवं सम्मानित व्यक्ति कोई दूसरा नहीं होगा।

उन लोगों ने अपने वादे को पूरा करने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी और मदीना के विभिन्न क़बीलों के सामने ईश्वरी सन्देश को रखने और सत्यधर्म की ओर उनका आह्वान करने के काम को पूरे उत्साह के साथ करना शुरू कर दिया। शीघ्र ही सकारात्मक परिणाम आने शुरू हो गए।

अगले वर्ष हज के अवसर पर मदीना से 12 लोगों का एक दल अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से मिलने की इच्छा मन में संजोए हुए मक्का आया और आप (सल्ल॰) की सेवा में हाज़िर हुआ। उनमें से 5 तो वही लोग थे जिन्होंने पिछले साल भी आप (सल्ल॰) से भेंट की थी। दस लोगों का सम्बन्ध क़बीला ख़ज़रज से था, जबकि दो लोग औस क़बीला से ताल्लुक़ रखते थे। इन लोगों ने उक़बा की घाटी में अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से मुलाक़ात की और आप (सल्ल॰) से वफ़ादारी का संकल्प लिया।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "मुझे वचन दो कि तुम लोग अल्लाह के साथ शिर्क नहीं करोगे (उसके साथ किसी को साझीदार नहीं बनाओगे)। न तो चोरी करोगे, न व्यभिचार के निकट जाओगे। अपने बच्चों की हत्या नहीं करोगे। पत्नियों पर झूठा आरोप नहीं लगाओगे और मेरे किसी नेक आदेश के पालन से इनकार नहीं करोगे। तुम में से जो कोई भी इस वादे को पूरा करेगा वह अपने कर्मों का फल और कामों का बदला अल्लाह के यहाँ पाएगा। इसके विपरीत जो बुरा काम करेगा और अल्लाह यदि उसे छुपा ले तो उसका मामला अल्लाह के हवाले है। वह चाहे तो उसको सज़ा दे और चाहे तो माफ़ कर दे।"

इसके बाद हर एक ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के हाथ पर बैअत की (शपथ ली) और इस्लाम को स्वीकार कर लिया।

इस प्रतिनिधिमण्डल की वापसी पर आप (सल्ल॰) ने मुसअब-बिन-उमैर

(रज़ि॰) को उनके साथ भेजा, ताकि वे उन्हें क़ुरआन और सत्यधर्म की शिक्षाएँ दें। हज़रत मुसअब-बिन-उमैर (रज़ि॰) ने धर्म के प्रचार-प्रसार का काम बहुत ही निष्ठा और मेहनत से किया। उनकी मेहनत का नतीजा यह निकला कि अगले साल मदीने से नबी (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित होनेवाले लोगों की संख्या बढ़कर सत्तर (70) से भी अधिक हो गई। मदीने से सच्चे एकेश्वरवादी (मोमिन) अनेकेश्वरवादी (मुशरिक) हाजियों के साथ मक्का आए। मक्का पहुँचने के बाद उन्होंने गुप्त रूप से हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से सम्पर्क साधा और एक ख़ास जगह पर मिलने का वचन दिया। 12 ज़िल-हिज्जा को उक़बा की घाटी में एक बार फिर इन पुण्यात्माओं की सभा हुई।

आधी रात के बाद मदीने के ये एकेश्वरवादी लोग एक-एक और दो-दो करके उक़बा की घाटी में पहुँचे। आप (सल्ल॰) अपने चचा हज़रत अब्बास (रज़ि॰) के साथ वहाँ पहुँचे। हज़रत अब्बास (रज़ि॰) उस समय तक ईमान नहीं लाए थे, लेकिन फिर भी वे आप (सल्ल॰) का हर क़दम पर सहयोग करते और साथ निभाते। वातावरण बहुत भावुक था।

जब हज़रत अब्बास (रज़ि॰) को पता चला कि मदीने से आए हुए लोग नबी (सल्ल॰) से मदीना पलायन करने का निवेदन करनेवाले हैं तो उन्होंने साफ़-साफ़ कहा कि नबी (सल्ल॰) मक्का में पूरी तरह सुरक्षित हैं। उन्होंने मदीना से आए हुए उन भेंट-कर्ताओं से कहा कि मक्का छोड़कर मदीना जाने के बाद उनकी सुरक्षा की ज़िम्मेदारी केवल मदीनावालों की होगी। यह बात सुनकर मदीना के इस बड़े प्रतिनिधिमण्डल ने आप (सल्ल॰) से अपनी बात रखने का आग्रह किया कि आप (सल्ल॰) स्वयं मदीनावालों से क्या चाहते हैं और किन शर्तों पर आप (सल्ल॰) बैअत (शपथ) लेंगे?

आप (सल्ल॰) ने कहा : "मुझे वचन दो कि तुम मेरे आदेशों का पालन करोगे और मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करोगे। वचन दो कि भलाई के रास्ते में ख़र्च करोगे, चाहे तुम ग़रीबी की हालत में हो या मालदारी की हालत में। भलाई का हुक्म दोगे और बुराई से रोकोगे। अल्लाह के सच्चे धर्म की ओर लोगों को बुलाओगे और किसी आरोप लगानेवालों के आरोपों से न तो परेशान होगे और न ही डरोगे। तुम मेरा सहयोग करोगे और मेरी उसी तरह रक्षा

करोगे जिस तरह तुम अपनी पत्नियों और बच्चों की रक्षा करते हो। यदि तुम अपने वचनों को निभाओगे तो जन्नत (स्वर्ग) तुम्हारी प्रतिक्षा में है।"

अब वे लोग बैअत करने के लिए बिलकुल तैयार थे। उस समय असअद-बिन-ज़ुरारा (रज़ि॰) जो उस समय प्रतिनिधिमंडल के सबसे कम आयु के सदस्य थे, लेकिन हज़रत मुसअब-बिन-उमैर (रज़ि॰) के मदीना में मेज़बान (यजमान) होने की वजह से धर्म के बारे में दूसरों से अधिक जानते थे, खड़े हुए और कहा—

> "ऐ यसरिब (मदीना) के लोगो! ज़्यादा जल्दी मत करो। हम मदीना से यहाँ तक ऊँटों के बिना पैदल यात्रा करके आएँ हैं, केवल इस विश्वास के साथ कि आप (सल्ल॰) अल्लाह के रसूल हैं। यदि हम अब उनको मक्का से मदीना ले जाएँ तो इसका मतलब है पूरे अरब से दुश्मनी लेने के लिए तैयार हैं। इसका मतलब बहुतों की मौत भी हो सकती है। तुम तलवारों की बौछार का शिकार होगे। क्या तुम उन तमाम मुसीबतों पर जमे रहने के लिए तैयार हो? यदि वास्तव में ऐसा ही है तो तुम्हारा बदला अल्लाह के पास पक्का है। यदि तुम्हें डर लग रहा है तो अब भी समय है, सोच लो!"

उन सब लोगों ने एक स्वर में कहा : "हट जा असअद! अल्लाह की क़सम! हम इनको कभी अकेला नहीं छोड़ेंगे और कभी भी अपने वादे और बैअत (वचन) को नहीं तोड़ेंगे।"

बाद में उन लोगों ने अपने वचन को जिस तरह निभाया, जिस तरह अपने वादे को पूरा करने के लिए आग के दरियाओं को पार किया और कठिन-से-कठिन समय में भी आप (सल्ल॰) का साथ नहीं छोड़ा, वह इस्लामी इतिहास का एक उज्जवल अध्याय है।

बैअत लेने के बाद नबी (सल्ल॰) ने उन लोगों को अपने बीच से बारह लोगों को अपना प्रतिनिधि चुनने का आदेश दिया। ख़ज़रज के नौ और औस के तीन लोगों को प्रतिनिधि चुना गया।

अगले दिन जब क़ुरैश को इस बैअत की भनक मिली तो उन्होंने मदीना

से आनेवाले लोगों से इसकी सच्चाई मालूम करने की कोशिश की। मदीना के अनेकेश्वरवादी लोगों ने, जो इससे पूरी तरह अपरिचित थे, क़सम खाकर उनको विश्वास दिलाया कि इस ख़बर में कोई सच्चाई नहीं। मुसलमानों ने अपनी ज़बान बन्द रखी।

अरबी महीना ज़िल-हिज्जा की तेरहवीं तिथि, हज का अन्तिम दिन होता है। उसी दिन औस और ख़ज़रज का हज का काफ़िला मदीना वापस चला गया। क़ुरैश को कुछ दिनों के बाद इसका आभास हुआ कि बैअत की ख़बर में सच्चाई थी, कोई अफ़वाह न थी। अब चूँकि मदीना का काफ़िला उनकी पहुँच से दूर निकल चुका था इसलिए चाहकर भी वह कुछ नहीं कर सके।

लेकिन सअद-बिन-उबादा (रज़ि॰) और मुन्ज़िर-बिन-अम्र (रज़ि॰) उनकी पकड़ में आ गए। उन दोनों को किसी कारणवश मक्का से निकलने में देर हो गई थी। हज़रत मुन्ज़िर (रज़ि॰) तो किसी तरह क़ुरैश की पकड़ से निकल भागे, लेकिन सअद-बिन-उबादा (रज़ि॰) उन ज़ालिमों के हत्थे चढ़ गए और एक भीड़ ने उनको हिंसा का निशाना बनाया। क्योंकि क़ुरैश समाज के लोग जानते थे कि सअद (रज़ि॰) मदीना के बड़े सरदार हैं और यदि उनको ज़्यादा क्षति पहुँची तो उनके व्यापार और व्यापारियों के काफ़िले को ख़तरा होगा, इसलिए मजबूरी में उन्होंने सअद (रज़ि॰) को छोड़ दिया।

विचारणीय बातें

(1) मदीना के लोगों ने नबी (सल्ल॰) और इस्लाम के समर्थन में जिस बहादुरी और साहस का परिचय दिया, उसका उदाहरण इतिहास में नहीं मिलता। उन्होंने हर परिस्थिति में आप (सल्ल॰) की सुरक्षा का वचन दिया और इतिहास साक्षी है कि उन्होंने अपनी जान पर खेलकर उस वचन को निभाया। यह उनके इस सत्यधर्म पर पूर्ण विश्वास का प्रमाण है, जिसको उन्होंने स्वीकार करने का निर्णय लिया। वे नबी (सल्ल॰) की सुरक्षा के लिए पूरे अरब का मुक़ाबला करने को तैयार थे और उन्होंने अगले दस वर्षों तक बार-बार इस वादे को पूरा कर दिखाया।

(2) उक़बा की इस दूसरी बैअत ने एक ऐसी इस्लामी राज्य की नींव रखी जिसने इतिहास को पूरी तरह बदलकर रख दिया।

1:7 आसमानों पर बुलावा

अब जबकि एक इस्लामी राज्य की स्थापना का चरण-क्रम पूर्ण होने के निकट था, नबी (सल्ल॰) को इस महान उत्तरदायित्व को निभाने से पहले आसमानों की सैर के लिए भी ले जाया गया। यह एक ऐतिहासिक और अपनी तरह की पहली और आख़िरी घटना थी, जो हिजरत (पलायन) से पहले अंतिम साल में घटित हुई। बल्कि यह कहना ज़्यादा उचित होगा कि ताइफ़ के दिल तोड़नेवाली घटना के बाद मेराज का यह सफ़र आप (सल्ल॰) के लिए उस दुर्घटना के प्रभाव से बाहर निकलने और उसको भूलने में बहुत सहायक सिद्ध हुआ।

एक मुबारक रात में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰), हज़रत जिबरील (अलैहि॰) के साथ मक्का से यरुशलम ले जाए गए। यात्रा के इस भाग को एक पारिभाषिक शब्द 'इसराअ' से याद किया जाता है। 'इसराअ' का शाब्दिक अर्थ 'रात्रि की यात्रा' होता है।

बैतुल-मक़दिस से हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को आसमानों पर ले जाया गया और आप (सल्ल॰) के रब ने नबी (सल्ल॰) को अपनी निशानियाँ दिखाईं और प्रातः सूर्योदय से पहले आपको मक्का पहुँचा दिया गया। यात्रा के इस भाग को 'मेराज' कहते हैं। यहाँ यह स्पष्ट कर देना अनिवार्य है कि यह यात्रा नबी (सल्ल॰) की जागृत-अवस्था में हुई और आप (सल्ल॰) को स-शरीर स्वर्ग और आसमानों की सैर कराई गई। क़ुरआन की निम्नलिखित आयतें इस घटना को पूरी तरह स्पष्ट कर देती हैं।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के सफ़र के पहले भाग के बारे में क़ुरआन कहता है—

"पवित्र है वह जो ले गया एक रात्रि अपने बन्दे को मस्जिदे-हराम से मस्जिदे-अक़सा तक, जिसके माहौल को उसने बरकत दी है,

ताकि उसे अपनी कुछ निशानियाँ दिखाए। निस्सन्देह वही सुनने और देखनेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-1)

बैतुल-मक़दिस से आसमानों और ऊपरीलोक का सफ़र और अनोखा आध्यात्मिक एहसास जो इस सफ़र में आप (सल्ल०) को हुआ, उसका उल्लेख क़ुरआन ने इन शब्दों में किया है—

"एक बार पुनः उसने सिद्रतुलमुंतहा (परली सीमा पर बेर) के निकट उसको उतरते देखा, जहाँ निकट ही जन्नतुल-मावा (ठिकानेवाली जन्नत) है। उस समय सिद्रा (बेरी) पर छा रहा था जो कुछ छा रहा था। दृष्टि न तो ठिटकी और न सीमा से बढ़ी। यक़ीनन उस (रसूल) ने अपने रब की बड़ी-बड़ी निशानियाँ देखीं।"

(क़ुरआन, सूरा-53 नज्म, आयतें-13 से 18)

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को मेराज के इस सफ़र में ईश्वर ने जिन चीज़ों का दर्शन कराया और नबी (सल्ल०) को अपनी जो ख़ास निशानियाँ दिखाईं, उनका आभास पूरी तरह नबी (सल्ल०) के अलावा किसी और को नहीं हो सकता। हमारे लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण सूरा-53 नज्म की 17वीं आयत है। यह आयत कहती है—

"दृष्टि न तो ठिटकी और न सीमा से बढ़ी।"

(क़ुरआन, सूरा-53 नज्म, आयत-17)

यह आयत नबी (सल्ल०) के सुदृढ़ एवं महानतम व्यक्तित्व को स्पष्ट करती है। आप (सल्ल०) को अपने नुबूवत के मक़ाम की महानता और अपनी मानवीय हैसियत की सीमाओं का पूरा आभास और ज्ञान था। मानवता के पूरे इतिहास में केवल आप (सल्ल०) को ही इस योग्य समझा गया कि आप (सल्ल०) को ऐसा सम्मान और श्रेष्ठता प्रदान की गई। आप (सल्ल०) ने इस अवसर को विनष्ट नहीं किया, बल्कि सभी चीज़ों को बहुत ही ध्यान एवं सूक्ष्मता से देखा और मान-सम्मान के स्वामी अल्लाह की निशानियों से अवगत हुए।

इस पवित्र यात्रा का क़िस्सा संक्षेप में उल्लेख किया जाता है। यह क़िस्सा

हदीसों की सभी किताबों में जिनमें बुख़ारी, मुस्लिम, मुसनद अहमद और बैहक़ी सम्मिलित हैं, बयान हुआ है।

उस मुक़द्दस रात में जिबरील (अलैहि॰) तशरीफ़ लाए, नबी (सल्ल॰) का सीना मुबारक चाक किया, उसको ज़मज़म के पानी से साफ़ किया। फिर एक बर्तन में ईमान, बुद्धि और विवेक को लाया गया और हज़रत जिबरील (अलैहि॰) ने आप (सल्ल॰) के सीने को इन चीज़ों से भर दिया और सीने को दोबारा बन्द कर दिया। फिर बुर्राक़ पर बिठाकर बैतुल-मक़दिस ले गए। बुर्राक़ को विशिष्ट रूप से इस सफ़र के लिए भेजा गया था। बैतुल-मक़दिस में हज़रत आदम (अलैहि॰) समेत अब तक के सभी नबी मौजूद थे। उन तमाम नबियों ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की इमामत में दो रकअत नमाज़ अदा की।

जब आप (सल्ल॰) बैतुल-मक़दिस से बाहर आए तो जिबरील (अलैहि॰) ने आप (सल्ल॰) के सामने दो भरे हुए प्याले पेश किए। एक में शराब और दूसरे में दूध था। नबी (सल्ल॰) ने दूध के प्याले को चुना। यह देखकर जिबरील (अलैहि॰) ने कहा : "आपकी पंसद ठीक प्रकृति के अनुकूल है।"

वहाँ से आप (सल्ल॰) को जिबरील (अलैहि॰) के साथ आसमानों में ले जाया गया।

पहले आसमान पर आप (सल्ल॰) की मुलाक़ात समस्त मनुष्यों के पिता हज़रत आदम (अलैहि॰) से हुई। दूसरे आसमान पर हज़रत ईसा (अलैहि॰) और यह्या (अलैहि॰) से भेंट हुई। तीसरे आसमान पर हज़रत यूसुफ़ (अलैहि॰), चौथे आसमान पर हज़रत यूनुस (अलैहि॰), पाँचवें आसमान पर हज़रत हारून (अलैहि॰), छठे आसमान पर हज़रत मूसा (अलैहि॰) और सातवें आसमान पर हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) ख़लीलुल्लाह से मुलाक़ात हुई। वे बैतुल-मामूर से टेक लगाए बैठे हुए थे। उससे थोड़ा आगे जाने पर हज़रत जिबरील (अलैहि॰) ने कहा कि अब वे और आगे नहीं जा सकते और यह कि इससे आगे नबी (सल्ल॰) को अकेला जाना होगा। वहाँ पर नबी (सल्ल॰) को अल्लाह की निशानियों का दर्शन करवाया गया। यहीं पर पाँच वक़्त की नमाज़ फ़र्ज़ (अनिवार्य) की गई। इन नमाज़ों को आप (सल्ल॰) और आप (सल्ल॰) के अनुयायिओं पर रहती दुनिया तक के लिए अनिवार्य ठहरा दिया गया। नबी

(सल्ल॰) सुबह होने से पहले मक्का वापस आ गए।

इस महान और समझ में न आनेवाली यात्रा के बारे में क़ुरैश को बताना बड़ी हिम्मत की बात थी। आप (सल्ल॰) को इसका अनुभव था कि क़ुरैशवाले क्या कहेंगे। लेकिन अपनी आशंकाओं को अनदेखा करते हुए नबी (सल्ल॰) ने अगले ही दिन एक बड़े जन-समूह में इस घटना का उल्लेख किया। मक्का के सत्य-विरोधियों की प्रतिक्रिया वैसी ही थी जैसा कि आप (सल्ल॰) ने सोच रखा था। उन्होंने यरुशलम के बारे में आप (सल्ल॰) से अनेकों सवाल किए। हालांकि उन्हें मालूम था कि आप (सल्ल॰) ने अब से पहले कभी भी यरुशलम का सफ़र नहीं किया था। नबी (सल्ल॰) ने उनके समस्त प्रश्नों के उत्तर बिलकुल सही दिए। आप (सल्ल॰) ने वहाँ के तमाम स्थानों के बारे में विस्तार से बताया। उन व्यापारिक क़ाफ़िलों के बारे में भी बताया जो आप (सल्ल॰) ने रास्ते में देखे और जो मक्का से यरुशलम और यरुशलम से मक्का के बीच सफ़र कर रहे थे। लेकिन यह एक ऐसी घटना थी जो मनुष्यों की बुद्धि में समाने वाली नहीं थी। उन्होंने इस पर विश्वास करने से स्पष्ट इनकार कर दिया।

आप (सल्ल॰) की बात सुनकर क़ुरैश के कुछ सरदार हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के पास गए, जो उस समय तक इस घटना से अंजान थे। क़ुरैश के अनेकेश्वरवादियों ने अबू-बक्र (रज़ि॰) से कहा कि क्या ऐसा सम्भव है कि कोई आदमी एक रात में मक्का से यरुशलम जाकर वापस आ जाए। अबू-बक्र (रज़ि॰) का दो टूक उत्तर था। "ऐसा कदापि सम्भव नहीं है।" लेकिन जब उन लोगों ने कहा कि उनके दोस्त यानी नबी (सल्ल॰) ने इसका दावा किया है तो अबू-बक्र (रज़ि॰) ने तुरन्त कहा कि "यदि वे ऐसा कह रहे हैं तो निस्संदेह उसमें पूरी सच्चाई होगी।"

हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) का नबी (सल्ल॰) पर यही अटूट विश्वास और भरोसा था जिसकी वजह से उनको सिद्दीक़ (सत्यवादी) की उपाधि से पुकारा जाने लगा।

विचारणीय बातें

रसूलों का चुनाव केवल अल्लाह करता है, जो सर्वजगत का स्वामी है। कोई भी व्यक्ति अपनी मानवीय कोशिशों से नबी नहीं बन सकता। नबी बनाने की मूल विशेषताओं को तो केवल सृष्टि का रचयिता ही जानता है। तमाम नबियों और रसूलों में ख़ूबियाँ जन्मजात होती हैं। वे झूठ से कोसों दूर रहते हैं। पहले दिन से ही गुनाहों से बचे रहते हैं और इस विषय में अल्लाह उनकी रक्षा करता है।

इसके अलावा नबियों और रसूलों को कुछ ऐसे आध्यात्मिक अनावृत (ज्ञान) होते हैं जो उनके ईमान को परोक्ष-ईमान से दृष्ट-ईमान के दर्जे पर ले जाते हैं। पैग़म्बरी की ज़िम्मेदारियाँ निभाते समय भी उनको ऐसे व्यक्तिगत अनुभवों से गुज़ारा जाता है जिससे वे ऐसी आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करते हैं जो उनकी उस भारी ज़िम्मेदारी को पूरा करने में सहयोग करती हैं।

उदाहरण के लिए हज़रत यूनुस (अलैहि॰) को यह आध्यात्मिक शक्ति उस वक़्त हासिल हुई जब उनको एक बहुत बड़ी मछली ने निगल लिया। हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) को यह रूहानी अनुभव समय प्राप्त हुआ जब उनको दहकती हुई आग में फेंका गया और अल्लाह सर्वशक्तिमान के आदेश से वह भड़कती हुई आग ठंडी हो गई। हज़रत मूसा (अलैहि॰) को यह आध्यात्मिक घड़ी उस समय नसीब हुई जब तूर पहाड़ की चोटी पर अल्लाह सर्वशक्तिमान ने उनको अपने से बात करने का सम्मान प्रदान किया और नबी (सल्ल॰) को इसी आध्यात्मिक शक्ति का आभास उस समय हुआ जब आप (सल्ल॰) को मेराज जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

इस बात को दोबारा स्पष्ट करने की ज़रूरत नहीं कि आप (सल्ल॰) को जागृत अवस्था में स-शरीर आसमानों और स्वर्ग की सैर कराई गई थी और इस सफ़र के पहले हिस्से में आप (सल्ल॰) को बैतुल-मक़दिस ले जाया गया था। यह महान् ऐतिहासिक घटना स्वप्न की हालत में पेश नहीं आई।

अध्याय 2
तैबा का सफ़र

2:1 मुहम्मद (सल्ल०) की मदीना हिजरत (पलायन)
2:2 मदीना की ओर

2:1 मुहम्मद (सल्ल०) की मदीना हिजरत (पलायन)

अल्लाह तआला ने क़ुरआन में फ़रमाया है–

"ऐ मेरे बन्दो जो ईमान लाए हो! निस्सन्देह मेरी धरती बहुत विस्तृत है, अतः तुम मेरी ही बन्दगी करो।"

(क़ुरआन, सूरा-29 अनूकबूत, आयत-56)

उक़बा की दूसरी बैअत के बाद क़ुरैश के सभी सरदार चौकन्ने हो गए थे। उनको इस बात का अन्दाज़ा हो गया था कि हालात धीरे-धीरे उनकी पकड़ से बाहर हो रहे हैं। इसी ग़ुस्से और झिल्लाहट की स्थिति में उन्होंने मुसलमानों पर अत्याचार को और बढ़ा दिया। अब तकलीफ़ें और अत्याचार असहनीय होते जा रहे थे। लेकिन मोमिनों की जमाअत उसी तरह धैर्य और संयम से काम लेती रही जैसा कि बारह वर्षों से लेती रही थी। उनको भी इस बात का अनुभव हो गया था कि आनेवाले महान कार्य के लिए उनको तैयार करने का यह दूसरा चरण है। सम्भवतः इसका एक उद्देश्य यह था यदि कोई कमज़ोर कड़ी है तो वह इस चरण में ही अलग हो जाए। मक्का में अवतरित होनेवाली अन्तिम सूरा, सूरा-29 अनूकबूत में अल्लाह तआला फ़रमाता है–

"क्या लोगों ने यह समझ रखा है कि वे केवल यह कहने पर छोड़ दिए जाएँगे कि हम ईमान ले आए और उनकी परीक्षा नहीं ली जाएगी और हम उन सभी लोगों की परीक्षा ले चुके हैं जो उनसे पहले गुज़र चुके हैं। अल्लाह उन लोगों को ज़रूर आज़माएगा जिन्होंने सच बोला और उन लोगों को भी ज़रूर ज़ाहिर करेगा जो झूठे हैं।" (क़ुरआन, सूरा-29 अनूकबूत, आयतें-2 से 3)

इस सूरा में इस बात का भी उल्लेख किया गया है कि अगर उनको धर्म

बचाने के लिए घर बार भी छोड़ना पड़े तो इससे उनको हिचकना नहीं चाहिए। सांसारिक हितों के लिए झूठी शक्तियों के सामने सिर झुकाने से उत्तम है कि उस जगह से पलायन कर जाएँ। अल्लाह तआला फ़रमाता है–

> "ऐ मेरे बन्दो जो ईमान लाए हो! निस्सन्देह मेरी ज़मीन बहुत विस्तृत है; तो तुम मेरी ही इबादत करो।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-29 अन्‌कबूत, आयत-56)

इन परिस्थितियों में अब उन मुसलमानों ने मक्का से मदीना की ओर हिजरत (पलायन) करनी शुरू कर दी जो इसका सामर्थ्य रखते थे। लेकिन क़ुरैश उन लोगों को आसानी से हिजरत करने नहीं दे सकते थे।

उन्होंने एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाकर उनको रोकने का प्रयास किया। बहुत-से लोगों को तो क़ुरैश ने केवल इस शर्त पर मदीना जाने दिया कि वे अपनी सारी धन-सम्पत्ति और जीवन-यापन के सामान छोड़कर जाएँगे। बहुत-से लोगों को इस बात पर भी मजबूर किया गया कि वे अपनी बीवी व बच्चों को भी मक्का ही में छोड़ दें।

हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) ने भी आप (सल्ल॰) से मदीना की ओर हिजरत की अनुमति चाही। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने उन्हें और प्रतीक्षा करने को कहा। इससे हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) को ऐसा आभास हुआ कि नबी (सल्ल॰) भी हिजरत के लिए तैयार हैं और इस सिलसिले में अल्लाह के आदेश की प्रतीक्षा में हैं। हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) को यह भी आभास हो गया कि सम्भवतः नबी (सल्ल॰) उनके साथ ही मदीना हिजरत करें।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के प्रारम्भिक दौर में हिजरत न करने के दो मौलिक कारण थे। पहला यह कि मुसलमानों के मार्गदर्शक होने के नाते मुसलमानों की सुरक्षा नबी (सल्ल॰) की ज़िम्मेदारी थी। आप (सल्ल॰) दूसरे मुसलमानों को बेसहारा छोड़कर मदीना कैसे जा सकते थे?

दूसरा यह कि अल्लाह का नबी होने की हैसियत से आप (सल्ल॰) दूसरे सहाबियों को हिजरत की इजाज़त दे सकते थे। लेकिन स्वयं अल्लाह तआला के स्पष्ट आदेश के बिना आप (सल्ल॰) हिजरत के लिए आज़ाद नहीं थे।

क़ुरैश को इस बात का खुला अन्दाज़ा हो गया था कि इस दीन (धर्म) को समाप्त करने की उनकी कोशिशें सफल होनेवाली नहीं। उन्होंने निर्णय लिया कि अब इस धर्म पर ऐसी गहरी चोट मारी जाए जिससे यह आन्दोलन पूरी तरह समाप्त हो जाए। उक़बा की दूसरी बैअत के लगभग दो महीने बाद, नुबूवत (पैग़म्बरी) के चौदहवें साल 26 सफ़र को (12 सितम्बर 622 ई॰) उन्होंने एक जन-सभा का आयोजन किया, जिसमें क़ुरैश के सारे क़बीलों के सरदारों को आमंत्रित किया गया। इस बैठक में यह तय किया गया कि हर क़बीले से एक बहादुर योद्धा का चयन किया जाएगा और उन योद्धाओं का यह दल नबी (सल्ल॰) पर हमला करके (ईश्वर न करे) आप (सल्ल॰) को शहीद कर देगा। उनको लगा कि आप (सल्ल॰) के क़बीले बनू-अब्दे- मनाफ़ के लोग यह साहस नहीं करेंगे कि इतने सारे क़बीलों से इसका बदला लेने की कोशिश करें। इस योजना को उसी रात पूरा करना तय पाया गया। क़ुरआन, क़ुरैश की इस योजना के बारे में कहता है—

> "वह समय भी याद करने योग्य है जब सत्य के इनकारी तेरे विरुद्ध तदबीरें सोच रहे थे कि तुझे क़ैद कर दें, या हत्या कर दें या देश निकाला दे दें। वे अपनी चालें चल रहे थे और अल्लाह अपनी चाल चल रहा था और अल्लाह सबसे उत्तम चाल चलनेवाला है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-30)

जिबरीले-अमीन (अलैहि॰) ने नबी (सल्ल॰) को क़ुरैश के इस षड्यन्त्र की सूचना दी और आप (सल्ल॰) को अल्लाह के आदेश से हिजरत करने को कहा। आप (सल्ल॰) को यह आदेश दिया गया कि उसी रात मदीना चले जाएँ।

आप (सल्ल॰) दोपहर के समय हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के घर पहुँचे। उनको क़ुरैश के इस षड्यन्त्र से अवगत कराया और हिजरत के आदेश की सूचना दी। हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) उस समय हिजरत के लिए पूरी तरह तैयार थे। यह आभास होने के बाद कि वह नबी (सल्ल॰) के साथ हिजरत करेंगे, उन्होंने दो बेहतरीन ऊँटों को इस लम्बी यात्रा के लिए तैयार कर रखा था। उन्होंने आप (सल्ल॰) को अपनी तैयारी के बारे में बताया और आप

(सल्ल॰) को एक ऊँट स्वीकार करने का आग्रह किया। आप (सल्ल॰) ने उनकी बात केवल इस शर्त पर मानी जब वे ऊँट की क़ीमत लेने को तैयार हो गए। उसी समय इन दोनों ने हिजरत के बारे में पूरी योजना बना ली और फिर नबी (सल्ल॰) वहाँ से अपने घर चले गए।

आप (सल्ल॰) ने हज़रत अली (रज़ि॰) को बुलाया और स्थिति से अवगत कराया। आप (सल्ल॰) ने उन समस्त धरोहरों (अमानतों) को हज़रत अली (रज़ि॰) के सिपुर्द किया जो मक्कावालों ने आप (सल्ल॰) के पास रखी थीं। यह बात उल्लेखनीय है कि क़ुरैश नबी (सल्ल॰) से दुश्मनी के बावजूद आप (सल्ल॰) पर इतना भरोसा करते थे कि अपनी बहुमूल्य चीज़ें आप (सल्ल॰) के पास अमानत के रूप में सुरक्षित समझते थे।

नबी (सल्ल॰) ने हज़रत अली (रज़ि॰) से कहा कि वे उस रात आप (सल्ल॰) के बिस्तर पर सोएँ। इसका उद्देश्य यह था कि हमलावर जो आप (सल्ल॰) की हत्या की ताक में थे, ये सोचते रहें कि आप (सल्ल॰) अभी सो रहे हैं। हज़रत अली (रज़ि॰) को यह आदेश दिया कि जब नबी (सल्ल॰) मदीना पहुँच जाएँ तो वे लोगों की अमानतें वापस करके मदीना आ जाएँ। आप (सल्ल॰) ने हज़रत अली (रज़ि॰) को यह विश्वास दिलाया कि आपको कोई ख़तरा नहीं होगा।

अंधेरी रात में क़ुरैशी गरोह आप (सल्ल॰) पर टूट पड़ने को बेक़रार था। उनकी योजना थी कि आधी रात के बाद छापा मारेंगे। नबी (सल्ल॰) अपने घर से क़ुरआन की ये आयत पढ़ते हुए निकले—

> "हमने एक दीवार उनके आगे खड़ी कर दी है और एक दीवार उनके पीछे। हमने उन्हें ढाँक दिया है, उन्हें अब कुछ नहीं सूझता।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-36 यासीन, आयत-9)

नबी (सल्ल॰) ने धरती पर से थोड़ी-सी धूल उठाई और क़ुरैश के उन योद्धाओं की तरफ़ उपरोक्त आयत पढ़ते हुए डाल दी। इसका प्रभाव यह हुआ कि वे लोग जो आप (सल्ल॰) की हत्या के इरादे से इकट्ठे हुए थे आप (सल्ल॰) को घर से निकलकर उनके सामने से गुज़रते हुए नहीं देख पाए।

वहाँ से नबी (सल्ल॰) हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के घर पर गए और फिर दोनों बिना देर किए उस ऐतिहासिक यात्रा के लिए चल पड़े।

इधर ये शत्रु काफ़ी देर तक उसी तरह मुहम्मद (सल्ल॰) की ताक में रहे। इसी बीच वहाँ से गुज़रनेवाले किसी व्यक्ति ने उन लोगों से वहाँ इकट्ठे होने का कारण पूछा। जब उसे उनके इरादे का पता चला तो उसने कहा–

"मुहम्मद (सल्ल॰) तो यहाँ से निकल गए; मैंने ख़ुद मुहम्मद (सल्ल॰) को तुम लोगों के सामने से गुज़रते हुए देखा है।" उसने यह भी कहा कि किस प्रकार मुहम्मद (सल्ल॰) ने उन लोगों की तरफ़ धूल उठाकर फेंकी थी। उन सत्य के शत्रुओं ने घर में झाँक कर देखा तो मुहम्मद (सल्ल॰) के बिस्तर पर किसी को सोते हुए देखकर समझे कि आप (सल्ल॰) अन्दर ही सो रहे हैं और वहीं घात में रात भर लगे रहे। उनको यह ज्ञात नहीं था कि नबी (सल्ल॰) के बिस्तर पर उस रात आप स्वयं नहीं, बल्कि हज़रत अली (रज़ि॰) सो रहे थे। उन्होंने सुबह तक प्रतीक्षा की, लेकिन सुबह जब उन्होंने आप (सल्ल॰) की जगह हज़रत अली (रज़ि॰) को घर से निकलते हुए देखा तो वे ग़ुस्से से बेक़ाबू हो गए। उन्होंने हज़रत अली (रज़ि॰) को मारा-पीटा और उनसे हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के बारे में पूछा। लेकिन हज़रत अली (रज़ि॰) से कुछ उगलवा नहीं सके। उन लोगों ने हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के बारे में मालूम किया तो पता चला कि वे भी ग़ायब हैं।

क़ुरैश के सरदारों ने अपना सिर पीट लिया, जब उनको पता चला कि उनकी योजना धरी-की-धरी रह गई और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) कितनी आसानी से उनके चंगुल से निकल गए। उन्होंने अपने लोगों को हर दिशा में दौड़ाया, ताकि आप (सल्ल॰) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) को मदीना पहुँचने से रोकें। उन्होंने यह घोषणा भी कर दी कि जो कोई इन दोनों को ज़िन्दा या मुर्दा लाएगा उसको सौ ऊँट इनाम में दिए जाएँगे।

जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) मक्का से हिजरत की नीयत से बाहर निकल रहे थे तो आप (सल्ल॰) ने जो दुआ की वह अल-सलाबी ने इब्ने कसीर से नक़्ल की है–

"समस्त स्तुति अल्लाह ही के लिए हैं, जिसने मुझे पैदा किया। उसके पैदा करने से पहले मैं कुछ नहीं था। हे अल्लाह! मेरी सहायता कर कि मैं दुनिया क़ी तकलीफ़ से सफलता के साथ निकल जाऊँ। समय की पीड़ा को पीछे छोड़ दूँ और रात और दिन की कठिनाई को सफलता के साथ हरा दूँ। हे अल्लाह! तू मेरी इस पवित्र यात्रा में मेरा साथी बन जा और मेरी अनुपस्थिति में मेरे घरवालों का रखवाला। मेरे ऊपर दया कर, जिस तरह तू पहले भी करता रहा है। मुझे अपने सामने नम्रता से रहनेवाला बना। मेरे व्यवहार और चरित्र को अच्छा और पवित्र बना। मुझे तू अपनी नज़रों में पसंदीदा बना और मुझे लोगों के ऊपर निर्भर न कर।

या अल्लाह! मैं तेरी शरण चाहता हूँ। अपने ग़ुस्से को मुझ पर होने से बचा और अपनी यातना से मुझको सुरक्षित रख। मैं तेरी शरण चाहता हूँ तेरी कृपा की, कि मुझ से छिन न जाए। उस उत्तम स्वास्थ्य की जो तूने मुझे दिया है और तेरी हर तरह की यातना से। यही तेरा हक़ है कि मैं हमेशा तेरी प्रसन्नता का याचक रहूँ। इस हेतु मैं पूरा प्रयत्न करता रहूँगा। तेरे अलावा न तो कोई शक्ति है और न ही सामर्थ्य।" (अल-सलाबी, खण्ड-2, पृष्ठ 656-57)

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह पूरी दुआ, उस व्यक्ति के लिए जो किसी तरह की परेशानी से गुज़र रहा हो बुहत प्रभावशाली और हिम्मत व हौसला देनेवाली है। जब ऐसा लगने लगे कि चारों ओर अंधकार छा रहा है, निराशा दिल व दिमाग़ पर छाने लगे, तो यह दुआ पढ़नी चाहिए। यह नेक और मोमिन बन्दे को हिम्मत व हौसला देती है।

सत्यधर्म पर पूरी तरह चलनेवाला एक अनुभवी व्यक्ति अपनी पूरी कोशिश और शक्ति धर्म के रास्ते में लगा देता है। वह उसमें वे सारे संसाधन भी लगा देता है जो उसकी पहुँच में हों और उसको इस बात का पूरा यक़ीन होता है कि परिस्थितियों पर अल्लाह के सिवा किसी और को कुछ भी सत्ता-प्राप्त नहीं। क़ुरआन में है–

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! अल्लाह से डरो और उस तक पहुँच

बनाने की कोशिश करो और उसके मार्ग में पूरा संघर्ष करो। आशा है कि तुम्हें सफलता प्राप्त हो जाए।"

(क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-35)

"यदि अल्लाह तुम्हें किसी प्रकार का नुक़सान पहुँचाए तो उसके सिवा कोई नहीं जो तुम्हें उस नुक़सान से बचा सके, और अगर वह तुम्हें भलाई पहुँचाना चाहे तो वह हर चीज़ का सामर्थ्य रखता है। वह अपने बन्दों पर पूरा इख़्तियार रखता है, और बुद्धिमान और सब कुछ जाननेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयतें-17, 18)

मक्का छोड़ने के बाद नबी (सल्ल०) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) तुरन्त ही मदीना की ओर रवाना नहीं हुए। इसके विपरीत उसकी उल्टी दिशा में चले और 'सौर' नामक गुफ़ा (ग़ारे-सौर) में कुछ दिनों के लिए छिपे रहे। उनकी योजनानुसार दोनों को उस समय तक उस गुफ़ा (ग़ार) में ठहरना था जब तक कि उस ज़बरदस्त तलाश का दौर समाप्त न हो जाता।

इस बीच अबू-बक्र (रज़ि०) के बेटे अब्दुल्लाह (रज़ि०) दिन में मक्का में रहते और रात को सारी जानकारी नबी (सल्ल०) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) तक पहुँचा देते। वहाँ से वे सवेरा होने से पहले मक्का के लिए वापस हो जाते। आमिर-बिन-फ़ुहैरा (रज़ि०) जो हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) द्वारा आज़ाद किए गए ग़ुलाम थे, अपने रेवड़ के साथ ग़ार के आस-पास ही भेड़-बकरियाँ चराते, जिससे अबू-बक्र (रज़ि०) के बेटे अब्दुल्लाह (रज़ि०) के आने-जाने के क़दमों के निशान मिट जाते। वे नबी (सल्ल०) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) की सेवा में ताज़ा दूध और खाना भी पहुँचाते।

अभी आप दोनों उसी ग़ार में थे कि आप (सल्ल०) को ढूँढ़नेवाली एक टोली सौर की ग़ुफ़ा तक पहुँच गई। वे ग़ुफ़ा के मुख तक पहुँच गए। यदि उन्होंने झाँक कर देखने की कोशिश की होती तो आसानी से उन दोनों आदमियों को देख लेते। हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) इस गरोह को देखकर परेशान हो उठे तो नबी (सल्ल०) ने उनको इत्मीनान दिलाते हुए कहा : "घबराओ नहीं! अल्लाह हमारे साथ है।" क़ुरआन में है—

> "तुमने यदि नबी (सल्ल॰) की सहायता न की तो कुछ परवाह नहीं, अल्लाह उसकी सहायता उस समय कर चुका है जब सत्य के विरोधियों ने उसे निकाल दिया था, जब वह केवल दो में का दूसरा था। जब वे दोनों ग़ार (गुफ़ा) में थे। जब वह अपने साथी से कह रहा था कि "घबराओ नहीं, अल्लाह हमारे साथ है।" उस समय अल्लाह ने उसपर अपनी ओर से दिल का सुकून अवतरित किया और उसकी मदद ऐसे लशकरों से की जो तुमको नज़र न आते थे और सत्य के विरोधियों का बोल नीचा कर दिया और अल्लाह का बोल तो ऊँचा ही है, अल्लाह बहुत प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।" (क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-40)

इस आयत में अल्लाह तआला स्पष्ट रूप में कह रहा है कि केवल वही है जो नबी (सल्ल॰) की सुरक्षा का ज़िम्मेदार है। कोई दूसरा न उसकी सुरक्षा का और न ही उसके आह्वान (सन्देश) का ज़िम्मेदार है और वास्तव में अल्लाह ही उनको उनके दुश्मनों के मुक़ाबले में विजयी बनाएगा। अल्लाह ने ही नबी (सल्ल॰) को उस समय सुरक्षित रखा जब उनकी जान को ज़बरदस्त ख़तरा था। अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के शत्रु उन्हें ढूँढ़ते हुए सौर के ग़ार (गुफ़ा) के दहाने तक पहुँच गए थे। लेकिन उसके बाद भी वे आप (सल्ल॰) को नहीं पकड़ सके।

सौर की गुफ़ा में तीन दिनों तक ठहरने के बाद नबी (सल्ल॰) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) मदीना के लिए चल पड़े। अब्दुल्लाह-बिन-उरैक़त जिसको अबू-बक्र (रज़ि॰) ने एक दूसरे रास्ते से मदीना ले जाने के लिए तय कर रखा था, आया और आप दोनों ने यात्रा शुरू की। अब्दुल्लाह-बिन-उरैक़त अरब के रास्तों को अपने हाथ की लकीरों की तरह जानता था। उसे आप (सल्ल॰) को उस रास्ते से मदीना ले जाना था जो आम रास्ता नहीं था। नबी (सल्ल॰) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) अपने-अपने ऊँटों पर सवार हुए और रवाना हो गए। यह बात विशेष रूप से स्पष्ट रहनी चाहिए कि अब्दुल्लाह-बिन-उरैक़त मुस्लिम नहीं था, लेकिन अपने कार्य में निपुण और विश्वसनीय था। इसलिए उसपर भरोसा किया गया।

विचारणीय बातें

नबी (सल्ल०) की मदीने की ओर हिजरत अल्लाह तआला के आदेश से हुई थी। यह उस ईश्वरीय योजना का एक भाग था जिसे अल्लाह को अपने नबी (सल्ल०) के द्वारा पूरा करना था। क़ुरआन घोषणा करता है—

"ये लोग अपने मुँह की फूंकों से अल्लाह के नूर को बुझाना चाहते हैं और अल्लाह का फ़ैसला यह है कि वह अपने नूर को पूरा फैलाकर रहेगा, चाहे सत्य के इनकारियों को यह कितना भी नागवार है। वही तो है जिसने अपने रसूल (सल्ल०) को हिदायत और सच्चे धर्म के साथ भेजा है। ताकि वह उसे पूरे के पूरे दीन पर प्रभावी कर दे चाहे अनेकेश्वरवादियों को यह कितना ही नागवार हो।"

(क़ुरआन, सूरा-61 सफ़, आयतें-8, 9)

हिजरत की यह पूरी घटना हमें नबी (सल्ल०) के जीवन के बारे में बहुत कुछ बताती है। आप (सल्ल०) ने जिस तरह इस अत्यधिक महत्वपूर्ण और ख़तरनाक यात्रा की योजना बनाई इससे आपके अनुयायियों को मार्गदर्शन मिलता है कि यदि इस प्रकार की परिस्थितियाँ आएँ तो उन्हें किस प्रकार के अग्रिम प्रयास करने चाहिएँ।

1. प्रतिकूल परिस्थितियों में अपनी चेतना को क़ाबू में रखना : सबसे महत्वपूर्ण सीख जो पूरी दुनिया को इससे मिलती है वह यह है कि हर परिस्थिति में अपनी भावनाओं और चेतना को क़ाबू में रखना चाहिए। पूरा क़ुरैश आप (सल्ल०) के ख़िलाफ़ हो गया था और उन्होंने क़ुरैश के माहिर योद्धाओं को आप (सल्ल०) की ताक में बिठा दिया था। इस भयंकर वातावरण में जब आप (सल्ल०) की जान को ज़बरदस्त ख़तरा था, आप (सल्ल०) ने अपने होश और चेतना को क़ाबू में रखा और भय और आतंक को अपने ऊपर प्रभावी नहीं होने दिया। आप (सल्ल०) ने जल्दबाज़ी में कोई भी क़दम नहीं उठाया। आप (सल्ल०) ने न केवल यात्रा की बेहतरीन योजना बनाई, बल्कि उन परिस्थितियों में भी अपने नैतिक कर्त्तव्यों को पूरा करने के बाद ही मदीना का रुख़ किया। आप (सल्ल०) ने हज़रत अली (रज़ि०) को लोगों की अमानतें

वापस करने के लिए रोका और अमानतें वापस करने के बाद ही हज़रत अली (रज़ि॰) मदीना के लिए रवाना हुए।

2. समय से पहले योजना सुनिश्चित करना : अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पवित्र आचरण से यह सिद्ध होता है कि बेहतरीन और समय से पहले योजना बना लेना हर परिस्थिति में अनिवार्य है।

3. शत्रुओं की रणनीति को विफल बना देना : नबी (सल्ल॰) ने भाँप लिया था कि आप (सल्ल॰) की हिजरत की सूचना पाते ही उनके विरोधी क्या क़दम उठाएंगे। आप (सल्ल॰) ने उनकी रणनीति को असफल बनाने की पूरी तैयारी की और अन्ततः उसे असफल बना दिया।

आप (सल्ल॰) ने प्रथमतः मदीने के विपरीत दिशा में अपनी यात्रा का आरम्भ किया और फिर तीन दिनों तक सौर की गुफ़ा में ठहरे। वहाँ से उस समय बाहर निकले जब आप (सल्ल॰) को ऐसा लगने लगा कि अब उनकी खोज उस तीव्रता से जारी नहीं है जैसी पहले थी। फिर आप (सल्ल॰) का आम रास्ते से हटकर यात्रा करना भी उसी बेहतरीन रणनीति का हिस्सा था।

4. छोटी-छोटी बारीकियों पर भी नज़र : आमिर-बिन-फ़ुहैरा (रज़ि॰) को अब्दुल्लाह-बिन-अबू-बक्र (रज़ि॰) के पैरों के निशान मिटाने के लिए बकरियाँ चराने का आदेश हमें भी अपनी कूटनीति को तैयार करते समय छोटी-छोटी बारीकियों पर नज़र रखने की शिक्षा देता है।

5. उपलब्ध सर्वोत्तम संसाधनों का इस्तेमाल : अब्दुल्लाह-बिन-अबू-बक्र (रज़ि॰), आमिर-बिन-फ़ुहैरा (रज़ि॰) और विशेषकर अब्दुल्लाह-बिन-उरैक़त (जो कि एक ग़ैर-मुस्लिम था), का चुनाव हमें काम के हिसाब से बेहतरीन लोगों के चुनाव की शिक्षा देता है।

2:2 मदीना की ओर

"और दुआ करो कि ऐ पालनहार! मुझको जहाँ भी तू ले जा सच्चाई के साथ ले जा और जहाँ से भी निकाल सच्चाई के साथ निकाल और अपनी ओर से एक सत्ता को मेरा मददगार बना दे और ऐलान कर दो कि "सत्य आ गया और असत्य मिट गया, असत्य तो मिटने ही वाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें-80, 81)

समय के साथ क़ुरैश ने धीरे-धीरे स्वीकार करना शुरू कर दिया कि अब इन लोगों को पकड़ा नहीं जा सकता।

तीसरी रात अब्दुल्लाह-बिन-उरैक़त ग़ारे-सौर (गुफा) पहुँचा। वह योजनानुसार दोनों ऊँटों को साथ लाया था। रात में ही मदीना का सफ़र शुरू हुआ। उतनी रात में उस जगह उन लोगों को देखे जाने का कोई सवाल ही नहीं उठता था। आमिर-बिन-फ़ुहैरा (रज़ि॰) दोनों लोगों की सेवा के लिए साथ थे। अब्दुल्लाह-बिन-उरैक़त ने एक ऐसे रास्ते का चुनाव किया जिसको आमतौर पर इस्तेमाल नहीं किया जाता था। यह रास्ता लम्बा था, इसलिए किसी का सामना होने की आशंका बहुत कम थी।

इस यात्रा की सबसे महत्वपूर्ण घटना सुराक़ा-बिन-मालिक-बिन-जाअशम, जो क़बीला बनू-मुदलिज का एक प्रसिद्ध बहादुर व्यक्ति था, की छोटे-से काफ़िले को क़ैदी बनाने की असफल कोशिश थी। सुराक़ा ने इस घटना को स्वयं अपने शब्दों में इस प्रकार उल्लेख किया है—

"क़ुरैश के अनेकेश्वरवादियों का एक संदेशवाहक मेरे पास आया और कहा कि जो कोई मुहम्मद (सल्ल॰) या अबू-बक्र (रज़ि॰) को ज़िन्दा या मुर्दा लाएगा उसे हत्या के अर्थदण्ड के बराबर इनाम दिया जाएगा। मैं क़बीला बनू-मुदलिज की एक महफ़िल में बैठा हुआ था कि एक आदमी आया और

कहा : 'सुराक़ा! मैंने अभी-अभी कुछ लोगों को समुद्र के किनारे जाते हुए देखा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे मुहम्मद (सल्ल॰) और उनके साथी ही हैं।' मुझे लगा कि यह आदमी सच कह रहा है और हो न हो, वे लोग वही होंगे। लेकिन मैंने उसको भटकाने के लिए कहा : 'अरे नहीं! ये मुहम्मद और उनके साथी कभी नहीं हो सकते। ये तो वे लोग हैं जो कुछ देर पहले ही यहाँ से गए हैं।' मैं उस महफ़िल में कुछ देर और बैठा रहा; फिर घर चला आया। मैंने अपनी बांदी से कहा कि वह मेरा घोड़ा लेकर अमुक पहाड़ी के पास आ जाए। मैंने अपना तीर-कमान उठाया और छुपते-छुपाते उस पहाड़ी के पास पहुँचा जहाँ मैंने अपना घोड़ा पहले ही भेज दिया था। मैं अपने घोड़े पर सवार हुआ और उसको एड़ लगाई और वह हवा की तरह दौड़ पड़ा।

जब मैं उनके निकट पहुँचा तो मेरा घोड़ा फिसला और मैं उसपर से गिर गया। मैं फिर दोबारा खड़ा हुआ, घोड़े को तैयार किया और तीर से फ़ाल (शगुन) निकाली कि मैं उन दोनों को नुक़सान पहुँचाऊँ या नहीं; तो वह फ़ाल निकली जिसको मैं नहीं चाहता था। लेकिन इसके बावजूद मैं फिर से घोड़े पर सवार हुआ और उसको दौड़ाया और फ़ाल को कोई महत्व नहीं दिया। उसी समय मैंने नबी (सल्ल॰) से क़ुरआन को पढ़ने की आवाज़ सुनी। वे निश्चिन्त और सधैर्य ऊँट पर बैठे हुए थे और इधर-उधर नहीं देख रहे थे। इसके विपरीत हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) बहुत बेचैन थे और बार-बार इधर-उधर देख रहे थे। इसी बीच मेरे घोड़े के दोनों अगले पाँव रेत में धंस गए और मैं फिर घोड़े से गिर गया। मैंने उसे डाँट लगाई। वह खड़ा हुआ और जब वह दोबारा खड़ा हुआ तो ऐसी धूल निकली मानो वह धुवाँ हो जो आसमान तक पहुँच रहा हो। मैंने फिर फ़ाल निकाली और वही फ़ाल निकली जो मैं नहीं चाहता था। फिर मैंने उन लोगों को आवाज़ दी कि वे सुरक्षित हैं और यह कि मैं उनको नुक़सान नहीं पहुँचाऊँगा। वे रुक गए और मैं घोड़े से उतरकर उनके पास गया। जब मैंने विचार किया कि किस तरह अल्लाह ने मुझे उन लोगों को नुक़सान पहुँचाने से रोक दिया तो मुझे यह विश्वास हो गया कि नबी (सल्ल॰) अन्ततः अपने उद्देश्य में सफल होकर रहेंगे। मैंने निवेदन किया कि आप की क़ौम ने आपके सिर पर इतने इनाम की घोषणा की है जितना

एक आदमी का 'ख़ून बहा' (Blood Money)। फिर मैंने उनको वे तमाम योजनाएँ बताईं जो मक्कावालों ने उन लोगों के ख़िलाफ़ बनाई थीं। फिर मैंने उनको रास्ते में खाने-पीने का कुछ सामान पेश किया, तो उन्होंने उसे स्वीकार करने से मना कर दिया। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने कहा : "हमारे बारे में दूसरों को कुछ भी मत बताना।" फिर मैंने आप (सल्ल॰) से आग्रह किया कि आप मुझे अम्न का परवाना लिख दें। आप (सल्ल॰) ने आमिर-बिन-फ़ुहैरा (रज़ि॰) को आदेश दिया कि वे लिखकर दें और उन्होंने एक छाल पर अम्न का परवाना लिखकर दिया। फिर नबी (सल्ल॰) आगे बढ़ गए।"

(हदीस : बुख़ारी-3906)

यह बात उल्लेखनीय है कि सुराक़ा-बिन-मालिक-बिन-जाअशम पूरे अरब में एक बहादुर और शक्तिशाली योद्धा समझे जाते थे। वे एक मशहूर घुड़सवार भी थे। उन्होंने आप (सल्ल॰) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) को गिरफ़्तार करने के लिए यह क़दम इसलिए उठाया था कि वे उस ज़बरदस्त इनाम को जीत सकें, जिसका क़ुरैश ने ऐलान किया था। किन्तु रास्ते में जो कुछ हुआ उससे उनकी मानसिक स्थिति पूरी तरह बदल गई। जब उनकी वापसी हुई तो वे नबी (सल्ल॰) के प्रशंसक थे। प्रसिद्ध इतिहासकार इब्ने-इसहाक़ (रह॰) लिखते हैं कि उन्होंने अम्न का वह परवाना संभाल कर रखा और हुनैन और ताइफ़ की जंग के बाद इस्लाम स्वीकार कर लिया।

सुराक़ा (रज़ि॰) की इस घटना से हमें यह पता चलता है कि वे लोग जो सच्चे दिल और निष्ठा के साथ अल्लाह की राह में संघर्ष करते हैं, यहाँ तक कि उसकी राह में हिजरत भी करते हैं उनकी सहायता अल्लाह तआला उन संसाधनों से करता है जो मनुष्य के गुमान में भी नहीं होता। लेकिन यह बात उन लोगों को बिलकुल समझ में नहीं आएगी जो केवल दुनिया और दुनिया के संसाधनों को ही सब कुछ समझते हैं।

यह घटना नबी (सल्ल॰) के मज़बूत आचरण, आप (सल्ल॰) का अल्लाह तआला पर दृढ़ विश्वास और मानवीय मानसिकता और मनोविज्ञान के गहरे अध्ययन को स्पष्ट शैली में व्यक्त करती है। आप (सल्ल॰) बिलकुल भी

परेशान नहीं हुए, जब सुराक़ा जो अरब का प्रसिद्ध योद्धा था, अपने घोड़े पर बैठा हुआ सरपट आता हुआ दिखाई दिया। (यहाँ तक कि आप (सल्ल॰) हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) को दिलासा देते रहे)। आप (सल्ल॰) को यह पूर्ण विश्वास था कि अल्लाह तआला उन लोगों को कोई नुक़सान नहीं पहुँचने देगा। उस समय जब सुराक़ा ने अपने आपको अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के सामने पेश किया तो आप (सल्ल॰) ने उसको कोई नुक़सान नहीं पहुँचाया और वापस जाने दिया। आप (सल्ल॰) को पता चल गया था कि यह सुराक़ा अब पुराना सुराक़ा-बिन-मालिक-बिन-जाअशम नहीं रहा।

विचारणीय बातें

(1) हिजरत की घटना में सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि सृष्टि का बनानेवाला जो अपने नबी (सल्ल॰) को रात के एक हिस्से में आसमान की सैर (मेराज) करा चुका था, वह उसको पलक झपकते मदीना भी पहुँचा सकता था। लेकिन अल्लाह तआला इस हिजरत के लिए नबी (सल्ल॰) की रणनीति को क़ियामत तक के लिए आदर्श बनाना चाहता था।

हिजरत का सन्देश उन लोगों के लिए बिलकुल स्पष्ट है जो अल्लाह की राह में संघर्ष करते हैं। **पूरा संघर्ष करो, सभी उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करो, उस नेक उद्देश्य के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दो और अल्लाह पर भरोसा रखो। यदि तुम्हारी कोशिशों और मेहनतों से कोई परिणाम निकले तो उसको अल्लाह का इनाम समझकर स्वीकार करो और अगर ऐसा न हो तो यक़ीन जानो कि अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिए कुछ और अच्छा लिख रखा है।**

(2) क़ुरआन में नबी (सल्ल॰) के लिए जो दुआ इस अवसर पर आई है वह बहुत ही विचारणीय है। क़ुरआन कहता है—

> "और दुआ करो कि ऐ पालनहार! मुझको जहाँ भी तू ले जा तो सच्चाई के साथ ले जा और जहाँ से भी निकाल सच्चाई के साथ निकाल और अपनी ओर से एक सत्ता को मेरा मददगार बना दे और ऐलान कर दो कि सत्य आ गया और असत्य मिट गया।

असत्य तो मिटने ही वाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें-80, 81)

पवित्र क़ुरआन की इन आयतों में (मदीना में) दाख़िल होने को (मक्का से) पलायन पर प्राथमिकता देना बहुत ही महत्वपूर्ण संदेश है। नबी (सल्ल॰) की हिजरत का मौलिक उद्देश्य एक इस्लामी शासन की स्थापना थी। आप का उद्देश्य केवल अपनी जान मदीना पहुँचकर सुरक्षित करना नहीं था। आप (सल्ल॰) की जान तो अल्लाह तआला की अमान में मक्का में भी सुरक्षित थी।

नबी (सल्ल॰) की मक्का से मदीने की ओर हिजरत रहती दुनिया तक आनेवालों को जो सन्देश देती है उसकी कुछ मूलभूत बातें ये हैं :

(1) यदि प्रयास पूरी निष्ठा से हो तो निश्चित रूप से परिणाम देते हैं।

(2) बुरी-से-बुरी परिस्थितियों में भी उम्मीद का दामन नहीं छोड़ना चाहिए। धैर्य और हौसला उन लोगों के विशेष गुण हैं जो अल्लाह की राह में संघर्ष करते हैं।

(3) यदि पहली दो शर्तें पूरी हो रही हों तो अल्लाह पर भरोसा रखो। तुम को उन सूत्रों से मदद मिलेगी जिनके बारे में तुम सोच भी नहीं सकते।

(4) **परिवर्तन उन्नति की बुनियादी शर्त है**। लेकिन परिवर्तन केवल उसी समय फलदायी होता है जब आदर्शों, नैतिक मूल्यों और उसूलों पर आप समझौता न करें।

(5) यदि आप के आस-पास का वातावरण अनुकूल न हो तो अपने को अंदर मत सिकोड़िये। अपनी सारी शक्ति और उपलब्ध साधनों का प्रयोग करके बाहर विस्तरित होने का प्रयास कीजिये। वह सर्वशक्तिमान ईश्वर आप के लिए नई राहें खोल देगा।

अध्याय 3
प्यारे नबी (सल्ल॰) मदीना में

3:1 मदीना में आगमन

अल्लाह के नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के मदीना आगमन को उर्वा-बिन-ज़ुबैर (रज़ि॰) ने निम्नलिखित शब्दों में बयान किया है—

"नबी (सल्ल॰) की मदीना के रास्ते में उन मुस्लिम व्यापारियों से भेंट हुई जो सीरिया से एक काफ़िले के साथ वापस आ रहे थे। ज़ुबैर-बिन-अल-अव्वाम (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) और हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) की सेवा में पहनने के लिए सफेद कपड़े पेश किए। जब मदीना में मुस्लिमों ने नबी (सल्ल॰) के मक्का से मदीना आने की ख़बर सुनी तो वे लोग मदीना से बाहर हुर्रा नामक स्थान पर आकर प्रतिदिन नबी (सल्ल॰) के आने की प्रतीक्षा करते और शाम में सूर्यास्त के बाद ही वापस जाते। एक दिन बहुत देर इन्तिज़ार करने के बाद जब वे लोग अपने घर वापस लौट गए तो एक यहूदी जो एक क़िले की दीवार पर चढ़कर कुछ ढूँढ़ रहा था। उसकी नज़र नबी (सल्ल॰) पर पड़ी, जो अपने साथियों के साथ मदीना में दाख़िल होने वाले थे। वह यहूदी अपने ऊपर क़ाबू नहीं रख सका और तेज़ स्वर में बोला : "ऐ अरब के लोगो! वह महान व्यक्ति आ गया जिसकी तुम प्रतीक्षा कर रहे थे।" सभी मुहाजिरीन और अनसार नबी (सल्ल॰) का स्वागत करने के लिए हुर्रा की ओर दौड़ पड़े। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उन लोगों के साथ मदीना में प्रवेश किया और बनी अम्र-बिन-औफ़ के डेरे में उतरे।

यह रबीउल-अव्वल के महीने की घटना है। हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) खड़े हो गए और लोगों का स्वागत करने लगे। जबकि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) चुप-चाप बैठे रहे। अनसार के कुछ लोग जो नबी (सल्ल॰) को नहीं पहचानते थे, वे हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) को ही मुहम्मद (सल्ल॰) यानी नबी (सल्ल॰) समझने लगे। लेकिन बाद में धूप की तीव्रता से बचाने के लिए जब हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) के ऊपर अपनी चादर से छाया

किया, तब लोगों को पता चला कि नबी (सल्ल॰) कौन हैं?

नबी (सल्ल॰) वहाँ दस दिनों तक ठहरे। उसी अवधि में क़ुबा की मस्जिद की बुनियाद डाली, जिसकी बुनियाद ईशपरायणता और ईशभय पर डाली गई थी। नबी (सल्ल॰) ने वहाँ नमाज़ अदा की, फिर अपने ऊँट पर बैठकर आगे बढ़े। मदीना में आप (सल्ल॰) की ऊँटनी उस जगह बैठ गई जिसको आज हम मस्जिदे-नबवी के नाम से जानते हैं। उस समय भी उस जगह पर कुछ लोग नमाज़ अदा करते थे। यह जगह दो अनाथ बच्चों, सुहैल (रज़ि॰) और सह्ल (रज़ि॰), की सम्पत्ति थी, जिसमें खजूर सुखाए जाते थे। ये दोनों बच्चे असअद-बिन-ज़ुरारा (रज़ि॰) की निगरानी में थे।

जब नबी (सल्ल॰) की ऊँटनी वहाँ रुकी तो नबी (सल्ल॰) ने कहा : "यह स्थान, अल्लाह ने चाहा, तो हमारा केन्द्र (मर्कज़) होगा।"

आप (सल्ल॰) ने दोनों लड़कों को बुलाया और उनसे उस ज़मीन की क़ीमत मालूम की, ताकि वहाँ पर आप (सल्ल॰) मस्जिद का निर्माण कर सकें। दोनों बच्चों ने कहा : "ऐ अल्लाह के रसूल! हम इसकी क़ीमत नहीं लेंगे। यह तोहफ़ा है हमारी तरफ़ से।" लेकिन नबी (सल्ल॰) ने उनका तोहफ़ा स्वीकार नहीं किया। बल्कि उस भूमि की क़ीमत अदा की और उसके बाद नबी (सल्ल॰) ने उस जगह पर मस्जिद बनाने का आदेश दिया।

आप (सल्ल॰) भी पत्थर ढो-ढोकर मस्जिदे-नबवी के निर्माण के लिए जाते और कहते जाते : "यह बोझ ख़ैबर के बोझ से बेहतर है, क्योंकि यह अल्लाह की दृष्टि में पवित्र एवं स्वीकार प्राप्त है और इसका अच्छा इनाम मिलेगा।" आप (सल्ल॰) यह भी कह रहे थे : "ऐ अल्लाह! अस्ल अज्र (बदला) तो आख़िरत (परलोक) का अज्र है। अपनी कृपा और करुणा अनसार और हिजरत करके आनेवालों पर अवतरित कर।" (हदीस : बुख़ारी-3906)

3:2 इस्लामी रियासत की स्थापना

इससे पहले कि हम नबी (सल्ल॰) के मदीने की ज़िन्दगी के बारे में बात करें, हमें मदीना की भौगोलिक स्थिति, वहाँ के रहनेवाले लोग, सामाजिक वातावरण और आर्थिक स्थिति के बारे में भी थोड़ी जानकारी हो जानी चाहिए।

मदीना अरब द्वीप के पश्चिमी भाग में लाल सागर से लगभग 150 कि॰मी॰ की दूरी पर स्थित है। यह मक्का से लगभग 420 कि॰मी॰ दूर और समुद्र तल से 600 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यह अरब की मशहूर उर्वर भूमि (Fertile Land) है। मदीना तीन तरफ़ से पहाड़ियों से घिरा हुआ है। पूर्व में कुछ दूरी पर उहुद का पहाड़ है। मदीना के चारों ओर खजूर के घने बाग़ थे जो आज भी मौजूद हैं। मदीना की अर्थ-व्यवस्था खेती-बाड़ी पर निर्भर थी और खजूर यहाँ की प्रमुख पैदावार थी।

इस्लाम के आने से पहले मदीना में दो अलग-अलग संप्रदाय आबाद थे। मदीना के मूल अरब निवासी जो शहर के अन्दर आबाद थे, उनकी धार्मिक धारणा मक्का के वासियों की ही तरह अनेकेश्वरवादी धारणा थी। दूसरी क़ौम जो मदीना में निवास करती थी वह यहूदी क़ौम थी। ये वे लोग थे जो दूसरे देशों में ईसाई शासकों के अत्याचार से तंग आकर मदीना में आ बसे थे। इन लोगों ने मदीना के आस-पास बड़े-बड़े क़िलों का निर्माण किया था। वैसे तो मदीना में यहूदियों के एक दर्जन से अधिक क़बीले आबाद थे, लेकिन तीन बड़े और जाने-पहचाने क़बीले बनू-क़ैनुक़ा, बनू-नज़ीर, और बनू-क़ुरैज़ा थे। उन्होंने एक लम्बी अवधि तक उस इलाक़े में रहने के कारण इलाक़े का रहन-सहन और चाल-ढाल अपना ली थी और अरबी भाषा को भी अपना लिया था। वे लोग वहाँ की स्थानीय संस्कृति में इस प्रकार घुल-मिल गए थे कि नाम भी अरबों की भाँति ही रखने लगे थे। उनका प्रमुख कारोबार व्यापार और ब्याज पर लोगों को क़र्ज़ देना था।

स्थानीय अरब दो बड़े क़बीलों औस और ख़ज़रज में बँटे हुए थे। संख्या में ख़ज़रज ज़्यादा थे, लेकिन औस युद्ध-कला में माहिर थे और अपनी बहादुरी और साहस के लिए जाने जाते थे। ये दोनों क़बीले आपस में हमेशा लड़ते-झगड़ते रहते थे। उन दोनों के बीच युद्ध का एक पुराना इतिहास था। मामूली-मामूली बातों पर लड़ाई शुरू हो जाती और फिर वर्षों चलती रहती। यहूदी क़बीले इन लड़ाइयों में भाग लेते, लेकिन उनकी इन लड़ाइयों से बहुत बड़ा आर्थिक हित भी जुड़ा हुआ था। ये अपने सहयोगियों को ऊँची दर पर ब्याज देते और लम्बा युद्ध उनके लिए बेहतरीन आर्थिक साधन था। इसी कारण पूँजीपति यहूदी अक्सर ऐसा वातावरण तैयार करते जिससे युद्ध की आग भड़क उठे और जब कभी उनके षड्यंत्र से पर्दा उठता तो वे अरबों को यह कहकर डराते और धमकाते कि अगले नबी के आने का समय क़रीब है और जैसे ही वह नबी सामने आएगा तो यहूदी पूरे अरब पर छा जाएँगे।

उक़बा की पहली बैअत से पहले औस और ख़ज़रज क़बीले एक लम्बी अवधि तक बुआस की जंग में उलझे हुए थे। यद्यपि औस किसी तरह जंग जीत गए थे, लेकिन दोनों पक्षों को बहुत अधिक जन एवं धन का नुक़सान उठाना पड़ा था। अन्ततः विवेक से काम लेते हुए दोनों पक्षों ने सुलह कर ली। कुछ दिनों के बाद दोनों क़बीलों ने मिल-जुलकर अब्दुल्लाह-बिन-उबई-बिन-सलूल, जो ख़ज़रज क़बीले से सम्बन्ध रखता था, को अपना सरदार मान लिया। लेकिन इससे पहले कि इस सन्धि पर अंतिम हस्ताक्षर होता, नबी (सल्ल०) मदीना तशरीफ़ ले आए। इस तरह अब्दुल्लाह-बिन-उबई-बिन-सलूल को मदीने का सरदार बनाने का मामला टल गया।

नबी (सल्ल०) जब मदीना पहुँचे उस समय वहाँ निम्नलिखित धार्मिक संप्रदाय थे—

1. **मुसलमान :** उनमें मदीना के दोनों क़बीले औस और ख़ज़रज के लोग और मुहाजिरीन (पलायन करके आनेवाले) सम्मिलित थे।
2. **अनेकेश्वरवादी :** औस और ख़ज़रज के अधिकांश लोग अभी भी अनेकेश्वरवादी थे।

3. **यहूदी :** इनके तीन प्रमुख समुदाय थे, जिनका उल्लेख पहले भी किया जा चुका है।

लेकिन नबी (सल्ल॰) के आगमन के बाद एक चौथा गुट भी सामने आने लगा। अब्दुल्लाह-बिन-उबई के नेतृत्व में मुनाफ़िकों (पाखंडियों) का गरोह जो ऐसे स्थानीय वासियों से बना था जो इस्लाम में केवल इसलिए प्रवेश करते थे, क्योंकि वह एक नई उभरती हुई ताक़त थी, लेकिन मन से वे इसके दुश्मन थे।

अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने मदीना पहुँचने के बाद जो क़दम उठाए उनसे स्पष्ट होता है कि आप (सल्ल॰) एक ऐसा कल्याणकारी राज्य (Welfare State) और शांतिपूर्ण समाज बनाना चाह रहे थे जहाँ एक तरफ़ मुसलमान चैन की सांस ले सकें और दूसरी ओर समाज का हर वर्ग चाहे कोई भी धार्मिक धारणा रखता हो, अपने आप को पूरी तरह सुरक्षित समझने के साथ-साथ अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों से भलीभाँति परिचित हो। ये कार्रवाइयाँ नबी (सल्ल॰) के अल्लाह के सन्देशवाहक (पैग़म्बर) की हैसियत से आप (सल्ल॰) पर आनेवाली ज़िम्मेदारियों के प्रति गंभीरता को भी दर्शाती हैं। आप (सल्ल॰) के ज़रिए से उठाए गए महत्वपूर्ण क़दम ये हैं–

1. मस्जिद का निर्माण।
2. अनसार और मुहाजिरीन के बीच भाईचारगी की स्थापना।
3. मदीना के राज्य के लिए क़ानून बनाना।
4. अरब के लगभग सभी महत्वपूर्ण क़बीलों में इस्लाम की ओर बुलाने के लिए प्रतिनिधिमंडल भेजना।
5. सूचना के आदान-प्रदान के लिए एक ऐसी व्यवस्था क़ायम करना जिससे क़ुरैश की सारी गतिविधियों की सूचना आप (सल्ल॰) को समय पर मिलती रहे। इन सूचनाओं के बिना क़ुरैश और उनके समर्थकों की कार्यवाइयों के उत्तर में समय पर तैयारी करना और उनके षड्यंत्रों को असफल बनाना लगभग असम्भव था।

मस्जिदे-नबवी का निर्माण

जब पैग़म्बर (सल्ल॰) मदीना पधारे उस समय मदीने का प्रत्येक ख़ानदान और हर क़बीला यह चाहता था कि आप (सल्ल॰) उनके मेहमान बनें और यह सम्मान उन्हें प्राप्त हो। अन्ततः यह सम्मान हज़रत अबू-अय्यूब अनसारी (रज़ि॰) को प्राप्त हुआ। अबू-अय्यूब अनसारी (रज़ि॰) का सम्बन्ध क़बीला बनू-नज्जार से था। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की नानी सलमा-बिन्त-अम्र उसी क़बीले से थीं।

जिस जगह नबी (सल्ल॰) की ऊँटनी रुकी और आप (सल्ल॰) मदीना आने के बाद उतरे, वह जगह दो यतीम बच्चों, सहल और सुहैल (रज़ि॰) की थी। आप (सल्ल॰) ने मस्जिदे-नबवी के निर्माण के लिए उसी जगह का चयन किया।

जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है, दोनों यतीम भाइयों ने आग्रह किया कि नबी (सल्ल॰) उस भूमि को तोहफ़े के रूप में समझकर स्वीकार कर लें, लेकिन आप (सल्ल॰) इसके लिए तैयार नहीं हुए और आख़िरकार उन दोनों नेक बच्चों को उस भूमि की क़ीमत लेनी पड़ी।

उसके बाद मस्जिद के निर्माण का काम आरम्भ हुआ। नबी (सल्ल॰) न केवल मस्जिद के निर्माण की योजना में सम्मिलित रहे, बल्कि आप (सल्ल॰) ने मस्जिद के निर्माण-कार्य में भी भाग लिया। मस्जिद उत्तर से दक्षिण की ओर 35 मीटर लम्बी और पूरब से पश्चिम की ओर 30 मीटर चौड़ी थी। इसकी नींव 1.5 मीटर गहरी थी, जो उस समय के निर्माण की दृष्टि से पत्थरों से बनाई गई। खजूर के पेड़ों के तनों को खम्बों (सतूनों) की जगह इस्तेमाल किया गया और छत के लिए ख़जूर की टहनियाँ इस्तेमाल की गईं। दीवारें कच्ची ईटों की थी। मस्जिद में तीन तरफ़ बरामदे थे और प्रत्येक बरामदा 6 सतूनों पर टिका हुआ था। छत लगभग 1.75 मीटर ऊँची थी और चहारदीवारी की ऊँचाई 3.5 मीटर रखी गई।

मस्जिद में दाख़िल होने के लिए तीन दरवाज़े थे। दो दरवाज़े पूरब की ओर और एक दक्षिण की ओर था। जब मस्जिद का निर्माण-कार्य पूरा हो

गया तो बराबर में दो कमरे भी बनाए गए, जो हज़रत सौदा (रज़ि॰) और हज़रत आइशा (रज़ि॰) के रहने के लिए ख़ास कर दिए गए थे। ये कमरे 4×4 = 16 वर्ग मीटर के थे और उनके निर्माण में भी वही सामान इस्तेमाल किया गया था जो मस्जिदे-नबवी के निर्माण में किया गया था। दोनों कमरों के आगे एक छोटा-सा आँगन भी था। प्रवेश द्वार चौड़ाई में आधा मीटर और ऊँचाई में 1.5 मीटर था जिन पर काले ऊँटों की खाल के परदे थे। ये दरवाज़े मस्जिदे-नबवी में खुलते थे। ये कमरे कहाँ पर थे, इसका अनुमान लगाना हो तो आपको ज्ञात हो कि हज़रत आइशा (रज़ि॰) के कमरे में नबी (सल्ल॰) की पवित्र क़ब्र है। आप (सल्ल॰) के बराबर में हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) दफ़्न हैं। हज़रत आइशा (रज़ि॰) चाहती थीं कि शेष जगह अपनी क़ब्र के लिए ख़ास कर लें। लेकिन जब हज़रत उमर (रज़ि॰) ने अपनी मृत्यु के वक़्त वहाँ दफ़नाए जाने की दरख़ास्त की तो हज़रत आइशा (रज़ि॰) ने इसकी इजाज़त दे दी। उसके बाद हज़रत आइशा (रज़ि॰) के लिए वहाँ जगह नहीं बची।

मस्जिद के दक्षिण में सुफ़्फ़ा का चबूतरा था। उसके ऊपर एक सायबान पड़ा हुआ था, जिसके नीचे ऐसे ग़रीब मुहाजिर रहते थे जिनके पास न तो जगह थी और न ही मकान बनाने के लिए राशि। ये लोग नबी (सल्ल॰) और स्थानीय मुसलमानों पर पूरी तरह निर्भर थे। इन लोगों को असहाबे-सुफ़्फ़ा कहा जाता था। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पाक सहाबी जो उस चबूतरे पर रहते थे वे अपना सारा समय इस्लाम और क़ुरआन की शिक्षाओं को हासिल करने के लिए ख़र्च करते थे और उनकी निगरानी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) स्वयं किया करते थे। जब भी किसी क़बीले से इस्लाम सिखाने के लिए व्यक्ति भेजने की मांग आती तो असहाबे-सुफ़्फ़ा में से कुछ लोगों का एक दल बनाकर आप (सल्ल॰) उस क़बीले में भेजते। उन लोगों में सबसे ज़्यादा मशहूर सहाबी हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) गुज़रे हैं और उन्हीं से सबसे ज़्यादा हदीसें बयान हुई हैं।

मस्जिद को केवल पाँच वक़्त की नमाज़ के लिए ही इस्तेमाल नहीं किया जाता था बल्कि यह उस उभरते हुए मुस्लिम समाज का सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र था। यह पाँचों वक़्त की सामूहिक (इज्तिमाई) नमाज़ के अलावा नबी

(सल्ल॰) का परामर्श केन्द्र भी था जहाँ नबी (सल्ल॰) अपने अहम साथियों से मुसलमानों की समस्याओं के सिलसिले में परामर्श किया करते थे। यहीं बैठकर नबी (सल्ल॰) महत्वपूर्ण योजनाएँ बनाते, तक़रीरें करते। उसी जगह पर विभिन्न क़बीलों के प्रतिनिधिमंडल आप (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित होते और उस नई रियासत के प्रमुख की हैसियत से आप (सल्ल॰) विदेश से प्रतिनिधिमंडलों से भेंट करते थे। बाहर से आने वाले विभिन्न लोग उसी जगह ठहरते थे। युद्ध में घायल होनेवाले मुसलमानों का इलाज भी उसी मस्जिद के एक हिस्से में होता और युद्ध में पकड़े गए क़ैदियों को भी उसी जगह रखा जाता।

अनसार और मुहाजिरीन में भाईचारा

पूरे अरब महाद्वीप से मुस्लिम मुहाजिरीन हिजरत करके मदीना आ रहे थे। उनमें अधिसंख्या मक्का से आए हुए मुस्लिमों की थी। इससे मदीना के सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे का प्रभावित होना स्वभाविक था। लगभग सभी मुहाजिर अपने-अपने घरों से यहाँ ख़ाली हाथ पहुँचे थे। वे अपने जीवन-संसाधन एवं धन-संपत्ति, रिश्ते-नाते, भाइयों और बहुत-से लोग तो अपनी पत्नी और बच्चे भी धर्म पर क़ुरबान करके आए थे। उन मुहाजिर लोगों की निम्नलिखित ज़रूरतें थीं—

(1) तत्काल आर्थिक सहायता और आमदनी का स्थाई स्रोत।

(2) भावनात्मक सहयोग जिससे वे अपने परिवार और रिश्तेदारों की जुदाई का एहसास कम कर सकें।

(3) मदीना के सामाजिक वातावरण की समझ।

मदीना के लोगों को भी निम्नलिखित समस्याओं का सामना था—

(1) बाहर से इतनी बड़ी संख्या में आए हुए लोगों के कारण मदीना की अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव।

(2) मदीना के सामाजिक ताने-बाने और रहन-सहन पर इन विभिन्न सामाजिक वर्गों से आनेवालों का प्रतिकूल प्रभाव।

नबी (सल्ल॰) इन समस्याओं से पूर्ण रूप से अवगत थे। आप (सल्ल॰)

ने इन समस्याओं के समाधान के लिए एक शानदार हल निकाला। आप (सल्ल॰) ने एक मुहाजिर और एक अनसार के बीच भाईचारा स्थापित किया। आप (सल्ल॰) ने सारे मुहाजिरों और अनसार को हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) के घर बुलाया और उन लोगों का आपस में एक-दूसरे के बीच भाई-भाई का ताल्लुक़ क़ायम कर दिया। इस भाईचारे के तहत एक अनसारी अपने एक मुहाजिर भाई का ध्यान रखने एवं समस्याओं के हल करने का उत्तरदायी था।

इस विवेकशील योजना से आप (सल्ल॰) ने निम्नलिखित नतीजे हासिल किए—

(1) 'बोझ' अब एक 'ज़िम्मेदारी' बन गया और 'पराया' अब परिवार का एक सदस्य बन गया। इस उत्तरदायित्व को जिस खुले दिल और प्रेम से अनसार ने निभाया, पूरे मानव-इतिहास में उसका कोई दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। बहुत-से अनसार मुसलमानों ने तो अपनी जायदाद के दो हिस्से किए और एक हिस्सा मुहाजिर भाई के सामने रख दिया; लेकिन मुहाजिर भाई ने उसको स्वीकार करने से इनकार कर दिया।

(2) मुहाजिर भाई के लिए आर्थिक सहायता से अधिक भावनात्मक लगाव एवं मानसिक सहारे की आवश्यकता थी और उन परिस्थितियों में अनसार के इस व्यवहार ने उनको ज़बरदस्त हौसला और ढारस दिया। बान्धुत्व स्थापित होने के बाद वे अब अपरिचित लोगों के बीच नहीं, बल्कि भाइयों के बीच थे। अब उनके पास ऐसे मित्र और दोस्त मौजूद थे, जिनसे वे किसी भी मामले में न केवल सम्पर्क कर सकते थे, बल्कि उन्हें विश्वास था कि उनकी सहायता और सहयोग अवश्य किया जाएगा।

(3) सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि भाईचारे के इस क़दम ने उस क़बायली सोच को समाप्त कर दिया जो अरब समाज की घुट्टी में पड़ी थी और अब समान विचारधारा के आधार पर समाज के गठन का आरंभ हो गया। यह वह समाज था जिसकी नीव अल्लाह पर पूर्ण विश्वास और मानवीय बराबरी पर क़ायम थी।

यह पहला ऐसा समाज था जिसकी बुनियाद रंग और नस्ल पर नहीं थी। यहाँ अफ़्रीक़ा से आया हुआ एक काला मुसलमान अरब के कुलीन घरानों के सदस्यों के बराबर समझा जाता था और उसे भी वही मान-सम्मान प्राप्त था जो यहाँ के बड़े और उच्च क़बीले के लोगों को प्राप्त था। इस समाज को खोखली बुनियादों या केवल भावनात्मक नारों पर क़ायम नहीं किया गया था, बल्कि यह क़ुरआन की आसमानी शिक्षाओं पर आधारित था। क़ुरआन उद्‌घोषित करता है—

> "लोगो! हमने तुमको एक पुरुष एवं स्त्री से पैदा किया और फिर तुम्हारे वर्ग और समाज बना दिए, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह की दृष्टि में तुम में सबसे अधिक सम्माननीय एवं प्रतिष्ठित वह है जो तुम्हारे अन्दर सबसे अधिक ईशपरायण है। निस्संदेह अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और सर्वज्ञ है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-49 हुजुरात, आयत-13)

इस बात को यहाँ स्पष्ट कर देना अनिवार्य प्रतीत होता है कि 'भाईचारा' और 'सुफ़्फ़ा' दोनों ऐसे क़दम थे जिनसे हमें अन्दाज़ा हो सकता है कि कमज़ोरियों को शक्ति में कैसे बदला जा सकता है।

संविधान का गठन

मदीना आने के बाद एक और महत्वपूर्ण क़दम जो नबी (सल्ल॰) ने उठाया वह मदीना की सुरक्षा, नागरिकों के अधिकारों को सुनिश्चित करना और मदीना की प्रशासनिक व्यवस्था के लिए मौलिक क़ानून बनाना था। एक लिखित विधान बनाया गया, जिसमें मदीना में मौजूद अनेकेश्वरवादी क़बीलों, यहूदी क़बीलों और मुसलमानों को शामिल किया गया। यह लिखित संविधान समस्त वर्गों के शान्तिपूर्ण स्थायित्व की ज़मानत देता था। प्रत्येक गिरोह की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहचान को बरक़रार रखता था और धार्मिक स्वतन्त्रता को विश्वसनीय बनाता था।

इस संविधान ने मदीना के हर नागरिक के मूल अधिकारों को यक़ीनी बनाया और उनके अधिकारों और ज़िम्मेदारियों को सुनिश्चित किया।

इस संविधान की महत्वपूर्ण धाराओं का डॉक्टर मेंहदी रिज़्कुल्लाह ने कुछ इस तरह उल्लेख किया है—

(अ) मुसलमानों से सम्बन्धित धाराएँ

(1) क़ुरैश और मदीना के मुसलमान अब एक क़ौम हैं। ऐसे दूसरे सारे लोग जो इस धर्म को स्वीकार करेंगे, वे भी इसी क़ौम के सदस्य समझे जाएँगे।

(2) मुसलमानों के समस्त वर्ग उन सभी सिद्धान्तों एवं नियमों का पालन करेंगे, जो अरब के क़बीले अब तक करते रहे हैं। ख़ूँबहा (Blood Money) अदा करना और क़ैदियों को छुड़ाने के लिए राशि उसी तरह देंगे जिस तरह इससे पहले देते रहे हैं। वे नेकी और इनसाफ़ का दामन थामे रहेंगे। मुस्लिम लोग किसी बहुसंतानवाले ग़रीब व्यक्ति को ख़ूँबहा आदि के विषय में निस्सहाय नहीं छोड़ेंगे।

(3) मुसलमान किसी भी ज़ुल्म-व-ज़्यादती के ख़िलाफ़ एक-दूसरे की मदद करेंगे। यद्यपि ज़ालिम उनका सगा बेटा ही क्यों न हो।

(4) अल्लाह की ज़मानत समस्त लोगों के लिए है। ग़रीब-से-ग़रीब और निम्न-से-निम्न भी अगर ज़मानत देगा, तो वह सभी की ओर से होगी।

(5) यहूदियों में से जो भी मुसलमानों के साथ आएगा, उसे उनकी मदद और सुरक्षा मिलेगी। उन पर ज़ुल्म नहीं किया जाएगा और उनपर हमले की स्थिति में हमलावरों की कोई मदद नहीं की जाएगी।

(ब) अनेकेश्वरवादियों से सम्बन्धित धाराएँ

(1) मदीना का अनेकेश्वरवादी व्यक्ति क़ुरैश के किसी व्यक्ति की जान या उसके माल की ज़मानत नहीं लेगा और न ही वह मुसलमानों के मुक़ाबले में उनकी मदद करेगा।

(2) यदि क़ुरैश के लोग और उनके सहयोगी अम्न चाहेंगे तो उनको दिया जाएगा, सिवाए उन लोगों के जो मुसलमानों पर आक्रमण करें या ज़ुल्म करें।

(स) यहूदियों से सम्बन्धित धाराएँ

(1) यहूदी जंगों में मुसलमानों की आर्थिक सहायता करेंगे, यदि उनका सामना अनेकेश्वरवादियों से होगा।

(2) बनी-औफ़ के यहूदी और मुसलमान एक वर्ग के हैं, सिवाए इसके कि यहूदी अपने धर्म पर अमल करते रहेंगे। दूसरे यहूदी क़बीले जैसे बनू-नज्जार और बनू-हारिस, वे भी बनू-औफ़ के समान हैं। यहूदियों के समर्थकों को भी यहूदियों के समान माना जाएगा।

(3) यहूदी क़बीलों की ओर से कोई जंग उस समय तक शुरू नहीं की जाएगी जब तक कि नबी (सल्ल०) की अनुमति प्राप्त न हो जाए।

(4) यहूदी अपनी जंगों पर ख़र्च के खुद उत्तरदायी होंगे और मुसलमान अपनी जंगों के। वे एक-दूसरे की उस वक़्त मदद करेंगे और जंगी सहयोग देंगे जब उस समझौते के अनुसार समर्थकों पर दुश्मन की ओर से हमला हो। एक-दूसरे की सहायता अत्यन्त गम्भीरता और ईमानदारी से की जाएगी। उत्पीड़ित की मदद के लिए तमाम सहयोगी सामने आएँगे।

(द) सामान्य विषयों से सम्बन्धित धाराएँ

(1) मदीना शहर लड़ाई-झगड़े से पाक (मुक्त) रहेगा। एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी का उसी प्रकार ध्यान रखेगा जिस तरह वह अपने घरवालों का ध्यान रखता है। उसे किसी तरह का कोई नुक़सान पड़ोसी नहीं पहुँचा सकता, जब तक कि उसपर ज़ुल्म न हुआ हो। कोई भी व्यक्ति क्षेत्रीय लोगों की अनुमति के बिना किसी को पनाह नहीं दे सकता।

(2) यदि दो पक्षों के बीच किसी भी तरह का मतभेद हो तो उसका फ़ैसला नबी (सल्ल०) करेंगे। सभी पक्ष फ़ैसले के लिए नबी (सल्ल०) पर भरोसा करेंगे।

(3) क़ुरैश और उनके समर्थकों को मदीना में कोई पनाह नहीं देगा।

(4) जिन लोगों ने इस सन्धि पर हस्ताक्षर किए हैं वे बाहरी हमले की स्थिति में मदीना में रहनेवाले दूसरे वर्गों की मदद करेंगे।

(5) हर आदमी सुरक्षित है चाहे वह घर के अन्दर हो या घर के बाहर, सिवाए उसके जो किसी पर अत्याचार करे। अल्लाह से डरनेवालों और परहेज़गार लोगों के अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) सहायक एवं समर्थक हैं।

(डॉ॰ मेहदी रिज़्क़ुल्लाह, खण्ड-1, पृष्ठ 353-355)

मुहम्मद (सल्ल॰) को दुनिया के महत्वपूर्ण मार्गदर्शकों में कई कारणों से विशिष्टता प्राप्त है। आप (सल्ल॰) ने समाज की बुनियाद उस विचारधारा के आधार पर डाली जिसको आप (सल्ल॰) ने दुनिया के सामने पेश किया था। यह एक कल्याणकारी रियासत थी, जिसमें शासनव्यवस्था ईश्वरीय आदेशों के अनुसार चलती थी। आप (सल्ल॰) की यह विशेषता समस्त नबियों और रसूलों के पवित्र जनसमूहों में भी बरक़रार है। हैकल सीरत की अपनी मशहूर किताब में लिखते हैं—

"मेरी दृष्टि में यह सन्धि इतिहास की उन महत्वपूर्ण सन्धियों में से एक है जो मानव-इतिहास का हिस्सा हैं। पैग़म्बरी के उस शुरुआती दौर में यह सन्धि नबी (सल्ल॰) की एक बहुत ही महत्वपूर्ण सफलता है। हज़रत मूसा (अलैहि॰) और दूसरे नबी (अलैहि॰) अपनी शिक्षाओं को पेश करने और अपने चमत्कारों को दिखाने से आगे नहीं जा सके। उन तमाम नबियों की शिक्षाओं को उनके बाद आने वाले लोगों ने अपनाया और फ़ैलाया। ये बाद में आनेवाले लोग थे जिन्होंने उनकी शिक्षाओं को लागू किया। उनके लिए युद्ध किए और अपनी शक्तियों को उन शिक्षाओं को आगे बढ़ने में और उनको दुनिया में फैलाने के लिए इस्तेमाल किया। सफलता हासिल करने के लिए उन लोगों ने स्वतन्त्रता के साथ हथियारों को भी इस्तेमाल किया। ईसाइयत, हज़रत ईसा (अलैहि॰) के शागिर्दों ने फैलाई, लेकिन शुरू में इसकी लोकप्रियता बहुत धीरे-धीरे बढ़ी। उनके शिष्यों, और माननेवालों को ज़बरदस्त ज़ुल्म-व-सितम का सामना करना पड़ा। यहाँ तक कि दुनिया के एक बड़े बादशाह ने मदद करने का फ़ैसला किया और उसने अपनी पूरी शक्ति उस धर्म के प्रचार-प्रसार में झोंक दी। पूरब और पश्चिम के दूसरे तमाम धर्मों का लगभग

मिलता-जुलता इतिहास है।

लेकिन अल्लाह का यह फ़ैसला था कि इस्लाम मुहम्मद (सल्ल॰) के हाथों फैलेगा और सत्य उनके सामने ही मिथ्या पर प्रभावी एवं विजित होगा। अल्लाह ने चाहा कि मुहम्मद (सल्ल॰) एक रसूल, एक सन्देशवाहक, एक प्रशासक, एक फ़ौजी, एक विजयता, सबकी सूरत में सामने आएँ और अल्लाह के लिए वह काम करें जिसके लिए अल्लाह ने उनको चुना। उन तमाम परिस्थितियों में मुहम्मद (सल्ल॰) ने दुनिया के सामने एक उदाहरण पेश किया था। आप (सल्ल॰) सम्पूर्ण मानवता का बेहतरीन आदर्श थे।"

(हैकल 2004, पृष्ठ 179-180)

धर्म-प्रचारक प्रतिनिधिमण्डल

जब यह समझौता और सन्धि पूर्ण हो गई और अम्न व अमान क़ायम कर दिया गया तो सत्य की ओर बुलाने (दावत) का काम पूरे ज़ोर व शोर से शुरू कर दिया गया। नबी (सल्ल॰) ने सत्य की ओर बुलाने एवं सत्य-संदेश को पहुँचानेवाले प्रतिनिधिमंडलों को अपनी इच्छा और विवेक और विभिन्न क़बीलों के आग्रह पर भेजने शुरू किए।

सूचना-तंत्र व्यवस्था

नबी (सल्ल॰) को मालूम था कि मक्का के अनेकेश्वरवादी शत्रु चैन से बैठनेवाले नहीं हैं और वे मदीना को नुक़सान पहुँचाने की हर सम्भव कोशिश करेंगे। आप (सल्ल॰) ने इस सम्बन्ध में कई क़दम उठाए। जासूसी मिशन पर लोगों को भेजना शुरू किया, ताकि क़ुरैश की गतिविधियों से बाख़बर रहा जा सके और उनको नाकाम बनाया जा सके। इसके निम्नलिखित उद्देश्य थे—

(1) मुहाजिरीन (शरणार्थियों) को मदीना और उसके आस-पास के इलाक़ों से परिचित कराना।

(2) एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करना जिससे सूचनाएँ एकत्रित की जा सकें

और क़ुरैश की प्रत्येक चाल से अवगत रहा जा सके। इससे क़ुरैश और उसके सहयोगी क़बीलों के मुक़ाबले में तैयार रहने और उनका सामना करने में मदद मिलती। ख़न्दक़ के युद्ध में इस व्यवस्था से बहुत मदद मिली।

(3) मदीना और उसके आस-पास के क़बीलों को यह एहसास दिलाना कि अब यहाँ एक और शक्ति भी है और वह यह कि अब अरबद्वीप, विशेषकर उस इलाक़े की सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियाँ तेज़ी से बदल रही हैं।

मुस्लिम समाज का विकास

क़ुरआन कहता है—

"अब दुनिया में वह उत्तम समुदाय तुम हो जिसे मनुष्यों के मार्गदर्शन एवं सुधार के लिए मैदान में लाया गया है। तुम भलाई का उपदेश देते हो, बुराई से रोकते हो और ईश्वर पर पूर्ण आस्था रखते हो।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-110)

यह है वह उद्देश्य जिसे अल्लाह तआला ने मुसलमानों को प्राथमिकता के साथ करते रहने का आदेश दिया है। मुस्लिम समाज का प्रत्येक सदस्य इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए अपनी सामर्थ्य भर हर सम्भव कोशिश करने का उत्तरदायी है।

ईश्वरीय क़ानून के अनुसार दुनिया में जो फल मिलते हैं, वे हमारे सामूहिक तथा व्यक्तिगत प्रयासों के अनुसार होते हैं। हम व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक स्तर पर जितनी कोशिशें करते हैं उतना ही हमें समष्टीय फल मिलता है। लेकिन आख़िरत (परलोक) में इस कोशिश में हमारी अपनी भागीदारी के अनुसार ही फल मिलेगा। यहाँ यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि परिणाम का फ़ैसला मनुष्य के बनाए हुए क़ानूनों और उसूलों के अनुसार नहीं होगा।

ईश्वरीय विधान के मुताबिक़ यदि अल्लाह के रसूलों के अनुयायी बहुत कम हों और वह क़ौम जिसमें रसूल भेजा गया है, दुश्मनी पर उतरी हुई हो

और सत्य के आह्वान को स्वीकार करने को तैयार न हो, तो ऐसी स्थिति में रसूलों और उसके अनुयायिओं को हिजरत करने का आदेश दिया जाता है और दुष्ट क़ौम को अल्लाह तआला तबाह कर देता है। लेकिन यदि अनुयायिओं की संख्या अधिक है तो फिर उस सत्य-धर्म को फैलाने और उसका बोलबाला करने का उत्तरदायित्व उन्हीं नेक लोगों पर होता है। मदीना में एक ऐसे ही समाज की बुनियाद पड़ रही थी। नबी (सल्ल॰) के ऊपर यह ज़िम्मेदारी डाली गई थी कि उन लोगों को नैतिक प्रशिक्षण दें और उनको इस महान कार्य के लिए तैयार करें। क़ुरआन कहता है—

> "वास्तव में ईमानवालों पर तो अल्लाह ने यह बहुत बड़ा एहसान किया है कि उनके बीच उन्हीं में से एक ऐसा पैग़म्बर उठाया जो उसकी आयतें उन्हें सुनाता है, उनके जीवन को सँवारता है और उनको किताब और बुद्धिमत्ता की शिक्षा देता है, यद्यपि इससे पहले यही लोग खुली पथभ्रष्टता में पड़े हुए थे।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-164)

जिस उत्तमशैली में नबी (सल्ल॰) ने इस उत्तरदायित्व को निभाया इसका मानव-इतिहास में कोई उदाहरण नहीं मिलता। मक्का के 13 वर्षीय दौर में आप (सल्ल॰) ने ऐसे गिरोह को तैयार किया था जिसको अल्लाह तआला पर पक्का ईमान और विश्वास था, ज़बरदस्त धैर्य और संयम था। अपने उद्देश्य के प्रति पूरी लगन और निष्ठा थी और अपने नेतृत्व से पूरी श्रद्धा और लगाव था। उस महान नेतृत्व ने उन लोगों की ज़िन्दगियों को पूरी तरह से बदल दिया था। अब यही लोग उस नए समाज की नीव डाल रहे थे। इस महान कार्य में उनके अनसार भाई उनका भरपूर सहयोग दे रहे थे। इस पावन समूह की ज़िम्मेदारी थी कि वह नबी (सल्ल॰) के नेतृत्व में मानव-समाज का मार्गदर्शन करे।

इस समाज के मार्गदर्शक सिद्धांत, प्रशासन की मर्यादाएँ, और मूल प्रशासनिक व्यवस्था को अल्लाह तआला ने वह्य के ज़रिए से विभिन्न समयों में अवतरित किया था।

मक्का में मुस्लिमों के लिए यह आदेश था कि अपनी भावनाओं और संवेदनाओं पर क़ाबू रखें और किसी भी स्थिति में सत्य-धर्म का विरोध करनेवालों के ज़ुल्मो-सितम का जवाब ताक़त से न दें। इस आदेश के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं—

(1) मुस्लिम संख्या में बहुत कम थे और मुक़ाबले की स्थिति में नहीं थे।

(2) क़बायली पक्षपात अब भी सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण था। इस स्थिति में यदि ज़ुल्म को रोकने की कोशिश की जाती तो विभिन्न क़बीलों में युद्ध की स्थिति बन जाती। इस तरह की जंगों से इस्लाम के विकास की गति रुक जाती और बहुत नुक़सान होता।

(3) मुसलमानों का नैतिक प्रशिक्षण अभी आरम्भिक चरण में था। उनको ज़ुल्म का जवाब देने और संघर्ष से रोककर क़बायली क़ानूनों के प्रभाव को ख़त्म करने की कोशिश की गई जो उनके व्यक्तित्व में अन्दर तक कूट-कूटकर भरा हुआ था। यदि उनको संघर्ष करने की अनुमति दे दी जाती तो सम्भव था कि लोग ग़ुस्से और बदले की भावना के प्रभाव में कार्रवाई कर बैठते और यह आचरण इस्लामी शिक्षाओं से मेल नहीं खाता। एक मुसलमान केवल सत्य का बोलबाला करने के लिए ही संघर्ष करता है।

मक्का में इस्लाम क़बूल करनेवाले सुदृढ़ नीतिपरायण लोग थे, उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का उस समय साथ दिया था जब क़ुरैश का अत्याचार अपने चरम पर था और जिनका प्रशिक्षण नबी (सल्ल०) ने स्वयं किया था। उनके समस्त कार्य अल्लाह को प्रसन्न करने के लिए होते थे। उनकी समस्त गतिविधियाँ ईश्वरीय आदेशों और नबी (सल्ल०) के अधीन थीं। उन लोगों के साथ एक ऐसे समाज का निर्माण हुआ जो मज़बूत वैचारिक बुनियादों पर क़ायम था। उस समाज पर क़बायली रस्मो-रिवाज, व्यक्तिगत हित, या संकीर्ण दृष्टि का किसी प्रकार का कोई प्रभाव नहीं था। ईश्वरीय प्रकाशना (अल्लाह की वह्य) लगातार नबी (सल्ल०) पर अवतरित हो रही थी और उसके आधार पर एक मज़बूत समाज का निर्माण हो रहा था।

इस कल्याणकारी राज्य (Welfare State) की सबसे बड़ी समस्या सुरक्षा

की थी। इस्लाम-दुश्मन क़ुरैश, मुसलमानों के धन-संसाधनों को छीनकर और उनकी संपत्तियों पर ज़बरदस्ती क़ब्ज़ा कर लेने के बाद भी इसके लिए तैयार नहीं थे कि मुसलमानों को मदीना में सुख-चैन से रहने दें। अब उन्होंने मदीना के राज्य का सामाजिक एवं आर्थिक बहिष्कार करने का फ़ैसला किया। उन्होंने दूसरे क़बीलेवालों से मिलकर मदीना पर हमले की तैयारी भी शुरू कर दी। एक और षड्यंत्र जो क़ुरैश ने मुसलमानों के ख़िलाफ़ किया वह था मदीना के महत्वपूर्ण लोगों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ भड़काने और उनको मुसलमानों के ख़िलाफ़ खड़ा करने का।

इन परिस्थितियों में मुसलमानों को अन्ततः अल्लाह तआला की ओर से तलवार उठाने और सुरक्षा के लिए क़दम उठाने के लिए अनुमति दे दी गई। क़ुरआन की ये आयतें पहली हिजरी के ज़िलहिज्जा के महीने में उतारी गईं—

> "अनुमति दे दी गई उन लोगों को जिनके ख़िलाफ़ युद्ध किया जा रहा है, क्योंकि वे मज़लूम (उत्पीड़ित) हैं और अल्लाह यक़ीनन उनकी सहायता करने की सामर्थ्य रखता है। ये वे लोग हैं जो अपने घरों से अन्यायपूर्वक निकाल दिए गए, केवल इस क़ुसूर पर कि वे कहते थे : 'हमारा प्रभु अल्लाह है।' यदि अल्लाह लोगों को एक-दूसरे के द्वारा न हटाता रहे तो ख़ानकाहें, गिरजाघर, पूजा-स्थल और मस्जिदें, जिनमें ईश्वर का स्मरण अधिकता से किया जाता है, सब ध्वस्त कर दी जाएँगी। अल्लाह ज़रूर उन लोगों की मदद करेगा जो उसकी मदद करेंगे। अल्लाह बड़ा शक्तिशाली और ज़बरदस्त है। ये वे लोग हैं जिन्हें यदि हम पृथ्वी पर सत्ता दे दें तो वे ईश्वरीय उपासना (नमाज़) का आयोजन करेंगे, ज़कात (दान) देंगे, भलाई की नीति पर चलने का आदेश देंगे और बुराई को रोकेंगे और तमाम मामलों का फल ईश्वर के हाथ में है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-22 हज, आयतें-39 से 41)

क़ुरआन की इन आयतों के अवतरित होने के बाद नबी (सल्ल॰) मुसलमानों के फ़ौजी दस्ते क़रीब के इलाक़ों में भेजने लगे। इन फ़ौजी दस्तों के भेजने के निम्नलिखित उद्देश्य थे—

(1) क़ुरैश को यह स्पष्ट संकेत देना था कि मुसलमान अब उनकी मनमानी किसी भी दशा में सहन नहीं करेंगे।

(2) अरब और विशेषकर आस-पास के क़बीलों को यह एहसास दिलाना था कि अब अरब द्वीप की धार्मिक, राजनीतिक एवं सामाजिक तस्वीर बदल चुकी है।

(3) क़ुरैश को इससे रोकना था कि वे मदीना के आस-पास आबाद क़बीलों से मुसलमानों के ख़िलाफ़ सैनिक सन्धि करें।

(4) विभिन्न क़बीलों से सैनिक सन्धि करना और उनसे वफ़ादारी का वचन लेना।

(5) आस-पास के इलाक़ों से पूरी तरह अवगत होना, ताकि भविष्य में यदि कोई युद्ध हो तो मुसलमान पूरे इलाक़े के चप्पे-चप्पे से अवगत रहें।

(6) क़ुरैश की सैनिक एवं व्यापारिक गतिविधियों से पूरी तरह अवगत होना।

हथियार उठाने की अनुमति मिलने के बाद बद्र की लड़ाई तक मुसलमानों के विभिन्न अवसरों पर आठ फ़ौजी दस्ते रवाना हुए थे। इन आठ फ़ौजी मुहिमों में से चार मुहिम ऐसी थीं जिसमें आप (सल्ल॰) व्यक्तिगत रूप से शामिल नहीं हुए थे। उन मुहिमों को 'सिराया' कहते हैं और चार मुहिम ऐसी थीं जिनमें आप (सल्ल॰) व्यक्तिगत रूप में शामिल थे, इस मुहिम को 'ग़ज़वा' कहते हैं। इन मुहिमों में सैनिक की औसत संख्या 80 थी। विभिन्न मुहिमों में फ़ौजियों की कम-से-कम संख्या 12 और अधिक-सें-अधिक 200 थी। इन मुहिमों के द्वारा विभिन्न क़बीलों से फ़ौजी समझौते हुए और आपसी मेल-जोल की सूरतें निकलीं। इन फ़ौजी समझौतों में जुहैना, ख़ुज़ाआ, ग़िफ़ार, असलम, बनू-मुदलज और बनू-ज़ुमरा के साथ किए जानेवाले समझौते उल्लेखनीय हैं। इन मुहिमों में केवल दो में मुसलमानों और क़ुरैशों के बीच हथियारों का इस्तेमाल हुआ जिनमें दुश्मनों का एक व्यक्ति मारा गया और दो लोगों को क़ैद कर लिया गया। बाद में उन क़ैदियों को रिहा कर दिया गया।

क़िबला में बदलाव

सन् 2 हिजरी के शाबान के महीने में अल्लाह तआला ने क़िबले को

बदलने का आदेश दिया। क़ुरआन में है—

> "ऐ नबी! यह तुम्हारे मुँह का बार-बार आकाश की ओर उठना हम देख रहे हैं। लो! हम उसी क़िबले की ओर तुम्हें फेर देते हैं, जिसे तुम पसंद करते हो। मस्जिदे-हराम (काबा) की तरफ़ रुख़ फेर दो। अब जहाँ कहीं तुम हो, उसी की तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़ा करो। ये लोग जिन्हें किताब दी गई थी, ख़ूब जानते हैं कि (क़िबला बदलने का) यह आदेश उनके रब ही की ओर से है और सत्य पर है, मगर इसके उपरांत जो कुछ ये कर रहे हैं, अल्लाह उससे ग़ाफ़िल नहीं है।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-144)

मदीना हिजरत से पहले नबी (सल्ल॰) मस्जिदे-हराम में नमाज़ अदा करने के लिए खड़े होते थे तो आप (सल्ल॰) इस तरह रुख़ करते कि काबा आप (सल्ल॰) के सामने होता और उसके पीछे बैतुल-मक़दिस। लेकिन जब आप (सल्ल॰) मदीना आ गए तो आप (सल्ल॰) ऐसा नहीं कर सकते थे। क्योंकि काबा और बैतुल-मक़दिस दोनों एक-दूसरे के विपरीत दिशा में थे। नबी (सल्ल॰) मदीना आने के बाद बैतुल-मक़दिस की ओर ही रुख़ करके नमाज़ पढ़ते रहे। इसके निम्नलिखित कारण हो सकते हैं—

(1) यह संप्रभु अल्लाह की ओर से इस्लाम के संदेश की निरन्तरता का प्रदर्शन था। क़ुरआन कहता है—

> "ऐ नबी! हमने तुम्हारी ओर उसी प्रकार प्रकाशना (वह्य) भेजी है जिस प्रकार नूह (अलैहि॰) और उसके बाद के पैग़म्बरों की ओर भेजी थी। हमने इबराहीम (अलैहि॰), इसमाईल (अलैहि॰), इसहाक़ (अलैहि॰), याक़ूब (अलैहि॰), और याक़ूब की संतान, ईसा (अलैहि॰), अय्यूब (अलैहि॰), यूनुस (अलैहि॰), हारून (अलैहि॰) और सुलैमान (अलैहि॰) की ओर वह्य भेजी। हमने दाऊद (अलैहि॰) को ज़बूर दी। हमने उन रसूलों पर भी वह्य अवतरित की जिनकी चर्चा इससे पहले तुमसे कर चुके हैं और उन रसूलों पर भी जिनकी चर्चा तुमसे नहीं की। हमने मूसा (अलैहि॰) से इस तरह बात-चीत की

जिस तरह बात की जाती है। सभी रसूल (अलैहि॰) शुभ सूचना देनेवाले और डरानेवाले बनाकर भेजे गए थे, ताकि उनको पैग़म्बर नियुक्त कर देने के बाद लोगों के पास अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हुज्जत (बहाना) न रहे और अल्लाह हर हाल में प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है। (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयतें-163 से 165)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) रसूलों की इस कड़ी में सबसे अन्तिम कड़ी हैं।

(2) अरब के लोगों का इस्लाम स्वीकार करने से पहले भी काबा (बैतुल्लाह) से बहुत लगाव था। इसकी एक वजह यह भी थी कि काबा में लगभग तमाम क़बीलों के मशहूर देवी-देवताओं की मूर्तियाँ रखी हुई थीं। उन झूठे पूज्य-प्रभुओं से शेष बचे प्रेम को समाप्त करने के लिए यह आवश्यक था कि वे काबा के बजाय बैतुल मक़दिस की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ें, ताकि लोग उनसे हर प्रकार के मानसिक सम्बन्ध को समाप्त कर लें।

क़ुरआन की वह आयत जिसमें क़िबला के बदलने का आदेश है और जिसमें मुसलमानों को बैतुल-मक़दिस की जगह काबा (बैतुल्लाह) की ओर रुख़ करके नमाज़ अदा करने का आदेश दिया गया है। इससे इन बातों का पता चलता है—

(1) क़ुरआन के अनुसार काबा ही संसार का पहला पूज्य-स्थल है। क़ुरआन में है—

"निस्सन्देह सबसे पहला पूज्य-स्थल जो मनुष्यों के लिए बनाया गया, वह वही है जो मक्का में स्थित है। इसको ख़ैरो-बरकत दी गई थी और सम्पूर्ण संसारवालों के लिए मार्गदर्शन का केन्द्र बनाया गया था।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-96)

(2) मनुष्यों की आध्यात्मिक एवं नैतिक नेतृत्व की ज़िम्मेदारी अहले-किताब से लेकर अब पूरे तौर पर मुसलमानों के सिपुर्द कर दी गई। क़ुरआन में है—

"अब संसार में सर्वोत्तम समुदाय तुम हो जिसे मनुष्यों के मार्गदर्शन और सुधार के लिए मैदान में लाया जाता है। तुम भलाई का हुक्म

देते हो, बुराई से रोकते हो और अल्लाह पर ईमान रखते हो। ये अहले-किताब ईमान लाते तो उन्हीं के लिए अच्छा था। यद्यपि उनमें कुछ लोग ईमानदार भी पाए जाते हैं मगर उनके अधिकांश लोग नाफ़रमान हैं।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-110)

रोज़ा

सन् दो हिजरी के शाबान महीने में रमज़ान के रोज़ों को फ़र्ज़ (अनिवार्य) किया गया। क़ुरआन का आदेश है—

"ऐ लोगो, जो ईमान लाए हो! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ कर दिए गए, जिस प्रकार तुम से पहले अनुयायिओं पर फ़र्ज़ किए गए थे। इससे आशा है कि तुममें परहेज़गारी के गुण पैदा होंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-183)

यह आदेश स्पष्टतः प्रकट करता है कि रोज़े (व्रत) कोई नई चीज़ नहीं थी। पहले आए हुए नबियों और उनकी क़ौमों पर भी रोज़े अनिवार्य किए गए थे। इसका उद्देश्य यह था कि लोगों को अपने आप पर नियन्त्रण करने की क्षमता पैदा हो जाए और वे संयमी बन जाएँ।

ज़कात

रोज़ों को अनिवार्य कर दिए जाने के कुछ ही दिनों बाद ज़कात को अनिवार्य कर दिए जाने का आदेश आया। (ज़कात सदक़े व दान की वह शक्ल है जिसको देना प्रत्येक उस मुसलमान पर अनिवार्य है जो सुसम्पन्न और एक निश्चित मात्रा से अधिक सम्पत्ति रखते है)। क़ुरआन कहता है—

"यह सदक़ात (अनिवार्य दान) तो वास्तव में फ़क़ीरों और मिसकीनों के लिए हैं और उन लोगों के लिए जो सदक़ा के काम पर लगे हुए हैं, और उनके लिए जिनके दिलों को नर्म करना (तालीफ़े-क़ल्ब) अपेक्षित हो और यह गर्दनों को छुड़ाने और क़र्ज़दारों की मदद करने में और अल्लाह की राह में और मुसाफ़िरों की मेहमाननवाज़ी में इस्तेमाल करने के लिए हैं। एक अनिवार्य कृत्य (फ़र्ज़ किया

गया अमल) है अल्लाह की ओर से और अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और सब कुछ समझने और देखनेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-60)

जिहाद का आदेश

सन् 02 हिजरी के माह शाबान में अल्लाह के मार्ग में जिहाद का आदेश भी आया है। क़ुरआन कहता है–

"तुम अल्लाह के मार्ग में उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं, मगर अत्याचार न करो कि अल्लाह अत्याचारियों को पसन्द नहीं करता। उनसे लड़ो, जहाँ भी तुम्हारा उनसे मुक़ाबला पेश आए और उन्हें निकालो, जहाँ से उन्होंने तुमको निकाला है, इसलिए कि यद्यपि हत्या बुरा काम है, मगर फ़ितना उससे भी अधिक बुरा है और मस्जिदे-हराम (काबा) के पास जब तक वे तुमसे न लड़ें, तुम भी न लड़ो, मगर जब वे वहाँ लड़ने से न चूकें तो तुम भी निस्संकोच होकर उन्हें मारो कि ऐसे सत्य के विरोधियों की यही सज़ा है। फिर यदि वे रुक जाएँ तो जान लो कि अल्लाह माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है। तुम उनसे लड़ते रहो यहाँ तक कि उपद्रव शेष न रहे और धर्म ईश्वर के लिए हो जाए। फिर यदि वे रुक जाएँ तो समझ लो कि ज़ालिमों के सिवा किसी पर हाथ उठाना जाइज़ नहीं।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयतें-190 से 193)

ये आयतें साफ़-साफ़ बता रही हैं कि अब वह मौक़ा आ गया है जब मुसलमानों के लिए युद्ध करना आवश्यभावी हो गया है। हथियार उठाने का बुनियादी मक़सद, अल्लाह की राह में जंग करनेवाले लोगों का अन्दाज़ और जंग की सीमाएँ ये सब बातें स्पष्ट रूप से उपरोक्त आयतों में बतला दी गई हैं।

(1) मुसलमान केवल ईश्वरीय धर्म के लिए ही हथियार उठा सकते हैं। व्यक्तिगत दुश्मनी, हित, राष्ट्रीय गर्व, धन-सम्पत्ति पर क़ब्ज़ा करना, या कोई दूसरा

सांसारिक उद्देश्य जिहाद की वजह नहीं बन सकता।

(2) मुसलमान जंग के दौरान भी नैतिक मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं कर सकता।

(3) ज़ब जंग शुरू हो जाए जो पूरी दृढ़ता से उसमें शामिल होना चाहिए। जंग आधी-अधूरी मानसिकता से नहीं लड़ी जाती।

(4) ईशपरायणता, धैर्य और संयम को कमी नहीं छोड़ना चाहिए। यदि दुश्मन सीमाएँ लाँघ रहा हो और युद्ध के नियमों को रौंद डाले तो मुसलमानों को भी पूरा अधिकार है कि इस सिलसिले में उचित कार्रवाई करें।

(5) यदि शत्रु सम्मानजनक रीति से जंगबन्दी के लिए कुछ शर्तों पर तैयार हो तो उन शर्तों को स्वीकार करके युद्ध को रोक देना चाहिए।

(6) दूसरी परिस्थिति में युद्ध उस समय तक जारी रहेगा जब तक दुश्मन दोबारा अत्याचार और हमला करने के योग्य न रहे।

3:3 बद्र का युद्ध—ऐतिहासिक मोड़

मुसलमानों और इस्लाम-दुश्मन क़ुरैश के विवाद में सन् 2 हिजरी का रमज़ान का महीना बहुत महत्व रखता है। इसको हम इस्लामी इतिहास का ऐतिहासिक मोड़ भी कह सकते हैं। 17 रमज़ान को बद्र की जंग हुई, जिसमें क़ुरैश को ऐसी शर्मनाक पराजय का सामना करना पड़ा जिसकी कल्पना न तो क़ुरैश ने की थी और न ही अरब में किसी और ने। क़ुरैश अपनी अधिसंख्या की शक्ति, युद्ध-कौशल एवं जंगी हथियारों की स्पष्ट बढ़ोत्तरी के बावजूद इस शर्मनाक पराजय से दोचार हुए। क़ुरआन इस दिन को "यौमुल-फ़ुरक़ान" के नाम से याद करता है। "यौमुल-फ़ुरक़ान" का मतलब है कि वह दिन जब सच और झूठ का फ़र्क़ पूरी तरह सामने आ गया। इस युद्ध और इसकी कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं का संक्षेप में यहाँ उल्लेख उचित होगा—

नबी (सल्ल॰) की मक्का से हिजरत के बाद से ही क़ुरैश मदीना पर हमले की ताक में थे। मदीना पर हमला करके और मुसलमानों का अस्तित्व मिटा करके वे अपने मान-सम्मान को दोबारा बहाल करना चाहते थे। नबी (सल्ल॰) के मक्का से बचकर निकल जाने से उनको ऐसा लगता था कि उनके मान-सम्मान को बहुत बड़ा धक्का लगा है। वे मदीना पर अपने लगाए गए आर्थिक प्रतिबन्ध का परिणाम भी देख चुके थे जो बुरी तरह असफल सिद्ध हुआ था। मदीना मक्का के धार्मिक वर्चस्व के सामने एक महत्वपूर्ण चुनौती बनता जा रहा था। उनके राजनीतिक साख को भी मदीना और मुसलमानों से ज़बरदस्त ख़तरा उत्पन्न हो चुका था। उनको लगा कि यदि इस ख़तरे का अभी तोड़ न निकाला गया तो पूरे अरब में उनकी साख ख़त्म हो जाएगी।

अपने इन शैतानी संकल्पों को साकार करने के लिए उन्होंने हिजरत के दूसरे साल सीरिया (शाम) की ओर व्यापारियों का एक क़ाफ़िला भेजा। इस क़ाफ़िले से होनेवाले आर्थिक लाभ को मदीना पर हमले की तैयारी के लिए

इस्तेमाल किया जाना था। इस क़ाफ़िले की ख़ास बात यह थी कि इसमें मक्का के लगभग सभी परिवारों ने आर्थिक निवेश किया था। क़ुरआन कहता है—

"जिन लोगों ने सत्य को मानने से इनकार किया वे अपने माल को ख़ुदा के रास्ते से रोकने के लिए ख़र्च कर रहे हैं और अभी और ख़र्च करते रहेंगे, मगर अन्ततः यही कोशिशें उनके लिए पछतावे का कारण बनेंगी, फिर वे प्रभावी होंगे, फिर ये सत्य के विरोधी जहन्नम की तरफ़ घेर लाए जाएंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-36)

अबू-सुफ़ियान के नेतृत्व में यह व्यापारिक दल सीरिया के लिए रवाना हुआ। इस दल की सुरक्षा के लिए हथियारों से लैस लगभग 40 योद्धा भी साथ थे। इस क़ाफ़िले को उस रास्ते से गुज़रना था जो मदीना के मुसलमानों की पहुँच में था और हथियारों से लैस फ़ौजी दस्ते इस इलाक़े से प्रायः गुज़रते रहते थे। व्यापारिक दल उसी रास्ते से सीरिया की ओर गया।

लेकिन वापसी के दौरान अबू-सुफ़ियान को यह आशंका हुई कि मुसलमान इस क़ाफ़िले पर हमला कर सकते हैं। हमले का ख़तरा इसलिए भी अधिक था कि ऊँटों पर सामग्री लदे होने के कारण यह क़ाफ़िला बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था। अबू-सुफ़ियान ने ख़तरे को भाँपते हुए एहतियात के तौर पर मक्का एक सन्देश भेजा जिसमें आनेवाले सम्भावित संकट की ओर सकेंत किया। अबू-सुफ़ियान के इस प्रतिनिधि ने मक्का पहुँचने के बाद ख़तरे को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया, जिससे यह लगा कि व्यापारिक क़ाफ़िले के लुट जाने का ख़तरा है और मुसलमान उसपर हमला करने ही वाले हैं।

क़ुरैश के सरदारों ने इसको सुनहरा अवसर समझते हुए इसका भरपूर लाभ उठाने का प्रण किया। उन्हें लगा कि यह मदीना पर हमला करने का एक उचित कारण बन सकता है। तुरन्त 1300 योद्धाओं की एक सेना तैयार हो गई ज़ो सामरिक हथियारों से पूरी तरह लैस थी। क़ुरआन कहता है—

"और उन लोगों जैसे रंग-ढंग न अपनाओ जो अपने घरों से इतराते

और लोगों को अपनी शान दिखाते हुए निकले और जिन की चाल यह है कि अल्लाह के रास्ते से रोकते हैं, जो कुछ यह कर रहे हैं वह अल्लाह की पकड़ से बाहर नहीं है।"

(क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-47)

इस सेना का नेतृत्व अबू-जहल कर रहा था और उसमें मक्का के तमाम बड़े-बड़े सरदार शामिल थे। वे तमाम लोग भविष्य में अपनी नामवरी के लिए इस सेना में शामिल हुए थे। इस सेना में 100 घुड़सवार थे, 700 ऊँट थे, और 600 लोग रक्षा-कवच पहने हुए थे। उनके पास भरपूर मात्रा में हथियार मौजूद थे।

नबी (सल्ल॰) को इस फ़ौजी तैयारी की सूचना अपने माध्यम से मिल गई। परिस्थितियों की माँग थी कि समय रहते कार्रवाई की जाए। आप (सल्ल॰) ने सलाह लेने के लिए सहाबियों को बुलाया और उन्हें तमाम परिस्थितियों से अवगत कराया। आप (सल्ल॰) ने उस विजय का उल्लेख भी किया जिसका अल्लाह ने मुसलमानों से वादा किया था। आप (सल्ल॰) ने सहाबियों से राय माँगी कि मक्का की फ़ौज का सामना किया जाए या क़ुरैश के व्यापारिक क़ाफ़िले का। कुछ लोगों का विचार था कि क़ाफ़िले को रोकना बाएँ हाथ का खेल होगा, इसलिए उन्होंने क़ाफ़िले का सामना करने का सुझाव दिया। इसमें ख़तरे कम और लाभ ज़्यादा दिखाई दे रहे थे।

लेकिन नबी (सल्ल॰) ने इस सवाल को बार-बार दोहराया तो आप (सल्ल॰) के क़रीबी साथियों को यह अन्दाज़ा हो गया कि आप (सल्ल॰) क्या चाहते हैं। हज़रत मिक़दाद-बिन-असवद (रज़ि॰) ने मुहाजिरीन का प्रतिनिधित्व करते हुए और हज़रत साद-बिन-मुआज़ (रज़ि॰) ने अनसार का प्रतिनिधित्व करते हुए पूरे सहयोग का विश्वास दिलाया। अन्ततः यह निर्णय लिया गया कि क़ाफ़िले को छोड़कर मक्का की फ़ौज का सामना किया जाए।

मुसलमानों की फ़ौज में केवल 313 लोग थे। इनके पास सैनिक साज़ो-सामान की भी बहुत कमी थी। उनके पास केवल 2 घोड़े, 70 ऊँट और 6 सुरक्षा-कवच थीं। क़ुरआन इस अवसर के बारे में कहता है—

"उस ग़नीमत के विषय में भी वैसी ही सूरत पेश आ रही थी जैसी उस समय पेश आई थी, जबकि तेरा रब तुझे हक़ के साथ तेरे घर से निकाल लाया था और मोमिनों में से एक गिरोह को यह सख़्त नागवार था। वह उस सत्य के विषय में तुझसे झगड़ रहे थे, हालाँकि वह साफ़-साफ़ उजागर हो चुका था। उनका हाल यह था कि मानो वह आँखों देखते मौत की तरफ़ हांके जा रहे हैं। याद करो वह अवसर जबकि अल्लाह तुमसे वादा कर रहा था कि दोनों गिरोहों में से एक तुम्हें मिल जाएगा। तुम चाहते थे कि कमज़ोर गिरोह तुम्हें मिले। किन्तु अल्लाह का इरादा यह था कि अपने कथनी से सत्य को सत्य कर दिखाए और सत्य के विरोधियों की जड़ काट दे, ताकि सत्य-सत्य होकर रहे और असत्य-असत्य होकर रह जाए। चाहे अपराधियों को यह कितना ही असहनीय हो।"

(क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयतें-5 से 8)

इसी बीच अबू-सुफ़ियान ने अपना मार्ग बदल लिया और उस रास्ते से मक्का के लिए चला जिस रास्ते से कम ही लोग मक्का आया-जाया करते थे। उसने क़ुरैश को इस बारे में सूचना भेजी और कहा कि उनकी सेना अब मक्का वापस हो जाए, क्योंकि उसके क़ाफ़िले को अब किसी प्रकार का ख़तरा नहीं है। अबू-जहल यह सूचना मिलने के बाद भी इस बात पर अड़ा रहा कि मदीना पर हमला करके ही वापस होगा। इस बात पर सरदारों में मतभेद उत्पन्न हो गया। अख़नस-बिन-शुरैक़ ने वापस चलने की राय दी, लेकिन जब अबू-जहल अपनी बात पर अड़ा रहा तो अख़नस अपने 300 लोगों को, जो क़बीला बनू-ज़ुहरा से थे, लेकर वापस चला गया। अन्ततः बद्र के मुक़ाम पर क़ुरैश और मुसलमानों का आमना-सामना हुआ। क़ुरआन में है—

"याद करो वह समय जबकि तुम घाटी के इस ओर थे और वे दूसरी ओर पड़ाव डाले हुए थे और क़ाफ़िला तुमसे नीचे (तट) की ओर था। अगर कहीं पहले से तुम्हारे और उनके बीच मुक़ाबले का निश्चय हो चुका होता तो तुम अवश्य ही इस अवसर पर पहलू बचा जाते, लेकिन जो कुछ सामने आया वह इसलिए था कि जिस

> बात का फ़ैसला अल्लाह कर चुका था उसे प्रकाश में ले आए, ताकि जिसे विनष्ट होना है वह प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ विनष्ट हो और जिसे ज़िन्दा रहना है वह प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ ज़िन्दा रहे। निस्संदेह अल्लाह सुनने और जाननेवाला है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-42)

बद्र की घाटी में मुसलमानों की इस छोटी-सी सैनिक टुकड़ी को क़ायम करने के बाद नबी (सल्ल॰) पूरी रात उस छोटी-सी जमाअत की सफलता के लिए दुआ करते रहे। आप (सल्ल॰) दुआ कर रहे थे—

"हे अल्लाह! ये क़ुरैश के लोग बड़े अभिमान और घमण्ड से गर्व करते हुए यहाँ केवल इसलिए आए हैं कि तेरे रसूल को झूठा साबित कर दें। यदि आज ये मुट्ठी भर मुसलमान मारे गए तो शायद क़ियामत तक तेरी इबादत करनेवाला इस पृथ्वी पर बाक़ी नहीं बचेगा।"

क़ुरआन में अल्लाह तआला ने इस दुआ का जवाब कुछ इस तरह दिया है—

> "और वह अवसर जबकि तुम अपने रब से पुकार कर रहे थे। जवाब में उसने कहा कि मैं तुम्हारी सहायता के लिए अनवरत एक हज़ार फ़रिश्ते भेज रहा हूँ। यह बात अल्लाह ने तुम्हें केवल इसलिए बता दी कि तुम्हें ख़ुशख़बरी हो और तुम्हारे दिल इससे संतुष्ट हो जाएँ। अन्यथा मदद तो जब भी होती है, अल्लाह ही की तरफ़ से होती है। निस्संदेह अल्लाह प्रभुत्वशाली एवं तत्वदर्शी है।" (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयतें-9,10)

अगले दिन दोनों पक्ष जंग के मैदान में आमने-सामने आ गए।

जंग तो केवल कुछ घंटे ही चली, लेकिन इस युद्ध में क़ुरैश बुरी तरह पराजित हुए। उनके 70 यौद्धा जिनमें क़ुरैश के बड़े-बड़े सरदार थे, मारे गए। मृतकों में अबू-जहल, उतबा, शैबा और उमैया आदि भी शामिल थे। इसके अलावा लगभग 70 लोगों को क़ैदी बना लिया गया। मुस्लिम पक्ष के 14 सहाबी भी इस जंग में शहीद हुए।

लेकिन क़ुरआन मुसलमानों से साफ़-साफ़ कहता है कि युद्ध में विजय को अपनी यौद्धिक कुशलता का परिणाम न समझ बैठें, बल्कि इसे अल्लाह तआला की ओर से पुरस्कार समझें और उसी पर कृतज्ञता प्रकट करें–

"अतः सच्चाई यह है कि तुमने उन्हें नहीं मारा, बल्कि अल्लाह ने उनको मारा है और ऐ नबी! तूने नहीं फेंका, बल्कि अल्लाह ने फेंका (और मोमिनों के हाथ जो इस कार्य में इस्तेमाल किए गए) तो यह इसलिए था कि अल्लाह मोमिनों को एक उत्तम परीक्षा से कामयाबी के साथ गुज़ार दे, निश्चय ही अल्लाह सुननेवाला और जाननेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-17)

बद्र की जंग के बाद जंगी क़ैदियों के साथ क्या सुलूक किया जाए, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न था। इसके निम्न कारण थे–

(1) जंग में पकड़े गए क़ैदियों में प्रायः सामान्य रूप से न केवल मक्का के प्रमुख लोग थे, बल्कि उनमें से अकसर वे लोग थे जो मक्का में मुसलमानों पर अत्याचार करने में सबसे आगे थे।

(2) उस समय तक क़ैदियों के लिए किसी प्रकार की जेल की कोई व्यवस्था न थी।

(3) मुसलमानों के लिए क़ैदियों की इस बड़ी संख्या के लिए खाने-पीने की व्यवस्था करना भी एक बड़ी समस्या थी और मुसलमानों के ऊपर यह एक ज़बरदस्त बोझ भी था।

(4) उस समय तक जंगी क़ैदियों के सम्बन्ध में ईश्वरीय वह्य के द्वारा कोई मार्गदर्शन अवतरित नहीं हुआ था।

अतः मुसलमानों के पास उस समय केवल तीन रास्ते थे और अरब में ये तीनों प्रचलित थे। ये तीनों रास्ते निम्नलिखित थे–

(1) जंगी क़ैदियों को मार डाला जाए।

(2) मुसलमानों में ग़ुलाम बनाकर बाँट दिया जाए।

(3) फ़िदिया (अर्थदंण्ड) लेकर छोड़ दिया जाए।

मुसलमानों के साथ उनके बुरे बरताव और ज़ुल्मो-सितम का पूरा इतिहास होने के बावजूद उन लोगों के साथ कृपा एवं दया का व्यवहार अपनाया गया।

नबी (सल्ल॰) ने उन क़ैदियों को अलग-अलग अनसार परिवारों के सिपुर्द कर दिया, ताकि उनकी ज़रूरतों का ध्यान रखा जा सके। अनसार ने जिस बेहतरीन ढंग से उन क़ैदियों को रखा उसका उल्लेख हमेशा इतिहास के पन्नों में सुनहरे शब्दों में किया जाएगा। अनसार ने उन क़ैदियों को अपने से अच्छा खिलाया। ख़ुद भूखे रहे, लेकिन उन क़ैदियों को अच्छे-से-अच्छा खाना खिलाने में कोई कमी नहीं की, मेहमान की तरह रखा और उनकी हर तरीक़े से देख-भाल की।

क्योंकि युद्ध-बन्दियों के सम्बन्ध में अल्लाह की ओर से कोई आदेश अवतरित नहीं हुआ था, इसलिए नबी (सल्ल॰) ने इस सिलसिले में अपने साथियों (सहाबियों) से राय माँगी। हज़रत उमर (रज़ि॰) ने सुझाव दिया कि क्योंकि उन ज़ालिमों के अत्याचार और अपराध अत्यधिक ख़तरनाक थे इसलिए, उनको माफ़ नहीं किया जाना चाहिए।

लेकिन हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) की राय इसके ख़िलाफ़ थी। उन्होंने सुझाव दिया कि उन लोगों से फ़िदिया लेकर रिहा कर दिया जाए। नबी (सल्ल॰) ने जो रहम करने और माफ़ करनेवाले थे, हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) का सुझाव स्वीकार किया। क़ैदियों के फ़िदिए के मामले में भी नबी (सल्ल॰) ने बहुत ही उदार रवैया अपनाया। वे लोग जितनी रक़म फ़िदिए (अर्थदण्ड) के रूप में आसानी से अदा कर सकते थे उनके लिए उसी हिसाब से फ़िदिए की रक़म सुनिश्चित की। यह भी किया कि वे लोग जो रक़म अदा नहीं कर सकते थे, लेकिन पढ़ना-लिखना जानते थे, नबी (सल्ल॰) ने उनको आदेश दिया कि वे दस मुसलमानों को लिखना-पढ़ना सिखा दें, तथा जो न फ़िदिए की रक़म दे सकते थे, न पढ़ना-लिखना जानते थे, उनको ऐसे ही रिहा कर दिया। रिहाई में उनसे केवल यह वादा लिया गया कि वे भविष्य में मुसलमानों पर हथियार नहीं उठाएँगे।

जंगे-बद्र का प्रभाव

बद्र की जंग में मुसलमानों की ज़बरदस्त जीत ने इतिहास की धारा को हमेशा-हमेशा के लिए बदलकर रख दिया। पूरे अरब द्वीप में इसके स्पष्ट प्रभाव पड़े और इसका साफ़ प्रभाव अरब के विभिन्न क़बीलों का मुसलमानों के प्रति उनके रवैये से ज़ाहिर था। इलाक़े में शक्ति का संतुलन युद्ध के बाद मुसलमानों के पक्ष में नज़र आ रहा था और व्यक्तिगत तौर पर और सामूहिक रूप से इसका प्रदर्शन भी हो रहा था।

मदीना के यहूदी क़बीलों ने बद्र की जंग के बाद मुसलमानों की जीत के स्पष्ट प्रभाव को जल्द ही महसूस कर लिया। अब उनको साफ़ अन्दाज़ा हो गया था कि मदीना में उनकी प्रतिष्ठा और कम हो जाएगी और मदीना के मामलों में उनकी इजारादारी के दिन समाप्त हो जाएँगे। ये क़बीले इस्लाम स्वीकार करने के बजाय मुसलमानों से युद्ध करने के सपने देखने लगे और दूसरे क़बीलों, विशेष कर क़ुरैश को, अपने पक्ष में करने की योजना बनाने लगे।

दूसरी ओर क़ुरैश इस करारी हार को भूल नहीं सकते थे। दिन-रात वे इसी चिन्ता में थे कि किस तरह इस पराजय के दाग़ को धो सकें। व्यक्तिगत तौर पर और सामूहिक रूप में ये लोग स्वयं भी इस पराजय का बदला लेने के सपने देख रहे थे। एक दिन एक निजी बैठक में सफ़वान-बिन-उमैया और उमैर-बिन-वहूब आपस में वार्ता करने में तल्लीन थे। उमैर ने कहा : "यदि उसके ऊपर क़र्ज़ का बोझ और परिवारवालों की ज़िम्मेदारी न होती तो वह (ईश्वर न करे) मुहम्मद (सल्ल॰) का मदीना जाकर काम तमाम कर देता। यह सुनते ही सफ़वान-बिन-उमैया ने कहा कि यदि उस कार्य के दौरान उसको कोई नुक़सान पहुँचता है तो उसके बीवी-बच्चों का ध्यान रखना और क़र्ज़ अदा करना उसकी ज़िम्मेदारी होगी। यह आपसी समझौता इतने गुप-चुप अन्दाज़ में हुआ कि उसके घरवालों को भी इसका पता न था और फिर उमैर-बिन-वहूब अपनी योजना को पूरा करने के लिए मदीना की ओर चल पड़ा।

मदीना पहुँचते ही हज़रत उमर (रज़ि॰) की उस पर नज़र पड़ी। कुछ दूसरे सहाबियों ने भी उसको देखा। वे लोग उसे नबी (सल्ल॰) के सामने ले आए। आप (सल्ल॰) ने उससे मदीना आने का कारण पूछा। उसने कहा : "वह अपने बेटे वह्ब को रिहा कराने आया है।" बार-बार पूछने पर भी वह अपनी बात पर अड़ा रहा। जब उसने असली बात बताने से इनकार कर दिया तो नबी (सल्ल॰) ने उसे वे समस्त बातें पूरे विस्तार से बता दीं जो उसके और सफ़वान के बीच हुई थीं। आप (सल्ल॰) ने ऐसे बताया कि मानो आप (सल्ल॰) भी वहाँ मौजूद रहे हों। उमैर यह सुनकर काँपने लगा और भय से उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसने उसी समय इस्लाम स्वीकार कर लिया और कहा कि एक रसूल को ही अल्लाह तआला के ज़रिए से एक ऐसी वार्ता का पता चल सकता है जिससे उन दोनों के अलावा कोई तीसरा अवगत नहीं था।

नबी (सल्ल॰) ने उसी समय उसके बेटे की रिहाई का हुक्म दे दिया और सहाबियों को हिदायत दी कि उमैर (रज़ि॰) को दीन (धर्म) की बुनियादी शिक्षाओं से अवगत कराया जाए।

अरब-द्वीप के कई क़बीलों को अब इस्लाम का सत्य पर होने का एहसास हो चला था और बहुत-से लोगों ने बद्र की लड़ाई के बाद इस्लाम स्वीकार किया। ये लोग सच्चे दिल से इस्लाम के दायरे में दाख़िल हुए थे।

लेकिन कुछ क़बीले ऐसे भी थे जिन्होंने केवल दिखावे के उद्देश्य से इस्लाम स्वीकार किया था। ये लोग अवसरवादी थे। ये ऐसे लोग थे जो छोटी-छोटी बातों पर अपना ईमान बदलने को तैयार रहते। यह एक नया रोग था और मुसलमानों को काफ़ी दिनों तक तकलीफ़ देता रहा। ये मुनाफ़िक़ (पाखण्डी एवं कपटाचारी) लोग मुसलमानों को बड़े महत्वपूर्ण अवसरों पर धोखा देते रहे और पीठ में छुरा घोंपने का काम करते रहे। इनकी वजह से मुसलमानों को कुछ महत्वपूर्ण अवसरों पर बहुत अधिक हानि उठानी पड़ी।

इनके अलावा भी बहुत-से लोग थे, जिनकी इस्लाम-दुश्मनी द्वेष और जलन की वजह से थी या क़बायली पक्षपात इसका कारण था। उन्होंने मुसलमानों को बदनाम करने के लिए उल्टा-सीधा प्रचार करना शुरू कर दिया। ये लोग

इस्लाम का मज़ाक़ उड़ाने के लिए लोगों की निगाहों में इस्लाम और नबी (सल्ल०) के सम्मान को ठेस पहुँचाने के उद्देश्य से व्यंग्य का सहारा लेने लगे। अरब के प्रसिद्ध कवियों से नबी (सल्ल०) और इस्लाम के ख़िलाफ़ व्यंगात्मक कविताएँ एवं छन्द लिखवाते और उसे बड़ी-बड़ी जन-सभाओं में सुनाया जाता और उन कविताओं की प्रशंसा की जाती।

क़ुरैश, मुनाफ़िक़ीन, और यहूदियों ने मुसलमानों के विरुद्ध ज़हर उगलना शुरू किया और अरब क़बीलों को इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ करने की भरपूर कोशिश की। वे मुसलमानों को भी गुमराह करने और उलझन में डालने का कोई अवसर हाथ से न जाने देते। उन्होंने भ्रष्ट एवं अज्ञानकाल के प्रचालित क़बायली एवं बिरादरी की खींचातानी को हवा देने की पूरी कोशिश की।

इस प्रकार की एक कोशिश का परिणाम मदीना से बनू-क़ैनक़ाअ् के निष्कासन का कारण बना। एक मुस्लिम महिला जो एक यहूदी बाज़ार में ख़रीदारी करने गई थी, उसको एक यहूदी सुनार ने बेइज़्ज़त करने की कोशिश की। जब वह महिला अपनी सहायता के लिए चिल्लाई तो एक मुस्लिम नवयुवक ने, जो उस समय बाज़ार में मौजूद था, उस यहूदी सुनार की हत्या कर दी। सुनार के साथियों ने प्रतिक्रिया में उस मुस्लिम नवयुवक को भी मार डाला। इस तरह वहाँ मौजूद मुसलमानों और यहूदियों में लड़ाई शुरू हो गई और युद्ध की स्थिति बन गई।

जब यह ख़बर नबी (सल्ल०) तक पहुँची तो नबी (सल्ल०) ने बनू-क़ैनक़ाअ् के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने का फ़ैसला किया। आप (सल्ल०) ने अबू-लुबाबा (रज़ि०) को मदीना का गवर्नर मनोनीत किया और एक फ़ौजी दस्ते के साथ बनू-क़ैनक़ाअ् के क़िले तक पहुँचे। बनू-क़ैनक़ाअ् क़िले में बन्द हो गए और हथियार संभाल लिए। मुसलमानों ने उनके क़िले को घेर लिया। यह घेराव लगभग 15 दिनों तक चला। अन्ततः बनू-क़ैनक़ाअ् ने लड़ाई के बग़ैर ही हथियार डाल दिए। ये वही लोग थे जो अपनी युद्ध-कुशलता और बहादुरी पर बड़ा गर्व करते थे। उनका मानना था कि उनसे अच्छे योद्धा पूरे अरब में नहीं पाए जाते। जब बद्र की जंग के बाद नबी (सल्ल०) ने उनको इस्लाम की

ओर आह्वान किया था तो उनका उत्तर था : "तुम ये सपने मत देखो कि तुमने क़ुरैश की अप्रशिक्षित सेना को हरा दिया है तो तुम हमको भी हरा दोगे। यदि तुमने हमसे कभी दो-दो हाथ करने की कोशिश की तो तुम्हें सबक़ सिखा दिया जाएगा।"

हथियार डालने के पश्चात् उन लोगों को अब्दुल्लाह-बिन-उबई-बिन-सलूल की सिफ़ारिश पर मदीना छोड़कर जाने की अनुमति दे दी गई। बनू-क़ैनुक़ाअ और उसका क़बीला एक लम्बी अवधि से मैत्रिक सम्बन्ध रखता था।

इस घटना के अलावा बद्र की जंग और उहुद की जंग के बीच मुसलमानों ने चार और सैनिक दल भेजे।

बद्र की जंग के केवल सात दिनों बाद मदीना में यह सूचना पहुँची कि बनू-सुलैम मदीना पर हमला करने की तैयारी कर रहे हैं। नबी (सल्ल॰) ने तुरन्त क़दम उठाते हुए उनके पर्यावासी क्षेत्र की ओर कूच किया और पानी के उस स्रोत पर क़ब्ज़ा कर लिया जिसपर बनू-सुलैम निर्भर था। दुश्मन भयभीत होकर भाग गया और अपने पीछे 500 ऊँट छोड़ गया, जो मुसलमानों के हाथ आए। यासर नामक एक युवक भी पकड़ा गया, लेकिन अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उसे छोड़ दिया। मुसलमानों का दस्ता वहाँ तीन दिनों तक रुकने के बाद वापस लौट आया।

बद्र की जंग की पराजय के बाद अबू-सुफ़ियान ने यह क़सम खाई थी कि वह उस समय तक नहीं नहाएगा और न अपनी पत्नी के पास जाएगा जब तक कि बद्र की पराजय का बदला न ले ले। बद्र की पराजय के कुछ दिनों बाद वह दो सौ घुड़सवारों को लेकर मदीना के पास पहुँच गया और दो मुसलमानों को जो अपने खेतों में काम कर रहे थे, हत्या कर दी। खजूर के कुछ बाग़ों में आग लगा दी और मक्का की ओर भाग खड़ा हुआ।

नबी (सल्ल॰) ने सूचना मिलते ही एक दल के साथ उसका पीछा किया। लेकिन उस समय तक अबू-सुफ़ियान दूर निकल चुका था। अपनी गति को तेज़ करने के लिए अबू-सुफ़ियान और उसकी फ़ौजी टुकड़ी ने अपने आटे (सत्तू) की बोरियों को फेंकना शुरू कर दिया। मुसलमानों ने सत्तू पर क़ब्ज़ा

कर लिया। इस घटना को ग़ज़वा-ए-सुवीक़ के नाम से याद किया जाता है। यह बद्र की जंग से केवल दो महीने बाद यानी महीना ज़िल-हिज्जा सन् 2 हिजरी में घटित हुई थी।

मुहर्रम सन् 3 हिजरी में नबी (सल्ल॰) को सूचना मिली कि सालबा और मुहारिब क़बीले अचानक हमला करने की योजना बना रहे हैं। आप (सल्ल॰) 450 सहाबियों के दस्ते के साथ उनकी ओर बढ़े। इस बार भी शत्रु मैदान छोड़कर भाग खड़ा हुआ। नबी (सल्ल॰) उनके पानी के स्रोत ज़ी-अम्र के पास लगभग एक महीने तक ठहरे रहे। आप (सल्ल॰) के वहाँ रुकने का उद्देश्य मुसलमानों की बढ़ती सैनिक शक्ति का प्रदर्शन और मुसलमानों का दबदबा क़ायम रखना था।

जमादी-उल-अव्वल सन् 3 हिजरी में 300 मुसलमानों का एक दस्ता नबी (सल्ल॰) के नेतृत्व में मदीना से निकला। आप (सल्ल॰) ने अपने प्यारे साथियों के साथ बहरान में कैम्प लगाया। यह स्थान मक्का और मदीना के बीच में स्थित है। कुछ दिनों तक वहाँ ठहरने के बाद नबी (सल्ल॰) मदीना वापस आ गए। इस बार कोई युद्ध नहीं हुआ। इतिहासकारों ने इस फ़ौजी मुहिम के अलग-अलग कारण बताए हैं।

क़ुरैश को इस बात का पूरा एहसास था कि सीरिया के लिए उनका व्यापारिक मार्ग अब मुसलमानों के क़ब्ज़े में है। इसलिए अब उन्होंने एक कठिन और लम्बा रास्ता चुना। अबू-सुफ़ियान के नेतृत्व में मक्का का यह व्यापारिक क़ाफ़िला सीरिया के लिए रवाना हुआ। इस क़ाफ़िले में लाखों दिरहम की चाँदी थी। नबी (सल्ल॰) को अपने विश्वसनीय सूत्रों से यह सूचना मिली तो आप (सल्ल॰) ने ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) के नेतृत्व में 100 शहसवारों का दस्ता व्यापारियों के उस क़ाफ़िले के पीछे भेज दिया। ज़ैद (रज़ि॰) ने उस क़ाफ़िले को क़रज़ा के पानी के स्रोत के पास जा पकड़ा। शहसवारों को देखकर क़ुरैशी व्यापारियों के पसीने छूट गए और वे अपना सारा माल छोड़कर भाग खड़े हुए। ज़ैद (रज़ि॰) यह माल और एक क़ैदी फ़रात-बिन-हय्यान को लेकर मदीना वापस आए। यह क़ुरैश के क़ाफ़िले का गाइड था, जिसको मुसलमानों ने गिरफ़्तार कर लिया था। उसने नबी (सल्ल॰) के हाथ पर बैअत

की और इस्लाम स्वीकार कर लिया। वह मक्का वापस चला गया। यह घटना जमादी-उस-सानी सन् 3 हिजरी की है। यह मुहिम जंगे-उहुद का कारण कही जाती है।

जंगे-बद्र और जंगे-उहुद के बीच की महत्वपूर्ण घटनाएँ

उस समय जबकि मुसलमान बद्र की जंग से विजयी होकर वापस लौट रहे थे, उनको सूचना मिली कि रोम की ईसाई हुकूमत ने अन्ततः ईरान की पारसी सेना को बुरी तरह पराजित कर दिया है। इस सूचना ने क़ुरआन की भविष्यवाणी को सच साबित कर दिया जिसके बारे में आयतें सन् 6 नबवी (615 ई॰) में अवतरित हुई थीं। उस समय रोम के ईसाइयों को ईरानियों ने बुरी तरह पराजित किया था। उस समय, जबकि किसी को भी यह आशा नहीं थी कि ईसाई दोबारा विजयी होंगे, क़ुरआन ने उनकी कामयाबी की भविष्यवाणी की थी—

> "अलिफ़-लाम-मीम! रोमी क़रीब के भूभाग में पराजित हो गए हैं और अपनी इस पराजय के बाद कुछ वर्षों के अन्दर उनका वर्चस्व स्थापित हो जाएगा। अल्लाह की सत्ता है पहले और बाद में भी और वह दिन वह होगा जबकि अल्लाह की प्रदान की हुई विजय पर मुसलमान खुशियाँ मनाएँगे। अल्लाह जिसे चाहता है सफलता देता है और वह संप्रभु एवं दयालु है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-30 रोम, आयतें-1 से 5)

यह बात सामने रहनी चाहिए कि जब उपरोक्त आयतें अवतरित हुई थीं उस समय मुसलमानों को मक्का में ज़बरदस्त ज़ुल्म-व-सितम का सामना था। ईसाई, जो इनजील (क़ुरआन से पहले आनेवाली आसमानी किताब) और ईसा (अलैहि॰) (मुहम्मद सल्ल॰ से पहले आनेवाले ईशदूत) के माननेवाले थे, की पराजय ने क़ुरैशियों को एक और अवसर दे दिया कि वे मुसलमानों का मज़ाक़ उड़ाएँ। किताबवाला होने के कारण मुसलमान ईसाइयों से मानसिक रूप से अनेकेश्वरवादियों की तुलना में अधिक निकट महसूस करते थे। इसके विपरीत अनेकेश्वरवादी, ईरानियों की विजय पर प्रसन्न थे।

बद्र की जंग के बाद आप (सल्ल॰) के परिवार में एक दुखद घटना घटी। वह यह कि आप (सल्ल॰) की बेटी हज़रत रुक़ैया (रज़ि॰) का देहान्त हो गया। उनकी तबीअत उस समय बहुत ख़राब थी जब नबी (सल्ल॰) ब्रद्र की लड़ाई के लिए रवाना हो रहे थे। आप (सल्ल॰) ने इसी लिए उनके पति हज़रत उसमान (रज़ि॰) को रुक़ैया की देख-भाल के लिए मदीना में ही रुके रहने का आदेश दिया। नबी (सल्ल॰) को उनके देहान्त की ख़बर उस समय मिली जब आप (सल्ल॰) बद्र की जंग के बाद मदीना वापस लौट रहे थे।

इसी बीच रमज़ान, सन् 2 हिजरी में रोज़ा और सदक़तुल-फ़ित्र (या फ़ितरे) का आदेश आया।

शव्वाल (ईद के बाद) के महीना में ज़कात के फ़र्ज़ होने का आदेश अवतरित हुआ।

शव्वाल, सन् 2 हिजरी में ही आप (सल्ल॰) की सबसे छोटी बेटी हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) का हज़रत अली (रज़ि॰) से निकाह हुआ।

सन् 2 हिजरी में ही ईदुल-अज़हा के अवसर पर क़ुरबानी का हुक्म आया।

हज़रत उसमान (रज़ि॰) अपनी प्रिय पत्नी के ग़म में निढाल थे। उनकी हालत देखते हुए नबी (सल्ल॰) ने अपनी दूसरी बेटी उम्मे-कुलसूम (रज़ि॰) का निकाह उनसे कर दिया। यह रिश्ता हज़रत उसमान (रज़ि॰) को "ज़ुन्नूरैन" (दो नूरवाले) के लक़ब (मानोपाधि) से याद करने की वजह बना।

माह शाबान, सन् 7 हिजरी में आप (सल्ल॰) ने हज़रत उमर (रज़ि॰) की बेटी हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) से विवाह किया। हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) के पति ख़ुनैस-बिन-हुज़ाफ़ा (रज़ि॰) का कुछ दिन पहले ही देहान्त हो गया था।

3:4 उहुद की विपत्ति

हमें इस बात में कोई संदेह नहीं होना चाहिए कि क़ुरैश और मदीने की मुस्लिम रियासत परस्पर युद्ध की अवस्था में थे। इस तनाव की पहल भी क़ुरैश की ओर से हुई थी। पहले उन्होंने मदीने के क़बीलों पर दबाव डाला कि वे मुहम्मद (सल्ल॰) को उनके हवाले कर दें अन्यथा उन पर हमला कर दिया जाएगा। इसमें विफल होने पर उन्होंने मदीने पर आर्थिक व सामाजिक प्रतिबन्ध लगाने की कार्यवाही की। इसलिए मुसलमान, क़ुरैश की व्यापारिक गतिविधियों के विरुद्ध कार्यवाही करने में पूरी तरह न्यायोचित थे।

बद्र की हार के बाद क़ुरैश क्रोध एवं बदले की भावना से भरे थे। वे बराबर इस तैयारी में लगे थे कि कैसे मदीना पर दोबारा हमला करके मुसलामानों को ख़त्म करके अपनी खोई हुई साख वापस लें। हम बता चुके हैं कि अबू-सुफ़ियान के व्यापारिक क़ाफ़िले को जो बद्र की हार के बाद भेजा गया था, इसी लिए भेजा गया था कि उससे होनेवाली आमदनी को मुसलमानों से युद्ध के लिए ख़र्च किया जाए। ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) के इस पर क़ब्ज़े ने क़ुरैश की तिलमिलाहट में आग पर तेल का काम किया।

केवल एक साल की छोटी-सी अवधि में क़ुरैश तीन हज़ार फ़ौजियों की एक ज़बरदस्त सेना लेकर मदीना पर हमले के लिए रवाना हुए। उनके पास 200 घुड़सवार, और 700 सुरक्षा कवच से लैस सैनिक थे। क़ुरैश की 14 महिलाएँ भी उस सेना के साथ थीं। उन महिलाओं का उद्देश्य यह था कि वे सैनिकों का हौसला बढ़ाएँ और उनको पीछे हटने से रोकें।

नबी (सल्ल॰) को क़ुरैशी सेना के आने की सूचना हज़रत अब्बास (रज़ि॰) ने दी। आप (सल्ल॰) के चचा हज़रत अब्बास (रज़ि॰) अब तक मक्का में थे और उन्होंने अपने इस्लाम क़बूल करने को छिपा रखा था।

नबी (सल्ल॰) ने कुछ चुने हुए मुसलमानों को बुलाकर विचार-विमर्श

किया। कुछ जोशीले नवजवान और कुछ दूसरे प्रमुख सहाबियों ने, जो बद्र की जंग में भाग नहीं ले सके थे, इच्छा व्यक्त की कि मदीना से बाहर निकलकर दुश्मन का मुक़ाबला किया जाए। नबी (सल्ल०) व्यक्तिगत रूप से यह चाहते थे कि मदीना के अन्दर रहते हुए मज़बूत सुरक्षा-व्यवस्था की जाए और दुश्मन का मुक़ाबला किया जाए। दिलचस्प बात यह है कि मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) के सरदार अब्दुल्लाह-बिन-उबई की भी यही राय थी, कारण अवश्य विपरीत थे।

लेकिन बहुमत का सम्मान करते हुए नबी (सल्ल०) ने मदीना से बाहर निकलकर मुक़ाबला करने का फ़ैसला किया। मुसलमानों की सेना में एक हज़ार सैनिक शामिल थे, जिसमें 50 घुड़सवार और 100 सुरक्षा कवच भी थे।

दुश्मन की सेना उहुद की पहाड़ी के पास 'ऐनैन' नामक स्थान पर रुकी थी। नबी (सल्ल०) अपने सैनिकों को एक गुप्त रास्ते से इस तरह ले गए कि उहुद का पहाड़ मुसलमानों के पीछे था। आप (सल्ल०) नहीं चाहते थे कि दुश्मन मुसलमानों की सेना के मार्ग और उनकी जंगी योजनाओं से अवगत हों।

इस नाज़ुक और संवेदनशील अवसर पर अब्दुल्लाह-बिन-उबई-बिन-सलूल ने मुसलमानों को मानसिक रूप से एक ज़बरदस्त झटका दिया। वह अपने तीन सौ साथियों को लेकर यह कहता हुआ अलग हो गया कि वह क्यों इन लोगों की जान ख़तरे में डाले, जबकि कल के छोकरों की बात को अधिक महत्व दिया गया और बड़े-बूढ़ों और सम्मानित लोगों के सुझावों की क़द्र नहीं की गई।

लेकिन उसके इस क़दम का मक़सद साफ़ तौर पर यह था कि मुसलमानों के दिलों में कमज़ोरी पैदा कर दी जाए और इस अहम अवसर पर उनके दिलों में संदेह के बीज डाल दिए जाएँ। वह अपनी इस कुत्सित योजना में लगभग सफल हो गया था, क्योंकि क़बीला औस की शाखा बनू-हारिसा और ख़ज़रज के बनू-सलमा ने भी वापसी का विचार कर लिया था। लेकिन अल्लाह तआला ने उनके दिलों में ठहराव और मज़बूती पैदा कर दी और वे डटे रहे।

क़ुरआन में उस समय के दृश्य को इन शब्दों में बयान किया है।

> "याद करो जब तुम में से दो गरोह बुज़दिली पर आमादा हो गए थे, यद्यपि अल्लाह उनकी मदद के लिए मौजूद था और मोमिनों को अल्लाह पर ही भरोसा रखना चाहिए।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इंमरान, आयत-122)

7 शव्वाल सन् 3 हिजरी को (शनिवार के दिन) दोनों सेनाएँ भिड़ गईं।

नबी (सल्ल०) क़ुरैश के बाद पहुँचने के बावजूद सामरिक दृष्टि से बेहतर जगह अपना कैम्प लगाने में सफल हो गए थे। मुस्लिम सेना के पीछे उहूद का पहाड़ था, इसलिए पीछे से मुसलमानों को कोई ख़तरा नहीं था। मुसलमानों का कैम्प क़ुरैश के कैम्प की तुलना में कुछ ऊँचाई पर भी था। उहूद के सामनेवाली पहाड़ी यानी जब्ले-ऐनैन एक ऐसी जगह थी जहाँ से क़ुरैश के घुड़सवार मुसलमानों पर पीछे से हमला कर सकते थे। इस ख़तरे को देखते हुए नबी (सल्ल०) ने वहाँ 50 तीरन्दाज़ों की एक टुकड़ी को लगा दिया। इस टुकड़ी का नेतृत्व अब्दुल्लाह-बिन-ज़ुबैर (रज़ि०) कर रहे थे। इस टुकड़ी को सख़्त आदेश दिया गया था कि युद्ध का परिणाम चाहे जो भी हो, उन लोगों को उस जगह से किसी भी स्थिति में नही हटना है। केवल आप (सल्ल०) की ओर से आदेश मिलने की स्थिति में ही ये तीरअन्दाज़ अपनी जगह से हिल सकते थे।

जब युद्ध आरम्भ हुआ तो मुसलमान अपनी संख्या में कम होने के बावजूद सत्य के विरोधियों पर भारी पड़ रहे थे। थोड़ी ही देर में यह साफ़ दिखाई देने लगा कि विजय किसकी होगी। यह लगने लगा कि क़ुरैश संख्या में अधिक होने के बावजूद ज़बददस्त दबाव में आ गए हैं। मुसलमानों ने एक-एक करके उनके दस ध्वजाधारकों को मार गिराया। ये सभी ध्वजाधारक बनू-अब्दुद्दार से सम्बन्ध रखते थे। जब ग्यारहवाँ ध्वजाधारक भी युद्ध में मारा गया तो क़ुरैश का झंडा झुक गया और अन्त तक ज़मीन पर पड़ा रहा।

(सफ़ीउर्रहमान मुबारकपुरी, 1992)

मुसलमानों को भी ज़बरदस्त जानी नुक़सान का सामना करना पड़ा।

नबी (सल्ल॰) के प्यारे चचा हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) को जुबैर-बिन-मुतइम के हब्शी ग़ुलाम, 'वहशी' ने शहीद कर डाला। वह इस युद्ध में केवल और केवल हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) को शहीद करने के लिए शामिल हुआ था। जुबैर का चचा बद्र की जंग में मारा गया था और उसका बदला लेने के लिए ज़ुबैर इस शर्त पर 'वहशी' को जंगे उहद में लाया था कि अगर वह हमज़ा (रज़ि॰) को शहीद कर देता है तो वह उसे ग़ुलामी से आज़ाद कर देगा। वहशी जंग शुरू होते ही हमज़ा (रज़ि॰) की ताक में था और जैसे ही मौक़ा मिला उसने एक नेज़ा मारकर उनको शहीद कर दिया।

मुसलमानों के इस नुक़सान के बावजूद क़ुरैश को अपनी पराजय यक़ीनी नज़र आने लगी और धीरे-धीरे उन्होंने जंग के मैदान से भागना शुरू कर दिया। हिन्दा के नेतृत्व में उन 14 महिलाओं ने पूरी कोशिश की कि क़ुरैशी सैनिकों का हौसला बुलन्द रखा जाए, लेकिन वे असफल रहीं।

उस समय जबकि मुसलमानों की विजय स्पष्ट दिखाई दे रही थी, मुसलमानों से दो बड़ी ग़लतियाँ हुईं। कुछ मुसलमानों ने जब यह देखा कि वे जंग जीत रहे हैं तो क़ुरैश को पूरी तरह पराजित करने के बजाए वे दुश्मनों द्वारा छोड़े गए सामानों को इकट्ठा करने में लग गए।

इससे भी ख़तरनाक ग़लती तीरंदाज़ों से यह हुई कि उन्होंने जब दूसरों को ऐसा करते हुए देखा तो अपनी जगह छोड़कर उनके साथ शामिल हो गए। उस समय तक ये तीरअन्दाज़ बड़ी दिलेरी से लड़ रहे थे और तीन बार ख़ालिद-बिन-वलीद के घोड़सवारों को मार कर भगा चुके थे। ख़ालिद-बिन-वलीद इस कमज़ोर जगह को देखकर बार-बार उसी ओर से हमला कर रहे थे। लेकिन अब तक उन्हें नाकामी ही हाथ आई थी।

जब तीरअन्दाज़ वहाँ से हटने लगे तो अब्दुल्लाह-बिन-ज़ुबैर (रज़ि॰) ने उनको अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का आदेश याद दिलाया। लेकिन 40 तीरअन्दाज़ अपनी जगह छोड़कर हट गए। उनको विश्वास था कि मुसलमान जंग जीत चुके हैं। अब्दुल्लाह-बिन-ज़ुबैर (रज़ि॰) शेष दस तीरअन्दाज़ों के साथ वहाँ डटे रहे और उस नाज़ुक स्थल की रक्षा करते रहे।

ख़ालिद-बिन-वलीद ने जब देखा कि वहाँ अब कुछ ही तीरअन्दाज़ बचे हैं तो सुअवसर जानते हुए हमला कर दिया। अब्दुल्लाह-बिन-ज़ुबैर और उनके शेष साथियों ने जानतोड़ कोशिश से उनका मुक़ाबला किया, लेकिन ख़ालिद-बिन-वलीद ने उनको रौंदते हुए मुसलमानों के पीछे पहुँचकर ऐसा ज़बरदस्त नारा लगाया कि लोगों के दिल दहल गए।

क़ुरैश को लगा कि जंग अब उनकी पकड़ में आ गई है। उनकी न केवल जान में जान आई, बल्कि उसने क़ुरैश के योद्धाओं के दिलों में ज़बरदस्त जोश भर दिया। अब उन्होंने दोबारा संगठित होकर मुसलमानों पर हर दिशा से हमला कर दिया। जंग के इस अचानक बदले हुए नक़्शे में मुसलमान आसानी से क़ुरैशी सैनिकों का निशाना बन गए।

इस अवसर पर नबी (सल्ल॰) ने ज़बरदस्त हौसला और हिम्मत का प्रमाण दिया और केवल नौ जाननिसार योद्धाओं के साथ मैदाने-जंग में जमे रहे। यह स्थान ख़ालिद-बिन-वलीद के घुड़सवारों के पास ही था। आप (सल्ल॰) ने अपनी जान की परवाह न करते हुए भागते हुए मुसलमानों को ललकारा और वापस आने का आदेश दिया। लेकिन इस ललकार ने न केवल मुसलमानों को आप (सल्ल॰) की ओर ध्यान खींचा, बल्कि क़ुरैश को भी पता चल गया कि आप (सल्ल॰) कहाँ हैं।

आप (सल्ल॰) को क़ुरैश के प्यादा सेना ने सामने से और ख़ालिद के घुड़सवारों ने पीछे से घेर लिया। सम्भवतः जंगे-उहुद की सबसे ख़तरनाक लड़ाई इसी जगह पर हुई। एक ऐसा अवसर भी आया कि आप (सल्ल॰) के पास केवल दो जाँबाज़ ही बचे। लेकिन अन्ततः मुसलमान दोबारा संगठित हुए और दुश्मनों के बीच हमला करते हुए आप (सल्ल॰) तक पहुँचे।

जंग अपने चरम पर थी तभी हज़रत मुसअब-बिन-उमैर (रज़ि॰) शहीद हो गए। हज़रत मुसअब (रज़ि॰) आप (सल्ल॰) से बहुत हद तक मिलते-जुलते थे। उनके शहीद होते ही यह अफ़वाह फैल गई कि (नऊज़ु बिल्लाह) नबी (सल्ल॰) नहीं रहे। इससे मुसलमानों का एक गरोह ऐसी मायूसी का शिकार हुआ कि जंग के मैदान से निकल गया। दूसरा गरोह उन लोगों का था

जिन्होंने जंग का मैदान तो नहीं छोड़ा, लेकिन इतने निराश हो गए कि जंग से अपने आप को अलग कर लिया। तीसरा गरोह उन जाँबाज़ों का था जो अंतिम साँस तक मुक़ाबला करने का प्रण लेकर न केवल स्वयं बहुत हिम्मत और बहादुरी से लड़े, बल्कि दूसरों को भी उसपर उभारा और अन्ततः दूसरे दो गरोह भी युद्ध में वापस लौट आए।

इस अफ़वाह से क़ुरैश को लगा कि उनका उद्देश्य पूरा हो चुका है और उन्होंने अपने हमलों की तीव्रता को कम कर दिया। इससे नबी (सल्ल॰) और आप (सल्ल॰) के प्यारे साथियों को मौक़ा मिल गया कि वे उस जगह से हटकर किसी सुरक्षित जगह तक पहुँच सकें।

क़ुरैश ने अन्त तक कोशिश की कि मुसलमानों को पूरी तरह ख़त्म कर दें, लेकिन वे सफल नहीं हो सके। अबू-सूफ़ियान ने अब मक्का वापसी का इरादा किया। इसी बीच क़ुरैश के कुछ लड़ाकुओं ने मुसलमानों की लाशों के साथ अभद्रता की और लाशों का अंग भंग करना शुरू कर दिया। हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) का भी अंग-भंग किया, जिनको वह्शी ने शहीद किया था।

वापसी से पहले अबू-सूफ़ियान मुसलमानों के कैम्प के पास दोबारा वापस आया और ऊँचे स्वर में नबी (सल्ल॰), हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) और हज़रत उमर (रज़ि॰) का नाम लेकर उनके बारे में पूछा।

जब उसे पता चला कि ये तमाम लोग ज़िन्दा हैं तो उसने मुसलमानों को बुरा-भला कहना और ताने देना शुरू किया, जिसका जवाब मुसलमानों ने भी दिया। उसके बाद उसने मुसलमानों को चुनौती दी कि अगले साल फिर बद्र में मुसलमानों के साथ आमना-सामना करेंगे। इस चुनौती को मुसलमानों ने क़बूल कर लिया।

उहुद के युद्ध में मुसलमानों का बड़ा जानी नुक़सान हुआ। मुसलमानों के 70 साथी (सहाबी) शहीद हुए जबकि क़ुरैश के 22 लोग भी मारे गए।

3:5 उहुद के नकारात्मक प्रभाव

यद्यपि उहुद की जंग में क़ुरैश को कोई निश्चित विजय प्राप्त नहीं हुई थी, किन्तु मुसलमानों को ज़बरदस्त नुक़सान का सामना करना पड़ा था। मुसलमानों के बहुत-से उत्कृष्ट वीर-बहादुरों ने शहादत पाई थी और इससे मुसलमानों की साख को ज़बरदस्त नुक़सान पहुँचा था। अरब के क़बीले जो इस युद्ध के परिणाम की प्रतीक्षा कर रहे थे, अब उनको आभास होने लगा कि मुसलमान अजय नहीं है। उन्हें पराजित किया जा सकता है।

अब उन क़बीलों को बढ़ावा मिल गया कि वे मुसलमानों के विरुद्ध खुले आम षड्यन्त्र रचने लगें। नबी (सल्ल॰) ने जो कि समझ-बूझ रखनेवाले हौसलामन्द मार्गदर्शक थे, इस बदलते माहौल का पूरा एहसास था। आप (सल्ल॰) ने उस समय मुसलमानों को बेहतरीन नेतृत्व प्रदान किया और परिस्थितियों को अनुकूल बनाने की बहुमुखी कोशिशें कीं।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उस समय कई ऐसे क़दम उठाए जिससे उहुद के नुक़सान को कम-से-कम किया जा सके। मुसलमानों के मन से उसके नकारात्मक प्रभाव समाप्त हों और दूसरों की नज़र में मुसलमानों का बद्र के बाद मिलनेवाला स्थान लौटाया जा सके।

सबसे पहला क़दम आप (सल्ल॰) ने यह उठाया कि उहुद की जंग के दूसरे ही दिन सुबह सवेरे यह घोषण की कि आप (सल्ल॰) क़ुरैश की सेना का पीछा करने जा रहे हैं।

जाँबाज़ सहाबियों ने, जो ज़ख़्मों से चूर थे और बुरी तरह थके हुए थे, आप (सल्ल॰) के आदेश का बिना कुछ प्रश्न किए पालन किया। आप (सल्ल॰) मुसलमानों की यह सेना लेकर हमरा-अल-असद तक गए। जीवनी लिखने वाले लिखते हैं कि अबू-सूफ़ियान जो 'रौहा' नामक स्थान पर ठहरा हुआ था, वह मदीना पर दोबारा आक्रमण करने का मन बना रहा था। जब उसे नबी

(सल्ल॰) के इस क़दम की सूचना मिली तो उसने यह विचार दिल से निकाल दिया और सीधे मक्का वापस हो गया।

नबी (सल्ल॰) के इस हौसले और सूझ-बूझ वाली कार्रवाई से मुसलमानों का मान-सम्मान कुछ हद तक दोबारा बहाल हुआ। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि बद्र की विजय के बाद मुसलमानों को पूरे अरब में जो गौरव और सम्मान मिला था, उसे बहुत बड़ा धक्का लगा था और केवल इस एक क़दम से नुक़सान की भरपाई सम्भव नहीं थी।

आन्तरिक शत्रु, जिनमें यहूदी और मुनाफ़िक़ (कपटी एवं पाखण्डी) लोग आगे-आगे थे, उन्होंने मुसलमानों के ख़िलाफ़ एक के बाद एक षड्यंत्र शुरू कर दिए। अब आस-पास के अनेकेश्वरवादी क़बीले भी मुसलमानों को अपना निशाना बनाने लगे और मुसलमानों की कमज़ोरी का फ़ायदा उठाने की कोशिश में लग गए।

क़बीला बनू-असअद और क़बीला बनू-हुज़ैल मदीना पर हमले के लिए पर तौल रहे थे। यह ख़बर सुनते ही नबी (सल्ल॰) ने 150 लोगों की एक टुकड़ी अबू सलमा (रज़ि॰) के नेतृत्व में उनकी जड़ काटने के लिए भेजी। समय पर की गई इस कार्रवाई ने बनू-असअद को हैरान कर दिया। वे अपना डेरा छोड़कर फ़रार हो गए। अपनी समस्त धन-सम्पत्ति और जानवरों को छोड़कर भागना स्पष्ट करता है कि उनको इस प्रकार की कार्रवाई की आशा मुसलमानों से बिलकुल भी नहीं थी। यह उहुद की जंग के केवल दो महीने बाद की घटना है और मुहर्रम 4 हिजरी तदानुसार 625 ई॰ में पेश आया था।

मुसलमानों का एक और दुश्मन ख़ालिद-बिन-सुफ़ियान, मुसलमानों पर हमला करने के लिए सेनाएँ इकट्ठी कर रहा था। सूचना मिलते ही नबी (सल्ल॰) ने अब्दुल्लाह-बिन-उनैस (रज़ि॰) को उसका सिर कुचलने के लिए भेजा। अब्दुल्लाह (रज़ि॰) ने ख़ालिद-बिन-सुफ़ियान को आमने-सामने के युद्ध में पराजित कर दिया और विजयी होकर वापस लौटे। यह घटना भी सन् 4 हिजरी माह मुहर्रम की ही है।

महीना सफ़र सन् 4 हिजरी में अज़्ल एवं क़ारह क़बीले के कुछ लोग

मदीना आए और नबी (सल्ल॰) से आग्रह किया कि उनके साथ कुछ धर्म प्रचारकों को भेज दें, ताकि वे उनके क़बीले के लोगों को इस्लाम सिखा सकें और क़ुरआन की शिक्षा दें। नबी (सल्ल॰) ने दस सहाबियों को इस काम के लिए नियुक्त किया और उनके साथ भेज दिया। रजीअ् के जल-स्रोत के पास पहुँचने पर क़बीला बनू-लह्यान ने अज़्ल और क़ारह के उकसाने पर आठ लोगों को शहीद कर दिया और दो को क़ैदी बना लिया। उन दो क़ैदियों को क़ुरैश के हाथ बेच दिया। इतिहास में आता है कि क़ुरैश ने उन दो सहाबियों की बड़ी निर्ममता से हत्या कर दी।

उसी महीने में लगभग उसी तरह की घटना में 70 सहाबियों को, जिनको नबी (सल्ल॰) ने इस्लाम का पैग़ाम पहुँचाने के लिए भेजा था, आमिर-बिन-तुफ़ैल के उकसाने पर बनू-सुलैम के तीन क़बीलों ने मिलकर मऊना के कुएँ के पास शहीद कर दिया। इन सहाबियों को उस इलाक़े के मशहूर सरदार अबू-बराअ् के निवेदन पर उनकी सुरक्षा में भेजा गया था। उन सत्तर सहाबियों में से केवल अम्र-बिन-उमैया (रज़ि॰) जीवित बचे, जिनको क़ैदी बना लिया गया। बाद में उनको आमिर-बिन-तुफ़ैल ने अपनी माँ की प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए रिहा कर दिया। उसकी माँ ने नज़र मानी थी कि वे एक ग़ुलाम को आज़ाद करेंगी।

वहाँ से वापसी पर अम्र-बिन-उमैया (रज़ि॰) ने बनू-कलाब के दो लोगों को अपने साथियों की शहादत के प्रतिशोध में मार डाला। अम्र (रज़ि॰) को यह मालूम नहीं था कि नबी (सल्ल॰) बनू-कलाब के साथ शान्ति समझौते पर हस्ताक्षर कर चुके हैं।

एक के बाद एक होनेवाली इन घटनाओं ने नबी (सल्ल॰) सहित सभी मुसलमानों को बुरी तरह प्रभावित किया। रजीअ् और मऊना के कुएँ की घटनाओं ने आप (सल्ल॰) को बहुत दुखी कर दिया था। इसके उपरांत आप (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि बनू-कलाब के दो लोगों, जिनकी अम्र-बिन-उमैया (रज़ि॰) ने हत्या कर दी थी, का ख़ूनबहा (अर्थदण्ड) अदा किया जाए। ख़ूनबहा अदा करना आसान नहीं था। एक ख़ूनबहा सौ ऊँटों के बराबर होता है। आप (सल्ल॰) कुछ सहाबियों के साथ बनू-नज़ीर के पास गए, ताकि उसमें

उनका हिस्सा ले सकें। मुसलमानों और यहूदियों के बीच जो सन्धि थी यह ठीक उस सन्धि के अनुकूल था। बनू-नज़ीर के कुछ सरदारों ने नबी (सल्ल०) और उनके सहाबियों से एक दीवार के नीचे प्रतीक्षा करने को कहा और कहा कि वे उनका हिस्सा इकट्ठा करके लाते हैं।

ख़ूनबहा का हिस्सा जमा करने के बदले ये लोग अपने एक आदमी के पास गए, उसे उकसाया कि वह उस छत पर चढ़ जाए और नबी (सल्ल०) को (ईश्वर न करे) एक पत्थर फेंककर शहीद कर डाले। उनकी इस घिनौनी साज़िश को अल्लाह के आदेश से हज़रत जिबरील (अलैहि०) ने नबी (सल्ल०) को बता दिया और आप (सल्ल०) तुरन्त उस जगह से हट गए।

वापसी के बाद नबी (सल्ल०) ने सहाबियों को बनू-नज़ीर की इस साज़िश के बारे में बताया। बनू-नज़ीर को यह चेतावनी दी गई कि वे दस दिन के अन्दर मदीना छोड़कर चले जाएँ। बनू-नज़ीर ने मुसलमानों की शर्त मानने से इनकार कर दिया। उनको उम्मीद थी कि उनके मज़बूत क़िलों में मुसलमान उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ पाएंगे। उनको अब्दुल्लाह-बिन-उबई, जो मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) का सरदार था, का समर्थन भी प्राप्त था।

निश्चित की गई अवधि समाप्त होने के बाद मुसलमानों ने उनके उस क़िले को घेर लिया। यह घेराव केवल 6 दिनों तक रहा और जब कोई भी बनू-नज़ीर के समर्थन में नहीं आया तो उन्होंने हथियार डाल दिए। नबी (सल्ल०) ने उनको मदीना से अपनी धन-सम्पत्ति के साथ जाने की अनुमति दे दी और वे मदीना से दूर ख़ैबर की घाटी में चले गए जहाँ यहूदियों के कई दूसरे क़बीले भी आबाद थे। यह महत्वपूर्ण घटना रबीउल-अव्वल सन् 4 हिजरी की है।

उसी साल रजब के महीने में नबी (सल्ल०) ने 1500 मुसलमानों के साथ अबू-सुफ़ियान की चुनौती का जवाब देने के लिए बद्र की घाटी में पहुँचकर पड़ाव डाला और दुश्मन की प्रतीक्षा करने लगे। अबू-सुफ़ियान भी मक्का से निकला, लेकिन जब उसे पता चला कि मुसलमान पहले ही बद्र के लिए निकल चुके हैं तो उसकी हिम्मत टूट गई और वह आधे रास्ते से ही

मक्का लौट गया। उसने बहाना किया कि मौसम बहुत सख़्त है और सेना के लिए पर्याप्त ग़ल्ला उपलब्ध नहीं है।

आठ दिनों तक वहाँ प्रतीक्षा करने के बाद मुसलमान मदीना लौट आए। उनको अबू-सुफ़ियान की बीच रास्ते से वापसी की सूचना मिल चुकी थी।

इस घटना से अरबों में यह सशक्त सन्देश गया कि अब क़ुरैश अकेले मुसलमानों से युद्ध करने और उन्हें पराजित करने की स्थिति में नहीं हैं। इन परिस्थितियों में आप (सल्ल॰) का दूरदर्शी तथा साहसी नेतृत्व खुलकर सामने आया। आपके हौसले और दूरदर्शिता के लोग क़ायल हो गए। आप (सल्ल॰) का अल्लाह पर अटूट विश्वास और आप (सल्ल॰) के उस आसमानी सन्देश के प्रति निष्ठा ने मुसलमानों को न सिर्फ़ उन हंगामी परिस्थितियों से निपटने का हौसला दिया, बल्कि उन परिस्थितियों से सफलतापूर्वक बाहर भी निकाला।

उन कठिन परिस्थितियों में भी लोगों को इस्लाम की ओर बुलाने का काम पूरे उत्साह के साथ जारी था और लोग लगातार इस्लाम में आ रहे थे। नबी (सल्ल॰) ने ज़ैद-बिन-साबित (रज़ि॰) को यह आदेश दिया कि वे इब्रानी भाषा सीखें। उनको सुरियानी भाषा सीखने का भी आदेश दिया और यह आदेश इसलिए कि आप (सल्ल॰) विदेशी शासकों से पत्र-व्यवहार कर सकें और उनको सत्य-धर्म की ओर बुला सकें।

इस दौरान वह्य के माध्यम से मुसलमानों की विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए अल्लाह तआला ने अनेक आदेश अवतरित किए। शराब और जुए के निषेध का आदेश भी उन्हीं दिनों में अवतरित हुआ। क़ुरआन में है—

> "ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, यह शराब और जुआ और ये देव-स्थान (आस्ताने) और पासे, ये सब गन्दे शैतानी काम हैं, इनसे बचो, उम्मीद है कि तुम्हें सफलता प्राप्त होगी। शैतान तो यह चाहता है कि शराब और जुए के द्वारा तुम्हारे बीच दुश्मनी और नफ़रत व द्वेष डाल दे और तुम्हें अल्लाह की याद से और नमाज़ से रोक दे। फिर क्या तुम इन चीज़ों से दूर रहोगे? अल्लाह और उसके रसूल

की बात मानो और बाज़ आ जाओ, लेकिन यदि तुमने आज्ञा की अवहेलना की तो जान लो कि हमारे रसूल पर बस साफ़-साफ़ आदेश पहुँचा देने का उत्तरदायित्व था।"

(क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयतें-90 से 92)

इसी बीच नबी (सल्ल॰) ने ज़ैनब-बिन्त-ख़ुज़ैमा (रज़ि॰) जो अब्दुल्लाह-बिन-जहश (रज़ि॰) की विधवा थीं, से निकाह किया। हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-जहश (रज़ि॰) उहुद में शहीद हुए थे। ज़ैनब (रज़ि॰) को 'उम्मुल मसाकीन' अर्थात 'ग़रीब एवं बेसहारों की माँ' के नाम से जाना जाता है। ग़रीबों और मिस्कीनों की सहायता करने में वे सबसे आगे रहती थीं और सदैव उनके काम आतीं। लेकिन केवल 9 महीने के बाद उनकी मृत्यु हो गई।

उसी साल आप (सल्ल॰) ने विधवा उम्मे-सलमा (रज़ि॰) से निकाह किया। वह अबू-सलमा (रज़ि॰) की पत्नी थीं। अबू-सलमा (रज़ि॰) ने बिलकुल शुरुआती दौर में इस्लाम क़बूल किया था। वे उन लोगों में भी शामिल थे जिन्होंने हब्शा हिजरत की थी। हब्शा से वापसी के कुछ दिनों बाद ही उन्होंने मदीना हिजरत की। अबू-सलमा (रज़ि॰) उहुद की जंग के ज़ख़्मों से न उबर सके और कुछ दिनों के बाद ही उनकी मृत्यु हो गई। उनकी पत्नी उम्मे-सलमा (रज़ि॰) की इद्दत[1] पूरी होने के बाद हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) और हज़रत उमर (रज़ि॰) ने उनको निकाह का सन्देश भेजा, लेकिन उन्होंने इनकार कर दिया। नबी (सल्ल॰) ने पैग़ाम भेजा तो हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) ने उसे स्वीकार कर लिया।

नबी (सल्ल॰) से शादी के समय उनकी उम्र काफ़ी थी, लेकिन नबी (सल्ल॰) की पत्नियों में उनकी मृत्यु सबसे अन्त में हुई। इतिहासकारों के अनुसार उनकी मृत्यु सन् 61 हिजरी में हुई।

शाबान महीना, सन् 4 हिजरी में नबी (सल्ल॰) के नवासे हज़रत हसन (रज़ि॰) का जन्म हुआ और उसके ठीक ग्यारह महीने के बाद हज़रत हुसैन

1. पति के देहान्त के बाद चार महीने दस दिन का समय जिसके बाद ही विधवा की दूसरी शादी हो सकती है।

(रज़ि॰) पैदा हुए।

सन् 5 हिजरी के माह मुहर्रम में नबी (सल्ल॰) को यह सूचना मिली कि क़बीला अन्मार की दो शाखाएँ बनू-सालबा और बनू-मुहारिब मिलकर मदीना पर हमला करने की योजना बना रही हैं। आप (सल्ल॰) 400 सहाबियों के साथ उनका सामना करने के लिए मदीना से निकले। आप (सल्ल॰) द्वारा समय पर उठाए गए इस क़दम से भयभीत होकर दोनों क़बीले पहाड़ों में भाग गए। इस मुहिम को 'ज़ातुर्रिक़ाअ्' के नाम से याद किया जाता है।

अल-सलाबी के अनुसार 'सलातुल-ख़ौफ़'[1] इसी अवसर पर अदा की गई थी।

रबीउल-अव्वल सन् 5 हिजरी में आप (सल्ल॰) को सूचना मिली कि शत्रुओं की एक सेना दौमतुल-जन्दल में, जो मदीना से लगभग 450 कि॰मी॰ की दूरी पर स्थित है, इकट्ठा हो रही है। यद्यपि सख़्त गर्मी का मौसम था, जो उस यात्रा के लिए किसी भी प्रकार से उचित नहीं था, लेकिन आप (सल्ल॰) त्वरित कार्रवाई करते हुए एक हज़ार सहाबियों के साथ दुश्मनों की ओर बढ़े। आप (सल्ल॰) और आपके प्यारे सहाबी (रज़ि॰) रात में सफ़र करते और दिन में विश्राम करते थे। यह गर्मी की तेज़ी से बचने के लिए किया गया था। आप (सल्ल॰) के अचानक आ जाने से दुश्मनों के पसीने छूट गए और वे भाग खड़े हुए। मुसलमानों के लिए यह सफ़र बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ। उनको अरब के उत्तरी क्षेत्रों में रहनेवाले बहुत-से क़बीलों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी मिलीं। आप (सल्ल॰) को उन क़बीलों की सैनिक शक्ति के सम्बन्ध में भी बड़ी-बड़ी जानकारियाँ मिलीं। ये जानकारियाँ बाद में मुसलमानों के न केवल उस क्षेत्र में बल्कि एशिया और अफ्रीका में सैनिक वर्चस्व का कारण भी बनीं। (अल-सलाबी, 2005, भाग-2, पृष्ठ 1304)

इस सफ़र से वापसी में नबी (सल्ल॰) ने उवैना-बिन-हसन से, जो एक महत्वपूर्ण क़बीले का नेता था, शान्ति-समझौता किया और उसे मदीना के पास मवेशी चराने की अनुमति प्रदान की।

1. संकट के समय नमाज़।

शाबान 5 हिजरी में नबी (सल्ल॰) सात सौ सैनिकों और 30 घुड़सवारों को लेकर बनू-मुस्तलिक़ की ओर रवाना हुए। यह क़बीला मदीना पर हमला करने की तैयारी कर रहा था। नबी (सल्ल॰) ने बुरैदा-बिन-हसीब अस्लमी (रज़ि॰) को भेजकर इस सूचना की पुष्टि की। बुरैदा (रज़ि॰) ने बनू-मुस्तलिक़ के सरदार हारिस-बिन-अबी-जिरार से मुलाक़ात करके सूचना हासिल की। हारिस को ऐसा लगा कि बुरैदा उनके समर्थक और हमदर्द हैं।

एक संक्षिप्त जंग के बाद, जिसमें बनू-मुस्तलिक़ के दस लोग मारे गए और एक मुसलमान की शहादत हुई, बनू-मुस्तलिक़ ने हथियार डाल दिया। मुसलमानों को 600 क़ैदी, दो हज़ार ऊँट, और पाँच हज़ार भेड़ बकरियाँ हाथ आईं। जब मदीना आने के बाद वितरण के समय बनू-मुस्तलिक़ के सरदार की बेटी जुवैरिया, साबित-बिन-क़ैस (रज़ि॰) के हिस्से में आईं। जुवैरिया ने साबित (रज़ि॰) को फ़िदिया (मुक्ति-धन) के बदले रिहा कर देने का आग्रह किया, जिसे हज़रत साबित (रज़ि॰) ने मान लिया। जुवैरिया, नबी (सल्ल॰) की सेवा में हाज़िर हुईं और मदद की गुहार लगाई। आप (सल्ल॰) ने उनकी ओर से फ़िदिए की रक़म अदा कर दी। जुवैरिया (रज़ि॰) ने इस सद्व्यवहार से प्रभावित होकर इस्लाम क़बूल कर लिया। तत्पश्चात् नबी (सल्ल॰) से निकाह करके नबी (सल्ल॰) की दाम्पत्य में आ गईं। इस शादी के कारण न केवल मुसलमानों ने जंगी क़ैदियों को रिहा कर दिया, बल्कि ग़नीमत का माल भी यह कहते हुए वापस कर दिया कि वे नबी (सल्ल॰) के परिवार के लोगों को ग़ुलाम नहीं बना सकते। उसको देखकर जुवैरिया के पिता हारिस (रज़ि॰) और दूसरे तमाम जंगी क़ैदियों ने भी इस्लाम क़बूल कर लिया।

हज़रत आइशा (रज़ि॰) इस घटना के बारे में कहती हैं कि "मैं किसी भी ऐसी महिला को नहीं जानती जो अपने परिवार और क़बीलावालों के लिए जुवैरिया (रज़ि॰) से अधिक दया व कृपा की वजह हुई हो।"

(माजिद अली ख़ान, 2004, पृष्ठ-217)

किन्तु इस सफ़र से वापसी में दो घटनाएँ ऐसी घटीं जिससे नबी (सल्ल॰) को बहुत सदमा पहुँचा और पूरे मुस्लिम समाज में एक तरह की अशान्ति और बेचैनी पैदा हो गई।

पहली घटना तो एक मुहाजिर और अनसार के बीच एक झगड़े की है। यह झगड़ा ख़तरनाक स्थिति को पहुँच जाता, अगर नबी (सल्ल॰) समय पर बीच-बचाव न करा देते। आप (सल्ल॰) ने स्थिति को बिगड़ने से बचा लिया।

इस घटना ने मुनाफ़िक़ों के सरदार अब्दुल्लाह-बिन-उबई को एक और मौक़ा दे दिया कि मुसलमानों में बिगाड़ पैदा करे। उसने एक निजी सभा में कहा कि प्रतिष्ठित लोग मदीना पहुँचकर अप्रतिष्ठित लोगों को निकाल बाहर करेंगे। उसने अनसार को भी मुहाजिरीन की इस तरह खुले अन्दाज़ में सहायता करने की कड़ी आलोचना की और कहा कि वे ही सारी परेशानियों का कारण हैं।

जब इस बात की सूचना नबी (सल्ल॰) को मिली तो आप (सल्ल॰) ने अब्दुल्लाह-बिन-उबई से इस बारे में पूछा। किन्तु वह साफ़ मुकर गया और उसके साथियों ने भी उसका साथ दिया।

नबी (सल्ल॰) ने उसी समय ज़रूरी कार्रवाई की, ताकि स्थिति और अधिक न बिगड़े। आप (सल्ल॰) ने कोशिश की कि यह बात मुस्लिमों में चर्चा का विषय न बन जाए। आप (सल्ल॰) ने तुरन्त कूच करने का आदेश जारी किया। यद्यपि उस समय मौसम कूच करने के लिए मुनासिब नहीं था।

मुसलमानों की सेना पूरे दिन, फिर सारी रात और दूसरे दिन देर तक लगातार चलती रही और फिर जब नबी (सल्ल॰) ने विश्राम का आदेश दिया तो सारे लोग थकन के कारण तुरन्त सो गए। अन्ततः क़ुरआन ने अब्दुल्लाह-बिन-उबई की मुनाफ़िक़त (कपटाचार) को पूरी तरह खोलकर रख दिया। क़ुरआन इस घटना को इन शब्दों में बयान करता है—

> "ये कहते हैं कि हम मदीना वापस पहुँच जाएँ तो जो प्रतिष्ठित है वह अप्रतिष्ठित को वहाँ से निकाल बाहर करेगा। यद्यपि प्रतिष्ठा तो अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) और निष्ठावान मुस्लिमों के लिए है, मगर ये मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) जानते नहीं हैं।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-63 मुनाफ़िक़ून आयत-8)

अब्दुल्लाह-बिन-उबई के बेटे एक सच्चे मुसलमान थे। जब उन्होंने इस

ख़बर के बारे में सुना तो उन्होंने नबी (सल्ल॰) से अनुमति मांगी कि वे अपने पिता का सिर काट दें। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने उन्हें इसकी अनुमति नहीं दी। इसके विपरीत नबी (सल्ल॰) ने उन्हें आदेश दिया कि वे अपने पिता के साथ सद्व्यवहार और भलाई का आचरण अपनाएँ।

लेकिन इससे भी अधिक ख़तरनाक बात अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की प्रिय पत्नी हज़रत आइशा (रज़ि॰) के चरित्र-हनन की कोशिश थी। मुनाफ़िक़ीन और कुछ अन्य लोगों ने एक मामूली सी बात का बतंगड़ बना दिया और नबी (सल्ल॰) को अत्यधिक मानसिक तकलीफ़ पहुँचाई।

मामला उस समय का है जब कारवाँ मदीना के क़रीब पहुँचनेवाला था। उस सफ़र में हज़रज आइशा (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के साथ थीं। जब सेना एक जगह विश्राम करने के बाद कैम्प खाली कर रही थी तो हज़रत आइशा (रज़ि॰) शौचक्रिया के लिए कैम्प से बाहर गई हुई थीं। जब वह वापस आईं तो देखा कि क़ाफ़िला जा चुका है। उनकी हौदज (पालकी) को ऊँट के ऊपर सेवकों ने बिना यह देखे रख दिया कि वह अन्दर हैं या नहीं। हज़रत आइशा (रज़ि॰) बहुत ही दुबली-पतली थीं। सम्भवत; इसलिए सेवकों को इसका अन्दाज़ा नहीं हो सका कि वह अन्दर हैं या नहीं।

हज़रत आइशा (रज़ि॰) वहीं बैठकर इन्तिज़ार करती रहीं। उनको विश्वास था कि लोगों को जब पता चलेगा कि वे छूट गई हैं तो वे उनको ढूँढने ज़रूर आएँगे। वे वहीं बैठे-बैठे सो गई और उस समय उनकी आँख खुली जब किसी के मुँह से उन्होंने 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन' सुना। ये अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के एक सहाबी सफ़वान-बिन-मुअत्तल (रज़ि॰) थे। जिनकी ज़िम्मेदारी थी कि वे पीछे रह जानेवाले सामान को समेट कर लाएँ। जब उन्होंने वहाँ हज़रत आइशा (रज़ि॰) को लेटे हुए पाया तो उनको लगा कि वे जीवित नहीं हैं। लेकिन जब हज़रत आइशा (रज़ि॰) उनकी आवाज़ से जाग गईं तो उन्होंने उनको ऊँट पर सवार कराया और उनको क़ाफ़िले तक लेकर आए। यद्यपि लोगों ने हज़रत आइशा (रज़ि॰) को ऊँट पर सवार और सफ़वान-बिन-मुअत्तल (रज़ि॰) को पैदल ऊँट की लगाम पकड़े हुए पाया, लेकिन मुनाफ़िक़ीन को मौक़ा मिल गया कि रसूल (सल्ल॰) को मानसिक कष्ट पहुँचाएँ।

उन्होंने इस घटना के बारे में निन्दनीय अफ़वाहें फैलानी शुरू कर दीं।

उनकी अफ़वाहें मदीना भी पहुँच गईं। यद्यपि सच्चे मुसलमानों ने इस पर विश्वास नहीं किया, लेकिन बहुत-से सीधे-साधे मुसलमान इस षड्यंत्र से प्रभावित हो गए। नबी (सल्ल॰) ने अफ़वाह फैलानेवालों को किसी प्रकार की सज़ा नहीं दी। क्योंकि यह घटना स्वयं आप (सल्ल॰) की पत्नी से सम्बन्धित थीं, इसलिए आप (सल्ल॰) ने इस विषय को बड़े ही धैर्य और संयम के साथ सहन किया और सम्प्रभु अल्लाह के आदेश की प्रतीक्षा करते रहे। अन्ततः ईश्वरीय प्रकाशना (वह्य) अवतरित हुई—

> "जो लोग यह बोहतान गढ़ लाए हैं, वे तुम्हारे ही अन्दर का एक टोला है। इस घटना को अपने लिए बुरा न समझो, बल्कि यह तुम्हारे लिए भलाई ही है। जिसने इसमें जितना हिस्सा लिया उसने उतना ही गुनाह समेटा और जिस व्यक्ति ने उसकी ज़िम्मेदारी का बड़ा हिस्सा अपने सिर लिया उसके लिए तो घोर ईश्वरीय प्रकोप है।" (क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-11)

इसके बाद इस विषय में जिन लोगों ने बड़ी भूमिका निभाई थी, उनको इस्लामी क़ानून के अनुसार सज़ा दी गई। क़ुरआन में है—

> "और जो लोग पाकदामन औरतों पर तोहमत लगाएँ, फिर चार गवाह लेकर न आएँ, उनको अस्सी कोड़े मारो और उनकी गवाही कभी स्वीकार न करो और वे स्वयं ही झूठे हैं।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-4)

इन घटनाओं ने मुनाफ़िक़ीन (कपटाचारी) को पूरी तरह कटघरे में खड़ा कर दिया और उनकी पहचान सबके सामने साफ़-साफ़ खोलकर रख दी। समाज में उन लोगों को अब तक जो मान-सम्मान प्राप्त था, वह समाप्त हो गया। नबी (सल्ल॰) के मदीना आने से पहले उनकी जो भी प्रतिष्ठा रही हो, अब तो अपमान और पतन ही उनके भाग्य में था।

3:6 ख़न्दक़ (अहज़ाब) की जंग

बद्र में दोबारा युद्ध की चुनौती देने के बावजूद जब क़ुरैश अगले साल सामने आने का साहस न जुटा सके तो पूरे अरब उपमहाद्वीप को यह साफ़ पता चल गया कि अब क़ुरैश में मुसलमानों का अकेले सामना करने का साहस नहीं है। मुसलमान अब सामरिक दृष्टि से उनसे अधिक शक्तिशाली थे। इस अवसर पर यहूदी क़बीला बनू-नज़ीर के सरदारों ने, जिनको मदीना शहर से निकाल दिया गया था, यह कोशिश की कि मुसलमानों के मुक़ाबले में सारे अरब को ला खड़ा किया जाए और मदीना की ईंट-से-ईंट बजा दी जाए। हैय्य-बिन-अख़तब नामक सरदार इस कोशिश में सबसे आगे था।

बनू-नज़ीर के सरदारों ने पूरे अरब उपद्वीप का दौरा करके सारी क़बायली शक्तियों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ एक मोर्चे पर इकट्ठा करने की कोशिशें शुरू कर दीं और अन्ततः अपने प्रयास में सफल भी हो गए। उन्होंने एक विशाल सेना का गठन किया, जिसमें अरब के सभी शक्तिशाली क़बीले शामिल थे। इस सेना के लिए यहूदी साहूकारों ने पूँजी उपलब्ध कराई। इस सेना की कम-से-कम संख्या इतिहासकारों के अनुसार दस हज़ार थी। जबकि कुछ इतिहासकार इससे तीन गुना यानी तीस हज़ार से भी अधिक बताते हैं। अरब में इतनी बड़ी सेना की इससे पहले कल्पना भी नहीं की गई थी। जिसने भी इस सेना के सम्बन्ध में सुना, उसे विश्वास हो गया कि अब मदीना में मुसलमानों का भविष्य निश्चित रूप से अंधकारमय है।

नबी (सल्ल॰) को इस सेना और उसकी तैयारी की सूचना शीघ्र मिल गई। इसकी संवेदनशीलता को भाँपते हुए नबी (सल्ल॰) ने अपने प्रमुख सहाबियों (रज़ि॰) को विचार-विमर्श हेतु बुलाया और उनको पूरी स्थिति से अवगत कराया। आप (सल्ल॰) ने सहाबियों (रज़ि॰) से उस सेना का सामना करने के बारे में सुझाव भी माँगे।

देर तक चलनेवाली इस बैठक में विभिन्न प्रकार के सुझावों पर विचार-विमर्श करने के बाद अन्ततः जिस रणनीति के अपनाने का निर्णय लिया गया, उसकी कोई मिसाल अरब के इतिहास में नहीं मिलती थी। जिन सहाबी (रज़ि॰) ने यह सुझाव दिया था वे न तो मक्का के मुहाजिरों में से थे और न ही अनसार के किसी क़बीले से। ये ईरान से आए हुए सलमान फ़ारसी (रज़ि॰) थे, जिन्होंने शहर के चारों ओर ख़न्दक़ (खाई) खोदकर दुश्मनों की सेना से मदीना को सुरक्षित रखने की राय दी। उन्होंने कहा कि ईरान में युद्ध में यदि दुश्मन सेना की संख्या बहुत अधिक हो तो यही रणनीति अपनाई जाती है।

इस सुझाव पर अमल करने में देर नहीं की गई। मदीना के पूर्व और पश्चिम में ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ थीं और दक्षिण की ओर खजूर के घने बाग़ थे। इन तीनों दिशाओं से दुश्मन का हमला करना लगभग अंसभव था। दक्षिण-पश्चिम में बनू-क़ुरैज़ा, जो मुसलमानों के मित्र थे, का ज़बरदस्त क़िला था। बनू-क़ुरैज़ा से मुसलमानों की सन्धि थी कि बाहरी शक्तियों के हमले की स्थिति में वे शहर की सुरक्षा में मुसलमानों की सहायता करेंगे। फ़ैसला लिया गया कि उत्तर की ओर ख़न्दक़ खोदी जाएगी और सलाअ् की पहाड़ी को पीछे रखा जाएगा। यह ख़न्दक़ पाँच हज़ार फिट लम्बी, नौ फिट चौड़ी और लगभग दस फिट गहरी थी। (डॉ॰ मेहदी रिज़क़ुल्लाह, 2005 ई॰)

इस ज़बरदस्त ख़न्दक़ (खाई) को खोदने का काम मध्य रमज़ान सन् 5 हिजरी यानी जनवरी सन् 627 ई॰ में शुरू किया गया। उस समय जाड़े का मौसम था और ज़बरदस्त सर्दी पड़ रही थी। खाई खोदने का काम संयुक्त सेना के मदीना पहुँचने से पहले ही शव्वाल के महीने में पूरा कर लिया गया।

नबी (सल्ल॰) ने खाई खोदने के काम की न केवल स्वयं निगरानी की, बल्कि खाई खोदने का काम भी किया। दस लोगों के हर एक ग्रुप को लगभग 40 गज़ ज़मीन खोदने का काम दिया गया।

एक ऐसा अवसर आया कि एक पत्थर किसी भी तरह से अपनी जगह से नहीं हटाया जा सका। जब नबी (सल्ल॰) को इसकी ख़बर दी गई तो आप (सल्ल॰) स्वयं वहाँ पहुँचे और कुदाल से उसको तोड़ डाला।

मुसलमानों ने दिन-रात एक करके इस बात को सुनिश्चित किया कि दुश्मन के आने से पहले इस काम को पूरा कर लें।

जब अबू-सुफ़ियान के नेतृत्व में संयुक्त सेना मदीना के पास पहुँची तो सेना के सरदारों को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं आया। अब तक उन लोगों ने अपनी सारी तैयारियाँ गुप्त रखी थीं और उनको ऐसा लग रहा था कि मुसलमान उनकी योजनाओं एवं जंगी तैयारियों से पूरी तरह बेख़बर हैं। लेकिन मुसलमान तो पूरी तरह तैयार थे। बल्कि उनको लगा कि मुसलमान रात-दिन उनके आने की प्रतीक्षा में थे।

संयुक्त सेना यह सोचकर आई थी कि मुसलमानों का अन्त करके तुरन्त ही अपने-अपने घरों को ग़नीमत के माल के साथ वापस हो जाएँगे। लेकिन अब वे यहाँ एक लम्बी अवधि तक रुकने के लिए मजबूर थे और यह इन्तिज़ार उनकी जंगी योजना का हिस्सा नहीं था। उनको लगा कि यह गहरी और चौड़ी खाई उनके सारे सपनों को यहीं दफ़न कर देगी। खाई उनके लिए हतोत्साहित कर देनेवाली सिद्ध हुई। उनके पास साधनों की कोई कमी नहीं थी। रसद भारी मात्रा में उपलब्ध थी। वे हथियारों से पूरी तरह लैस थे। बल्कि जंगी सामान उनकी सेना की आवश्यकता से कहीं अधिक था।

इसके विपरीत मुसलमानों के पास रसद की ज़बरदस्त कमी थी। न केवल जंगी हथियार, बल्कि सैनिकों की संख्या भी बहुत कम थी। लेकिन मुसलमानों के पास एक चीज़ अत्यधिक मात्रा में मौजूद थी, और वह थी उनका अल्लाह पर भरोसा। उन्होंने अपनी पूरी शक्ति पूरी निष्ठा और यक़ीन के साथ उस जंग में झोंक दी थी और उनमें से हर व्यक्ति उस शहर और ईश्वरीय सत्यधर्म की सुरक्षा के लिए अपनी जान देने को तैयार था।

मदीना का घेराव लगभग एक महीने तक चलता रहा। मुसलमान लगातार अपनी रक्षा के लिए सक्रिय थे और हर समय नज़र रखे हुए थे कि किसी प्रकार भी वह संयुक्त सेना खाई पार करने की कोशिश न करे। ऐसी किसी भी कोशिश को मुसलमानों का तीरअन्दाज़ दस्ता नाकाम बनाने के लिए मैदान में लगातार मौजूद था। एक अवसर पर विरोधियों के कुछ लोगों ने खाई पार कर ली और उनके एक मशहूर यौद्धा अम्र-बिन-अब्दवद्द ने मुसलमानों

को आमने-सामने मुक़ाबले के लिए ललकारा। अरब में मशहूर था कि अम्र एक हज़ार बहादुरों से भी अधिक शक्तिशाली है। हज़रत अली (रज़ि॰) उसके मुक़ाबले के लिए आए और उसका काम तमाम कर दिया। इससे शेष दुश्मन वापस भाग गए। इस एक माह की अवधि में जब तक मदीना का घेराव जारी रहा केवल 6 मुसलमान शहीद हुए और शत्रुओं में से दस लोग मारे गए।

वास्तव में यह एक मनोवैज्ञानिक युद्ध था, जिसमें सशस्त्र युद्ध की स्थिति कम ही आई। दोनों ओर से विभिन्न प्रकार की रणनीतियाँ अपनाई जा रही थीं। शत्रु की ओर से सबसे ख़तरनाक कोशिश हैय्य-बिन-अख़तब ने की। वह बनू-क़ुरैज़ा के सरदार कअब-बिन-असद के पास गया और उसको उकसाया कि मुसलमानों के मुक़ाबले में उनका साथ दे। कअब ने शुरू में मना किया। उसका कहना था कि उनकी मुसलमानों के साथ शान्ति-सन्धि है। उसने कहा कि मुसलमानों ने अब तक अपने वादे पूरे किए हैं और नबी (सल्ल॰) अपनी ज़बान के पक्के हैं और वह उन्हें धोखा नहीं देगा। लेकिन फिर वह दबाव में आ गया और इस बात के लिए तैयार हो गया कि जब शत्रु आगे से आक्रमण करेंगे तो उसका क़बीला मुसलमानों पर पीछे से हमला कर देगा।

नबी (सल्ल॰) को बनू-क़ुरैज़ा की इस ग़द्दारी की सूचना भी अपने स्रोतों से मिल गई। मामले की संगीनी को देखते हुए आप (सल्ल॰) ने हज़रत सअद-बिन-मआज़ (रज़ि॰), सअद-बिन-उबादा (रज़ि॰), अब्दुल्लाह-बिन-रवाहा (रज़ि॰) और ख़ौत-बिन-ज़ुबैर (रज़ि॰) को सच्चाई मालूम करने के लिए भेजा। उन सहाबियों (रज़ि॰) के साथ बनू-क़ुरैज़ा के सरदारों ने बहुत ही अपमानजनक व्यवहार किया। उन्होंने उन लोगों से साफ़-साफ़ कह दिया कि अब मुसलमानों से उनकी कोई सन्धि नहीं।

अब मुसलमानों के लिए परिस्थितियाँ और भी चिन्ताजनक हो गईं। नबी (सल्ल॰) के घरवालों समेत मुसलमान की तमाम महिलाओं को एक क़िले में रखा गया था, जिसे फ़ारेअ् के नाम से पुकारा जाता था। यह बनू-हारिसा का क़िला था और यह बनू-क़ुरैज़ा के क़िले के पास ही स्थित था। यहूदियों ने यह मालूम करने के लिए कि इस क़िले की सुरक्षा के लिए सेना तैनात है या नहीं, अपने एक जासूस को भेजा। आप (सल्ल॰) की फूफी हज़रत सफ़िया

(रज़ि०) ने ज़बरदस्त साहस और बहादुरी का परिचय देते हुए उसका काम तमाम कर दिया। इस घटना से बनू-क़ुरैज़ा को लगा कि महिलाओं की सुरक्षा के लिए क़िले में सैनिक मौजूद हैं।

नबी (सल्ल०) ने सलमा-बिन-असलम (रज़ि०) को दो सौ मुस्लिम सैनिकों के साथ क़िले की सुरक्षा और मुसलमानों के पीछे से देख-भाल के लिए तैनात कर दिया। इस अवसर पर मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) ने भी अपना असली चेहरा दिखाना शुरू कर दिया और मुसलमानों में भय और आतंक फैलाने की पूरी कोशिश की। उनमें से कुछ लोगों ने नबी (सल्ल०) से यह कहकर जाने की अनुमति माँगी कि मदीना में उनके घर ख़तरे में हैं। हालात बिगड़ते हुए लग रहे थे, लेकिन आप (सल्ल०) और आप (सल्ल०) के निष्ठावान सहाबी (रज़ि०) पूरी तरह जमे रहे और भय और आतंक को अपने ऊपर प्रभावी नहीं होने दिया।

इस घेराव के बीच नबी (सल्ल०) ने क़बीला ग़तफ़ान से बात-चीत शुरू की। ग़तफ़ान का क़बीला संयुक्त सेना का एक अहम हिस्सा था। जब वार्ताओं का दौर पूरा हो गया और ग़तफ़ान घेरा उठाकर वापस जाने को इस शर्त पर तैयार हो गए कि मदीना में खजूरों की पैदावार का एक तिहाई हिस्सा वार्षिक उनको दिया जाएगा तो नबी (सल्ल०) ने सअद-बिन-मआज़ (रज़ि०), और सअद-बिन-उबादा (रज़ि०) को बुलाया जो दोनों औस और ख़ज़रज के मशहूर सरदार थे और इस समझौते के बारे में बताया। उन दोनों ने कहा—

"ऐ अल्लाह के रसूल! क्या यह अल्लाह का आदेश है? या यह आपका फ़ैसला है जो आख़िरी है?"

आप (सल्ल०) ने कहा : "यह तो केवल एक सुझाव था, ताकि किसी तरह दुश्मनों को कमज़ोर और उनकी ताक़त को कुछ कम किया जा सके।"

दोनों ने एक स्वर में कहा : "ग़तफ़ान हमसे अज्ञानता के ज़माने में एक खजूर भी नहीं ले सके और अब जबकि हम ईमान में दाख़िल हो चुके हैं और आप (सल्ल०) हमारे बीच हैं, केवल तलवार ही हमारे और उनके बीच फ़ैसला करेगी।" नबी (सल्ल०) ने उनके विचार सुनते ही इस वार्ता को समाप्त कर दिया।

मुसलमान रात-दिन खाई के पास पहरा देते रहे। मुसलमानों के पास रसद (ज़रूरत के सामान) की बहुत कमी थी और इसलिए मुस्लिम सैनिकों को फ़ाक़े-पर-फ़ाक़े करने पड़ रहे थे अतः भुखमरी की नौबत थी। एक अवसर ऐसा भी आया कि मुसलमान समय पर नमाज़ भी अदा न कर सके। ऐसा उस समय हुआ जब दुश्मनों ने मुसलमानों पर ज़बरदस्त हमला कर दिया और मुसलमान अपनी सुरक्षा में व्यस्त रह गए।

इन कठोर परिस्थितियों और दिल दहला देनेवाले हालात के बाद आसमानी मदद आनी शुरू हुई। पहले तो ग़तफ़ान क़बीले के नुऐम-बिन-मसऊद (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के पास आए। उन्होंने आप (सल्ल॰) से कहा कि वे इस्लाम क़बूल कर चुके हैं, लेकिन अब तक क़बीलावालों से यह बात छिपा रखी है। उन्होंने नबी (सल्ल॰) से कहा कि वे किसी भी रूप में मुसलमानों की सहायता करना चाहते हैं। नबी (सल्ल॰) की अनुमति के बाद उन्होंने दुश्मनों के बीच अविश्वास का वातावरण पैदा करने की कोशिश की।

पहले वह बनू-क़ुरैज़ा के सरदारों के पास गए। उन सरदारों से उनके सम्बन्ध बहुत अच्छे थे। उन्होंने उन लोगों से कहा कि क्या तुम लोगों ने भविष्य के बारे में कुछ सोचा है? संयुक्त सेना तो इतने लम्बे इन्तिज़ार के बाद अब वापसी के लिए पर तौल रही है? नुऐम-बिन-मसऊद (रज़ि॰) ने बनू-क़ुरैज़ा के सरदारों से कहा कि अगली बार जब संयुक्त सेना के लोग तुमसे मिलने आएँ तो उस समय तुम उनसे माँग करना कि अपने कुछ लोग तुम्हारे पास ज़मानत के तौर पर छोड़ दें। उसके बाद वे संयुक्त सेना की ओर गए और उनके मन में बनू-क़ुरैज़ा के लिए शक और सन्देह पैदा करने की कोशिश की। उन्होंने कहा कि वे बनू-क़ुरैज़ा के पास से आ रहे हैं। उनकी नियत सही नहीं लग रही है। बनू-क़ुरैज़ा तुमसे कुछ लोगों को ज़मानत के तौर पर माँग करेंगे। यदि तुम दे दोगे तो वे उनको मुहम्मद (सल्ल॰) के हवाले कर देंगे, ताकि मुसलमानों से दोबारा उनका मेल-मिलाप हो जाए।

यह बात सुनकर संयुक्त सेना ने बनू-क़ुरैज़ा की ओर यह सन्देश भेजा कि वे अब मुसलमानों पर निर्णायक हमला करना चाहते हैं। यह हमला शुक्रवार और शनीवार के बीच की रात को होगा। उन्होंने बनू-क़ुरैज़ा से कहा कि वे

भी उसी रात पीछे से मुसलमानों पर हमला कर दें। लेकिन जब बनू-क़ुरैज़ा ने उनसे कुछ लोगों को ज़मानत के तौर पर मांगा तो उनके सरदारों ने साफ़ मना कर दिया। इस घटना से दुश्मनों के बीच एक-दूसरे के लिए सन्देह गहरा हो गया।

इधर अब संयुक्त सेना की हिम्मत भी जवाब देती जा रही थी। एक महीने से अधिक के इस घेराव की वजह से वे थककर चूर हो चुके थे और फिर एक आख़िरी झटके ने तो रही-सही कसर भी निकाल दी।

एक रात ज़बरदस्त रेत का तूफ़ान आया। उसकी तीव्रता इतनी अधिक थी कि संयुक्त सैनिकों के ख़ेमे तक उड़ गए। मुसलमान जो खुले आसमान के नीचे मुक़ाबले में खड़े थे, तूफ़ान से वे भी बहुत अधिक प्रभावित हुए। नबी (सल्ल॰) ने उस समय भी ऐसी व्यवस्था की कि आप (सल्ल॰) को पल-पल की ख़बरें मिलती रहें। आप (सल्ल॰) ने हज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि॰) को आदेश दिया कि दुश्मन के कैम्प की सूचना आप (सल्ल॰) तक पहुँचाते रहें। हज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि॰) शीघ्र ही आप (सल्ल॰) के पास आए और सूचना दी कि संयुक्त शत्रु-सेना में हड़बड़ाहट मची हुई है और उनके सरदारों पर बौखलाहट सवार है।

जब यह तूफ़ान थमा और मुसलमान अगली सुबह जागे तो उनकी ख़ुशी का कोई ठिकाना न रहा। उन्होंने आश्चर्यजनक नज़रों से देखा कि दुश्मन अपने ख़ेमे उखाड़कर मैदान छोड़कर वापस जा चुका है। इस अवसर पर नबी (सल्ल॰) ने दूरदर्शितापूर्ण यह भविष्यवाणी की कि "आज के बाद दुश्मन हमारे ऊपर हमला करने की हिम्मत नहीं करेगा, बल्कि हम उनके ऊपर हमलावर होंगे।"

मुसलमान थकन से चूर वापस मदीना लौटे। वे सब अल्लाह का शुक्र अदा कर रहे थे, जिसने एक बड़ी मुसीबत से उनको छुटकारा दिलाया और उनको यह हिम्मत और हौसला दिया कि इस मुश्किल दशा में धैर्य और संयम के साथ दुश्मन का मुक़ाबला करें।

आप (सल्ल॰) भी अपने घर वापस आए। लेकिन अभी आप (सल्ल॰) घर पर पहुँचे ही थे कि हज़रत जिबरील (अलैहि॰) अल्लाह तआला का सन्देश

लेकर पहुँचे कि बनू-क़ुरैज़ा के धोखे और वचन-भंग करने का जवाब देना अभी बाक़ी है।

नबी (सल्ल॰) ने सबसे पहले सहाबियों (रज़ि॰) के एक दस्ते को बनू-क़ुरैज़ा के क़िले की ओर भेजा। यह दस्ता हज़रत अली (रज़ि॰) के नेतृत्व में भेजा गया था। उसी समय यह आम एलान भी करवा दिया गया कि जो 'सुनने और आज्ञा पालन करने' के नियम को मानता है वे अस्र की नमाज़ बनू-क़ुरैज़ा के क़िले के पास अदा करे।

जब मुसलमान बनू-क़ुरैज़ा के इलाक़े के पास पहुँचे तो उनका गालियों से स्वागत किया गया। बनू-क़ुरैज़ा क़िले के अन्दर बन्द हो गए और मुसलमानों ने क़िले को घेर लिया। यह घेराव लगभग 20 दिनों तक जारी रहा। अन्ततः बनू-क़ुरैज़ा की हिम्मत जवाब दे गई और वे इस शर्त पर हथियार डालने को तैयार हो गए कि सअद-बिन-मआज़ (रज़ि॰) को मध्यस्थ नियुक्त किया जाए और वे जो फ़ैसला करें वह दोनों पक्षों के लिए स्वीकार्य होगा।

सअद-बिन-मआज़ (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के घनिष्ठ सहाबियों में से एक थे। वे बनी-औस के सरदार थे और बनू-क़ुरैज़ा और औस क़बीला अज्ञानकाल से ही मित्र-क़बीले थे। इसलिए बनू-क़ुरैज़ा के यहूदी ही नहीं, बल्कि क़बीला औस के बहुत-से मुसलमानों का भी यही विचार था कि सअद-बिन-मआज़ (रज़ि॰) यहूदियों के साथ नर्मी का मामला करेंगे।

हज़रत सअद-बिन-मआज़ (रज़ि॰) ख़न्दक़ की जंग के दौरान घायल हो गए थे और उनका इलाज चल रहा था। नबी (सल्ल॰) ने विशेष रूप से आदेश देकर उनके लिए मस्जिदे-नबवी में एक ख़ेमा लगवाया था, ताकि वहाँ उनका बेहतर इलाज हो सके और आप (सल्ल॰) व्यक्तिगत रूप से उनके इलाज की निगरानी कर सकें।

हज़रत सअद (रज़ि॰) आए तो उन्होंने पूछा : क्या मेरा फ़ैसला बनू-क़ुरैज़ा के लिए स्वीकार्य होगा? उन्होंने जवाब दिया : क्यों नहीं। फिर उन्होंने दूसरा सवाल किया : क्या मुसलमान भी मेरा फ़ैसला स्वीकार करेंगे? उस समय मुसलमानों ने भी सकारात्मक उत्तर दिया। फिर उन्होंने सवाल किया : क्या मेरा फ़ैसला यहाँ मौजूद तमाम लोगों के लिए स्वीकार्य होगा?

नबी (सल्ल॰) समझ गए कि सअद-बिन-मआज़ (रज़ि॰) का इशारा उनकी तरफ़ है।

आप (सल्ल॰) ने कहा : "तुम्हारा फ़ैसला मेरे लिए भी स्वीकार्य होगा।"

उस समय हज़रत सअद (रज़ि॰) ने अपना फ़ैसला सुनाया कि "बनू-क़ुरैज़ा के तमाम सैनिकों को मृत्यु दंड दिया जाए, महिलाओं और बच्चों को क़ैदी बना लिया जाए और उनकी सम्पत्तियों को छीन लिया जाए।"

उनका यह फ़ैसला यहूदियों के धार्मिक ग्रन्थों के अनुसार था। यहूदियों की धार्मिक ग्रन्थों के अनुसार–

> "जब तुम किसी शहर के नज़दीक युद्ध के लिए पहुँचो तो पहले उनको अमन की दावत दो। यदि उनका जवाब सकारात्मक हो तो उनके तमाम लोग तुम्हारे बेगार मज़दूर होंगे और वे तुम्हारी सेवा करेंगे। लेकिन यदि वे तुम से अमन के लिए राज़ी नहीं हैं तो उनसे युद्ध करो, उनका घेराव करो, और जब ख़ुदा तुमको उनके ऊपर विजय प्रदान करे तो उनके तमाम सैनिकों को मार डालो। उनकी औरतें, बच्चे, मवेशी और समस्त धन-सम्पत्ति तुम्हारे लिए ग़नीमत का माल हैं जो तुमको तुम्हारे रब ने बख़्शिश में दिया है।"

(Deuteronomy: 10 to 15, माजिद अली ख़ान, 2004, पृष्ठ 227)

बनू-क़ुरैज़ा की ओर से कितना बड़ा ख़तरा था, इसका अनुमान उन हथियारों से लगाया जा सकता है जो उनके क़िले से बरामद हुए थे उनमें 1700 तलवारें, 2000 भाले और 500 सुरक्षा कवच शामिल थीं।

विचारणीय बातें

क़ुरआन में है–

> "वास्तव में तुम लोगों के लिए अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) में एक बेहतरीन नमूना है, हर उस व्यक्ति के लिए जो अल्लाह और आख़िरत के दिन का उम्मीदवार हो और अधिकता से ईश्वर को याद करे।" (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-21)

यह आयत सूरा अहज़ाब का हिस्सा है जो इस लड़ाई के बारे में अवतरित हुई है। यह एक बहुत ही व्यापक आयत है जो हर काल और जीवन के हर पहलू पर लागू होती है। यदि इस आयत की पृष्ठभूमि में इस जंग का अध्ययन करते हैं और नबी (सल्ल॰) की इस जंग के दौरान सेनापति और शासक के रूप में उनकी भूमिका का विश्लेषण करते हैं तो हम इस नतीजे पर पहुँचेंगे—

(1) परामर्श पर आधारित नेतृत्व

नेतृत्व करनेवाले के रूप में आप (सल्ल॰) सदैव आपसी विचार-विमर्श से ही नेतृत्व करने के पक्षधर रहते थे, इसके उपरांत भी कि आप (सल्ल॰) के सहाबी (रज़ि॰) हमेशा आपकी हर बात को स्वीकार करने के लिए सदा तैयार रहते थे। आप (सल्ल॰) हमेशा उनसे महत्वपूर्ण मामलों में विचार-विमर्श करते और उनके सुझावों को महत्व देते।

(2) नए विचार का सम्मान

हज़रत सलमान फ़ारसी (रज़ि॰) के सुझाव को स्वीकार करना और उसपर तुरन्त काम शुरू कर देना यह स्पष्ट करता है कि नबी (सल्ल॰) अच्छे सुझावों को महत्व देते थे और आप (सल्ल॰) की सलाहकार समिति केवल दिखावा नहीं होती थी। सलाहकार समिति का अपना महत्व होता था, क्योंकि इस समिति में समस्याओं के समाधान की सेवा और उनपर अमल करने की रणनीति सुनिश्चित की जाती थी।

(3) सहभागी नेतृत्व

नबी (सल्ल॰) ने खुदाई के काम में साधारण व्यक्ति की भाँति भाग लिया। इससे साथियों का मनोबल बहुत बढ़ गया।

(4) मिसाल द्वारा नेतृत्व

आप (सल्ल॰) केवल शब्दों से नेतृत्व करने के क़ायल नहीं थे, बल्कि मिसाल क़ायम करके नेतृत्व किया करते थे। जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के प्यारे सहाबी एक बड़े पत्थर को नहीं निकाल सके तो नबी (सल्ल॰) ने उसको तोड़ कर दिखाया।

(5) समानता

नबी (सल्ल॰) के परिजनों को मदीना में रसूल के रिश्तेदार होने के कारण कोई विशेष सहूलतें उपलब्ध नहीं थीं और न ही उसके लिए अलग से कोई सुरक्षा व्यवस्था की गई थी। वे अन्य परिवारों के साथ ही ठहरे।

(6) सब के हित की रक्षा

नबी (सल्ल॰) ने बनू-ग़तफ़ान से जो बात-चीत की थी उसका उद्देश्य केवल यह था कि शत्रु की संयुक्त सेना को कमज़ोर किया जा सके। उन कोशिशों का उद्देश्य यह था कि जो ख़तरा मदीनावासियों पर मंडरा रहा था, उसको कम किया जा सके।

(7) साथियों की भावनाओं का सम्मान

आप (सल्ल॰) हमेशा अपने साथियों की भावनाओं का सम्मान किया करते थे। जब आप (सल्ल॰) ने देखा कि क़बीला औस और ख़ज़रज के सरदार बनू-ग़तफ़ान के साथ इस तरह की सन्धि के पक्ष में नहीं हैं तो आप (सल्ल॰) ने वार्ता का क्रम बन्द कर दिया।

इसके अलावा इस पूरी जंग में सहाबियों की दृढ़ता, ऊँचे मनोबल, साहस, धैर्य और संयम ने यह साफ़ कर दिया कि नबी (सल्ल॰) ने अपने साथियों का कितना अच्छा प्रशिक्षण किया था। न केवल आप (सल्ल॰) स्वयं हिम्मत व हौसला और दृढ़ संकल्प के प्रतीक थे, बल्कि आप (सल्ल॰) ने ऐसे नेक और सुचरित्र लोगों का गरोह तैयार कर लिया था जो अपने अभियान के लिए हर तरह की क़ुर्बानियाँ, यहाँ तक कि अपनी जान देने के लिए भी तैयार थे। उनके जीवन इस्लाम लाने से पहले के जीवन से बिलकुल बदल चुके थे। अल्लाह तआला की ओर से दी जानेवाली ज़िम्मेदारियों को अदा करने में, नबी (सल्ल॰) के नेतृत्व में, पूरी तरह सफल थे। क़ुरआन कहता है—

> "वही है जिसने उम्मियों के अन्दर एक रसूल ख़ुद उन्हीं में से उठाया, जो उन्हें उसकी आयतें सुनाता है, उनकी ज़िन्दगी संवारता है, और उनको किताब और हिकमत की शिक्षा देता है, यद्यपि इससे पहले वे स्पष्ट पथभ्रष्टता में पड़े हुए थे।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-62 जुमा, आयत-2)

सन् 5 हिजरी की कुछ और महत्वपूर्ण घटनाएँ

बनू-क़ुरैज़ा की समस्या को सुलझाने के बाद क़बीला ख़ज़रज के लोगों ने नबी (सल्ल॰) से आग्रह किया कि अबू-राफ़ेअ को जो ख़ैबर का यहूदी सरदार था, सख़्त सज़ा दी जाए। उसने शत्रु संयुक्त सेना को जंगे-ख़न्दक़ में बड़ी मात्रा में सामान उपलब्ध कराया था। आप (सल्ल॰) की अनुमति मिलने के बाद ये लोग ख़ैबर की ओर रवाना हुए। उनकी कमान अब्दुल्लाह-बिन-अतीक (रज़ि॰) के हाथ में थी। अब्दुल्लाह-बिन-अतीक (रज़ि॰) ने अबू-राफ़ेअ का काम तमाम कर दिया।

इसके अलावा सन् 5 हिजरी में दूसरी महत्वपूर्ण घटनाएँ निम्नलिखित हैं—

(1) हब्शा हिजरत करनेवाले बहुत-से मुहाजिरीन का मदीना में आना।

(2) पर्दे का आदेश आया।

(3) ज़िहार अर्थात् पत्नी को माता के समान होना कहकर अलग हो जाने के नियम का अन्त होने का आदेश : अरब में पति अपनी पत्नी से यह कहकर जान छुड़ा लेता था कि तुम मेरी माँ की तरह हो। इस निन्दनीय तरीक़े को समाप्त कर दिया गया और उसपर विभिन्न प्रकार के जुर्माने लगाए गए।

(4) पानी न मिलने पर वुज़ू की जगह तयम्मुम करने की अनुमति।

(5) इसी वर्ष नबी (सल्ल॰) ने हज़रत ज़ैनब-बिन्त-जहश (रज़ि॰) से निकाह किया। आप (सल्ल॰) की फूफीज़ाद बहन हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) इससे पहले आप (सल्ल॰) के मुँह बोले बेटे ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) के निकाह में थीं। लेकिन आप (सल्ल॰) की बहुत कोशिशों के बावजूद भी यह शादी सफल न हो सकी और हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) ने उनको तलाक़ दे दी। हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) से शादी करके नबी (सल्ल॰) ने जाहलियत के ज़माने की एक और रस्म को अल्लाह तआला के आदेश से ख़त्म कर दिया। क़ुरआन में है—

"ऐ नबी! याद करो वह अवसर जब तुम उस व्यक्ति से कह रहे थे कि जिसपर अल्लाह ने और तुमने एहसान किया था कि अपनी पत्नी को न छोड़ और अल्लाह से डर। उस वक़्त तुम अपने दिल में वह बात छुपाए हुए थे जिसे अल्लाह खोलना चाहता था। तुम लोगों से डर रहे थे, हालाँकि अल्लाह उसका ज़्यादा हक़दार है कि तुम उससे डरो। फिर जब ज़ैद ने उससे अपना सम्बन्ध समाप्त कर लिया, तो हमने उस (तलाक़शुदा महिला) का तुमसे निकाह कर दिया, ताकि मोमिनों पर अपने मुँह बोले बेटों की पत्नियों के विषय में कोई तंगी न रहे, जबकि वे उनसे अपना सम्बन्ध समाप्त कर लें और अल्लाह का हुक्म तो अमल में आना ही चाहिए था।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-37)

3:7 पूर्ण विजय का पूर्व सन्देश

हिजरत का छठा साल अन्य सालों की तुलना में शान्तिपूर्ण साल था। इस साल न तो क़ुरैश ने हमला किया और न ही उनके समर्थक क़बीलों ने मुसलमानों पर हमले की कोशिश की। इस साल मदीना से 17 सैन्य दल आस-पास की देख-भाल के लिए भेजे गए। आप (सल्ल०) केवल एक दल के साथ रबीउल-अव्वल सन् 4 हिजरी में गए, ताकि मुसलमानों के एक गरोह की हत्या का बदला क़बीला बनू-लह्यान से लिया जा सके। यह क़बीला मुस्लिम सेना के आने की सूचना सुनकर ही भाग खड़ा हुआ और किसी तरह की कोई लड़ाई नहीं हुई।

सन् 4 हिजरी तदानुसार 628 ई० में नबी (सल्ल०) ने एक सपना देखा कि आप (सल्ल०) और आप (सल्ल०) के साथी मक्का में उमरा करने के लिए दाख़िल हो रहे हैं। आप (सल्ल०) ने अपने सपने का उल्लेख अपने साथियों के सामने किया और यह घोषणा करा दी गई कि जो कोई उमरा अदा करना चाहे, वह साथ चले।

ज़ी-कादा सन् 6 हिजरी को 1400 सहाबियों का क़ाफ़िला नबी (सल्ल०) के नेतृत्व में उमरा करने के लिए रवाना हुआ। उनके साथ तलवारें थीं, जो मयान में थीं। अरब में हज और उमरा करनेवाले इसी तरह मक्का आते थे।

जब क़ुरैश को मुसलमानों के आने की सूचना मिली तो वे बहुत ज़्यादा परेशान हो गए। यह उनके लिए एक तरह की परीक्षा थी। अरब के रस्मो-रिवाज के अनुसार हज और उमरा के लिए आनेवाले किसी भी व्यक्ति को रोका नहीं जा सकता था। एक-दूसरे के ख़ून के प्यासे भी हरम की सीमा में एक-दूसरे पर हाथ उठाने का साहस नहीं करते थे। लेकिन क़ुरैश के नादान सरदारों की समझ में यह बात नहीं आई। ज़ी-कादा हुरमत वाला महीना था, जिसमें लड़ाई-झगड़े की कोई अनुमति नहीं थी। इस महीने में ज़्यादातर लोग उमरा

भी करने आते। काफ़ी सोच-विचार के बाद यह तय किया गया कि इन लोगों को किसी भी क़ीमत पर उमरा करने से रोकना होगा। यह क़दम भी उनके अहंकार और हठधर्मी का प्रमाण था।

नबी (सल्ल॰) को क़ुरैश के इरादों का पता चल गया। आप (सल्ल॰) को यह भी पता चला कि क़ुरैश ने मक्का में दाख़िल होने के सभी रास्तों को बन्द कर दिया है, ताकि मुसलमानों को किसी भी तरह काबा तक न पहुँचने दिया जाए। उन्होंने ख़ालिद-बिन-वलीद के नेतृत्व में 200 घुड़सवारों को कुराउल-ग़मीम नामक स्थान के पास भेजा, जो मदीना से मक्का जानेवाले मुख्य-मार्ग पर था। क़ुरैश चाहते थे कि मुसलमानों को ग़ुस्सा दिलाकर किसी तरह जंग की शुरुआत की जा सके और मुसलमानों को आक्रमणकारी के रूप में पेश किया जा सके।

नबी (सल्ल॰) क़ुरैश के इस षड्यन्त्र को समझ गए और आप (सल्ल॰) ने उनके इस षड्यन्त्र को नाकाम बनाने की ठान ली। नबी (सल्ल॰) को यह अनुमान था कि यदि मुसलमान अपनी रक्षा में भी हथियार उठाते हैं तो इस्लाम-दुश्मन उसे दूसरी शक्ल में पेश करेंगे। आप (सल्ल॰) ने ख़ास-ख़ास सहाबियों को परामर्श के लिए बुलाया। सब की राय यही थी कि किसी भी तरह की लड़ाई से बचा जाए।

मुसलमानों ने रास्ता बदल लिया और हुदैबिया के पास पहुँच गए। इसमें इस बात का ख़ास खयाल रखा गया कि क़ुरैश को इसका पता न चले। हुदैबिया पहुँचने पर नबी (सल्ल॰) की ऊँटनी क़ुसवा बैठ गई और बहुत कोशिशों के बाद भी खड़ी नहीं हुई। नबी (सल्ल॰) ने यह देखकर कहा : "क़ुसवा ज़िद्दी नहीं है। ज़िद तो उसके स्वभाव में है ही नहीं। इसको तो उसी ने रोका है, जिसने हाथियों को मक्का में दाख़िल होने से रोक दिया था।" आप (सल्ल॰) का संकेत अबरहा की सेना की ओर था।

नबी (सल्ल॰) ने आगे कहा : "उसकी क़सम जिसके क़ब्ज़े में मेरे प्राण हैं। यदि क़ुरैश मुझसे किसी भी चीज़ की माँग करें और उसके बदले वे अल्लाह के आदेश को मानने के लिए तैयार हो जाएँ तो मैं वह काम करने को तैयार हूँ।

उसके बाद मुसलमानों ने हुदैबिया में पानी के एक चशमे के पास कैम्प लगाया। वहाँ पर क़बीला खुज़ाआ का सरदार बुदैल-बिन-वरक़ा आया, जिसका मुसलमानों के साथ शान्ति-सन्धि एवं सहयोग का समझौता था। उसके साथ उसके क़बीले के कुछ और लोग भी थे। उन लोगों ने क़ुरैश के बारे में कहा कि उनके मन में खोट है। नबी (सल्ल॰) ने उनके द्वारा क़ुरैश के पास संदेश भेजा कि मुसलमानों का इरादा केवल और केवल उमरा करने का है। वे लड़ाई नहीं चाहते। उमरा करने के बाद पूरी शान्ति के साथ मदीना लौट जाएँगे। क़ुरैश फिर भी अड़े रहे।

अब राजनीतिक वार्ताएँ शुरू हुईं। मुसलमानों और क़ुरैश के बीच वार्ताओं के लम्बे दौर चले। आप (सल्ल॰) ने बुदैल-बिन-वरक़ा के ज़रिए से अपने उद्देश्य को स्पष्ट कर दिया था। आप (सल्ल॰) बिना यौद्धिक तैयारी और बिना यौद्धिक सामान के आए थे। उनके पास मात्र क़ुरबानी के जानवर थे।

इसके बाद आप (सल्ल॰) ने ख़राश-बिन-उमैया को मक्का भेजा, ताकि वे उनको समझा सकें, लेकिन क़ुरैश ने उनके ऊँट को ही मार डाला। किसी तरह जान बचाकर ख़राश वापस आ सके। यद्यपि क़ुरैश ने भी अपने राजनयिक को हुदैबिया में मुसलमानों के पास वार्तालाप के लिए भेजा, लेकिन उसको केवल इसी उद्देश्य के लिए भेजा गया कि मुसलमानों को मक्का में दाख़िल होने से रोका जा सके। वे मामले का फ़ैसला तो चाहते थे, लेकिन केवल अपनी शर्तों पर।

बुदैल की बातें सुनने के बाद क़ुरैश ने मिक़राज़-बिन-हफ़्स को नबी (सल्ल॰) के पास भेजा। जब वह आप (सल्ल॰) के पास पहुँचा तो आप (सल्ल॰) ने अपने साथियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। आप (सल्ल॰) ने उससे बात-चीत की और मुसलमानों के आने का मक़सद दोबारा स्पष्ट किया।

उसके बाद क़ुरैश की ओर से हुलैस-बिन-अल्क़मा वार्तालाप के लिए हुदैबिया आया। उसका ताल्लुक़ बनू-कनाना से था। नबी (सल्ल॰) ने उसको देखकर सहाबियों से कहा : "इसका ताल्लुक़ ऐसे क़बीले से है जो क़ुरबानी के जानवरों को सम्मान देते हैं। अपने जानवरों को उसके सामने से गुज़ारो।"

क़ुरबानी के ज़ानवरों को देखते ही हुलैस वापस लौट गया। उसको मुसलमानों की भावनाओं का आभास हो गया था। उसने क़ुरैश से जाकर कहा कि मुसलमानों को उमरा करने की अनुमति दे दी जाए, क्योंकि उमरा के अलावा उनका कोई और इरादा मालूम नहीं होता। क़ुरैश ने इसे भी ख़ूब निन्दा का निशाना बनाया।

उसके बाद उरवा-बिन-मसऊद सक़फ़ी क़ुरैश की ओर से वार्ता के लिए आया। उसकी बात-चीत का अन्दाज़ बहुत ही अनादर पूर्ण था। नबी (सल्ल॰) के साथियों ने उसकी बातों का उचित उत्तर दिया। वापसी पर उसने क़ुरैश के सरदारों से कहा : "मैं क़ैसर (रोम का शासक) और किसरा (ईरान का शासक) के दरबारों में भी जा चुका हूँ। किन्तु किसी भी बादशाह की प्रजा के अन्दर उसके लिए वह मान-सम्मान और मुहब्बत नहीं देखी जितनी मुहब्बत मैंने मुहम्मद (सल्ल॰) के अनुयाइयों के दिल में मुहम्मद (सल्ल॰) के लिए देखी।"

अभी वार्तालाप चल ही रहा था और क़ुरैश के विभिन्न प्रतिनिधि हुदैबिया आकर मुसलमानों से बात-चीत कर रहे थे कि मक्का के लगभग 70 नवजवानों ने मुसलमानों के कैम्प पर हमला कर दिया। मुसलमानों ने उन सबको बिना कोई शारीरिक चोट पहुँचाए क़ैद कर लिया। नबी (सल्ल॰) ने उनके इस संगीन अपराध पर भी सबको माफ़ कर दिया। उन नवजवानों को मक्का के सरदारों के सिपुर्द कर दिया गया। क़ुरआन इस सिलसिले में कहता है—

> "वही है जिसने मक्का की घाटी में उनके हाथ तुमसे और तुम्हारे हाथ उनसे रोक दिए। हालाँकि वह उनपर तुम्हें प्रभावी कर चुका था और जो कुछ तुम कर रहे थे अल्लाह उसे देख रहा था।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-48 फ़तह, आयत-24)

मुसलमानों की ओर से उसके बाद जो सहाबी क़ुरैश से वार्ता के लिए गए वे हज़रत उसमान (रज़ि॰) थे। क़ुरैश में उनके क़बीले की वजह से उनका बड़े मान-सम्मान के साथ स्वागत किया गया। लेकिन क़ुरैश ने उनसे वार्ता करने से इनकार कर दिया।

क़ुरैश ने उनसे कहा कि यदि वे चाहें तो उमरा कर सकते हैं। लेकिन हज़रत उसमान (रज़ि॰) ने कहा कि जब तक नबी (सल्ल॰) उमरा नहीं करते वे तो उसके बारे में सोच भी नहीं सकते। वे मक्का में कुछ समय के लिए रुक गए, ताकि मक्कावालों के दिल को नर्म करने की कोशिश कर सकें और कमज़ोर मुसलमान, जो मजबूरी में मक्का में थे, उनसे मुलाक़ात कर सकें।

हज़रत उसमान (रज़ि॰) की वापसी में देरी होने की वजह से एक अफ़वाह फैल गई कि उनको क़ुरैश ने शहीद कर दिया है। यह सुनने के बाद आप (सल्ल॰) ने सहाबियों से बैअत् (प्रतिज्ञा) ली कि वे हज़रत उसमान-बिन-अफ़्फ़ान (रज़ि॰) की शहादत का बदला लेंगे। एक पेड़-के नीचे समस्त लोगों ने हज़रत उसमान (रज़ि॰) का बदला लेने का संकल्प लिया। केवल एक व्यक्ति ने निजी कारणों से इसमें भाग नहीं लिया। यह इस बात को दर्शाता है कि यह प्रतिज्ञा बिना किसी दबाव के ली गई।

आप (सल्ल॰) ने अपना दायाँ हाथ बायें हाथ के ऊपर रखा और हज़रत उसमान (रज़ि॰) की ओर से उनकी अनुपस्थिति में यह संकल्प लिया—

इस संकल्प को इतिहास में बैअत-ए-रिज़वान के नाम से जाना जाता है। अल्लाह ने क़ुरआन में इसकी प्रशंसा इन शब्दों में की है—

> "अल्लाह मोमिनों से ख़ुश हो गया जब वे पेड़ के नीचे तुम से बैअत् कर रहे थे। उनके दिलों का हाल उसको मालूम था, इसलिए उसने उनपर शान्ति अवतरित की, उनको पुरुस्कार स्वरूप निकटस्थ विजय प्रदान की।" (क़ुरआन, सूरा-48 फ़तह, आयत-18)

बैअत-ए-रिज़वान के कुछ ही देर बाद हज़रत उसमान-बिन-अफ़्फ़ान (रज़ि॰) सकुशल वापस लौट आए। लेकिन जब क़ुरैश को बैअत-ए-रिज़वान का पता चला तो उनको मुसलमानों के दृढ़-संकल्प का पता चल गया। इस संकल्प से उनकी हठधर्मी को एक और ज़ोरदार झटका लगा और उनमें काफ़ी नर्मी आई। उन्होंने अपने सर्वाधिक अनुभवी और सफल राजनयिक सुहैल-बिन-अम्र को मुसलमानों से बात-चीत के लिए भेजा। सुहैल को यह स्पष्ट निर्देश था कि अब वे मामले को हल करके आएँ।

सुहैल पर नज़र पड़ते ही नबी (सल्ल॰) ने अपने साथियों से कहा : "जिन लोगों ने इस व्यक्ति को भेजा है वे निश्चित रूप से अमन चाहते हैं।"

लम्बी वार्तालाप के बाद जिसमें सुहैल-बिन-अम्र ने कई बार मक्का और हुदैबिया के बीच चक्कर लगाए, अमन की शर्तें तय हो गई।

इस सन्धि एवं समझौते की ख़ास शर्तें निम्नलिखित थीं—

(1) इस साल मुसलमान उमरा किए बिना मदीना वापस लौट जाएँ।

(2) वे अगले साल आएँ और केवल तीन दिन उमरा के लिए ठहरें। इस अवधि में क़ुरैश मक्का से बाहर चले जाएँगे।

(3) मुसलमानों के लिए यह ज़रूरी होगा कि वे मक्का से मदीना भाग जानेवाले (नवमुस्लिम) लोगों को क़ुरैश के सिपुर्द कर दें। लेकिन यदि कोई मदीना से भागकर मक्का आता है तो क़ुरैश उसे नहीं लौटाएँगे।

(4) अरब क़बीले मुसलमानों और क़ुरैश में से जिससे चाहें शान्ति का समझौता करने के लिए स्वतंत्र हैं। उनके किसी समर्थक (मित्र) क़बीले पर हमला उनपर हमला माना जाएगा।

(5) मुसलमानों और क़ुरैश के बीच यह सन्धि दस वर्षों के लिए है।

हज़रत अली (रज़ि॰) पर इस समझौते को लिखने की ज़िम्मेदारी दी गई थी। जब हज़रत अली (रज़ि॰) ने सन्धि में नबी (सल्ल॰) के नाम के आगे रसूलुल्लाह (अल्लाह के रसूल) लिखा तो सुहैल ने इस पर आपत्ति जताई। उसने कहा कि यही तो सारे झगड़े की जड़ है। नबी (सल्ल॰) ने हज़रत अली (रज़ि॰) से कहा कि उसको मिटाकर 'मुहम्मद-बिन-अब्दुल्लाह' लिख दें। हज़रत अली (रज़ि॰) ने आप (सल्ल॰) के मान-सम्मान के कारण ऐसा करने से इनकार कर दिया। नबी (सल्ल॰) ने उनसे पूछा कि यह कहाँ लिखा हुआ है। फिर आप (सल्ल॰) ने उसे स्वयं मिटा दिया।

अभी इस सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर नहीं हुए थे कि मुसलमानों के लिए एक परीक्षा की घड़ी सिर पर आ गई। सुहैल-बिन-अम्र के बेटे अबू-जन्दल (रज़ि॰), जो मुसलमान हो चुके थे और अपने परिवारवालों के ज़बरदस्त अत्याचार के शिकार थे, किसी तरह मक्का से भागकर हुदैबिया आ गए। उनकी दुर्दशा

को देखकर मुसलमानों का ख़ून खौल उठा। क्योंकि संधि पर अभी हस्ताक्षर नहीं हुए थे, नबी (सल्ल॰) ने सुहैल को बहुत समझाने की कोशिश की कि सुहैल उनको वहाँ छोड़ दे, लेकिन सुहैल नहीं माना। उसने कहा कि मुसलमानों को अबू-जन्दल (रज़ि॰) को उसके हवाले करना होगा, अन्यथा सन्धि टूट जाएगी। नबी (सल्ल॰) ने अबू-जन्दल (रज़ि॰) को धैर्य रखने को कहा और अपनी प्रतिवद्धता को ध्यान में रखते हुए उन्हें उनके पिता को लौटा दिया।

इस घटना से मुसलमानों के दिल पर ज़बरदस्त चोट लगी। उनको पहले ही यह लग रहा था कि सन्धि की शर्तें स्पष्टतः मुसलमानों के ख़िलाफ़ थीं, लेकिन उन्होंने नबी (सल्ल॰) के निर्णय का सम्मान करते हुए अपने दिलों पर पत्थर रखा और शांत रहे। हज़रत उमर (रज़ि॰) सम्भवतः अकेले ऐसे सहाबी थे जिन्होंने इस सन्धि की शर्तों पर अपनी प्रतिक्रिया प्रकट रूप में व्यक्त की थी।

हज़रत उमर (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) से पूछा : "क्या आप अल्लाह के रसूल नहीं हैं?" आप (सल्ल॰) ने ज़वाब दिया : "हाँ, मैं हूँ।" इसपर उमर (रज़ि॰) ने पूछा : "क्या हम सत्य पर नहीं हैं? और क्या वे असत्य पर नहीं हैं?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "हम हक़ पर हैं।" हज़रत उमर (रज़ि॰) ने एक और सवाल किया : "यदि ऐसा है तो हम उनकी शर्तों को क्यों मान रहे हैं? इसपर नबी (सल्ल॰) ने कहा : "मैं अल्लाह का रसूल हूँ और मैं उसकी अवज्ञा किसी भी स्थिति में नहीं करूँगा। वह मेरा सहयोगी एवं सहायक है।"

इसपर हज़रत उमर (रज़ि॰) ने एक और प्रश्न किया : "आपने कहा था कि हम उमरा करेंगे?" नबी (सल्ल॰) ने जवाब दिया : "हाँ, मैंने कहा था। लेकिन क्या मैंने कहा था कि हम उमरा इसी साल ही करेंगे।" हज़रत उमर (रज़ि॰) ने कहा : "नहीं।" तो नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुम निश्चय ही वापस आओगे और ख़ाना काबा का तवाफ़ (परिक्रमा) करोगे।"

हज़रत उमर (रज़ि॰) अब भी सन्तुष्ट नहीं हुए और वे हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के पास गए। उन्होंने उनसे भी वही प्रश्न किए। इसपर हज़रत अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि॰) ने कहा, "वे अल्लाह के रसूल हैं। वे अल्लाह के आदेशों की अवहेलना नहीं कर सकते। तुम अपने आप पर क़ाबू रखो।"

मुसलमानों के कैम्प में एक बेचैनी भरा वातावरण था। नबी (सल्ल॰) को बड़ा आश्चर्य हुआ जब आप (सल्ल॰) ने साथियों को अपने जानवर क़ुरबान करने का आदेश दिया और उनमें से एक भी अपनी जगह से नहीं हिला। आप (सल्ल॰) ने उन लोगों को कई बार आदेश दिया, लेकिन फिर भी लोग बैठे रहे। आप (सल्ल॰) को इस बात से बहुत दुख हुआ।

इस सफ़र में आप (सल्ल॰) की धर्म-पत्नी हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) आप (सल्ल॰) के साथ थीं। जब आप (सल्ल॰) उनके ख़ेमे में गए और उनको यह बात बताई तो उन्होंने अति उत्तम समाधान पेश किया। हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) बहुत ही विदुषी और मामले को समझनेवाली महिला थीं। उन्होंने कहा : "आपको कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। आप जाएँ और अपने जानवर की क़ुरबानी कर दें।" आप (सल्ल॰) ने उनका सुझाव मान लिया। आप (सल्ल॰) बाहर आए और अपने जानवरों की क़ुरबानी की, फिर सिर मुंडवाया। यह देखकर सब लोग खामोशी से उठ खड़े हुए और सभी ने अपने-अपने जानवरों की क़ुरबानी की और सिर मुंडवाया।

जब मुसलमान हुदैबिया से मदीना वापस लौट रहे थे तो क़ुरआन की सूरा फ़तह अवतरित हुई, जिसमें अल्लाह ने इस सन्धि को 'स्पष्ट विजय' (खुली फ़तह) की संज्ञा दी। क़ुरआन में है—

"ऐ नबी! (यक़ीनन) हमने तुमको स्पष्ट विजय प्रदान की।"

(क़ुरआन, सूरा-48 फ़तह आयत-1)

जब वह्य अवतरित हुई तो नबी (सल्ल॰) ने हज़रत उमर (रज़ि॰) को बुलाया और उनको अल्लाह की इस वह्य की सूचना दी। हज़रत उमर (रज़ि॰) अपनी त्वरित प्रतिक्रिया पर दुखी थे। जब उन्होंने इस वह्य के सम्बन्ध में सुना तो वे खुशी और प्रसन्नता के भाव से ओत-प्रोत हो गए। हुदैबिया में अपने व्यवहार की भरपाई के लिए वे लगातार सदक़ा देते रहे, ताकि उस ग़लती की भरपाई हो सके।

बाद की घटनाओं से सब लोगों पर अल्लाह के शब्दों की सच्चाई पूरी तरह स्पष्ट हो गई। इतिहास की धारा हमेशा-हमेशा के लिए बदल चुकी थी।

विचारणीय बातें

हदैबिया की सन्धि में हमारे लिए अनगिनत शिक्षाएँ हैं। इस घटना से सहाबियों (रज़ि॰) के ऊँचे चरित्र तथा प्रशिक्षण का पता चलता है और उन सबका आप (सल्ल॰) के प्रति सम्मान और भरोसा भी दिखाई देता है।

सुलह हुदैबिया और इस पूरे सफ़र में नबी (सल्ल॰) ने जो नीति अपनाई उसमें हमारे लिए अनगिनत शिक्षाएँ विद्यमान हैं।

(1) भड़काए जाने की पूरी कोशिश के उपरान्त भी धैर्य एवं संयम से काम लेना

एक समझदार नेतृत्व दुश्मनों की नीयत का पूरा विश्लेषण करता है। इस प्रकार वह दुश्मनों के जाल में फँसने से बच जाता है। आप (सल्ल॰) ने आत्यान्तिक धैर्य एवं संयम का प्रदर्शन किया और क़ुरैश के द्वारा भड़काए जाने की पूरी कोशिश के उपरांत उनका उत्तर नर्मी से देते रहे।

(2) विपरीत परिस्थितियों के उपरान्त भी अपनी जगह डटे रहना

यद्यपि यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि नबी (सल्ल॰) ईश्वरीय आदेश का पालन कर रहे थे, लेकिन यदि सांसारिक दृष्टि से देखा जाए तो आप (सल्ल॰) का हर क़दम एक दृष्टिवान नेतृत्वकर्ता का प्रमाण देता है।

(3) दुश्मन के इरादों को भाँप लेना

नबी (सल्ल॰) ने बार-बार यह सिद्ध कर दिया कि आप (सल्ल॰) शत्रु के निहित उद्देश्यों का अनुमान लगा सकते थे और उनकी सोच और विचार को पढ़ सकते थे। हुदैबिया में हमें इसके कई प्रमाण मिलते हैं।

(4) विश्वसनीय सलाहकार से परामर्श

हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) से सुझाव लेने से यह स्पष्ट हो जाता है कि आप (सल्ल॰) महत्वपूर्ण विषयों में अपने विश्वसनीय साथियों और उनके विचारों पर भरोसा करते थे। हमारे लिए इसमें एक बड़ी शिक्षा है। इससे यह भी स्पष्ट है कि संकट के अवसर पर हमारी जीवन-साथी हमारी सबसे अच्छी परामर्शदाता बन सकती है।

नबी (सल्ल०) के साथियों का आचरण भी इस पूरे सफ़र में महत्वपूर्ण रहा। उनकी कुछ विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं–

(1) नेतृत्व पर पूरा भरोसा

रसूल (सल्ल०) के समस्त साथी (रज़ि०) आपके आदेशों का पालन करने के लिए सदैव तैयार रहते थे। लेकिन केवल इस एक अवसर पर उन्होंने आप (सल्ल०) की बात नहीं सुनी। उन्होंने नबी (सल्ल०) के आदेश के बावजूद अपने जानवर क़ुरबान नहीं किए।

लेकिन बात न मानना भी इसलिए था कि उनको अपने नबी (सल्ल०) पर पूरा भरोसा था। उनको पूरा भरोसा था कि नबी (सल्ल०) ने जो स्वप्न बयान किया है वह एक सच्चाई है और जो वे देख रहे हैं वह नज़र का धोखा हो सकता है। केवल यही एक अवसर था जब उन सहाबियों (रज़ि०) को मोजज़े (चमत्कार) का इन्तिज़ार था। उनको लग रहा था कि सब कुछ उनके पक्ष में हो जाएगा। जब नहीं हुआ तो उनको इसका दुख हुआ। लेकिन जब नबी (सल्ल०) ने स्वयं आगे बढ़कर अपने जानवरों की क़ुरबानी की तो उन सभी ने तुरन्त आप (सल्ल०) का अनुसरण किया।

(2) ज़बरदस्त शासन-व्यवस्था

हालाँकि नबी (सल्ल०) ने सहाबियों के साथ यह संकल्प लिया था कि वे हज़रत उसमान (रज़ि०) की शहादत का बदला लेंगे और हज़रत अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) के अलावा सब लोग सन्धि की शर्तों के ख़िलाफ़ थे, लेकिन किसी ने भी खुलकर अपने विचारों को व्यक्त नहीं किया और क़ुरैश से लड़ाई करने पर हठ नहीं किया।

(3) नैतिक चरित्र का निर्माण

हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०), हज़रत उसमान (रज़ि०) और हज़रत अली (रज़ि०) की प्रतिक्रिया इस कठिन अवसर पर भी यह प्रकट करती है कि समस्त सहाबी (रज़ि०) आप (सल्ल०) का अत्यधिक सम्मान किया करते थे। इससे उन सहाबियों के उच्च एवं प्रबल चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। यह उसी प्रशिक्षण का प्रभाव था जो नबी (सल्ल०) ने किया था। **विशेष बात यह है कि सहाबियों के**

व्यक्तित्व को शेष रखते हुए नबी (सल्ल०) ने उनको प्रशिक्षित किया था।

हुदैबिया की सन्धि का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह था कि क़ुरैश ने पहली बार मदीना को मुसलमानों की रियासत के रूप में स्वीकार किया। अब तक क़ुरैश के लोग मुसलमानों को भगोड़ा कहा करते थे। हुदैबिया की सन्धि ने अरब के उन क़बीलों को जो मुसलमानों और इस्लाम-दुश्मनों के बीच के झगड़े को अलग खड़े होकर देख रहे थे, एक अवसर दिया कि अब वे नए सिरे से स्थिति की समीक्षा करें। ये लोग अब तक निष्पक्ष थे और मुसलमानों और इस्लाम-दुश्मनों के बीच चल रहे खींचतान के नतीजे की प्रतीक्षा कर रहे थे।

इस सन्धि से यह भी स्पष्ट हुआ कि बहुमत की बात ही हमेशा सही नहीं होती है। क़ुरैश और मुसलमान दोनों का यही सोचना था कि इस सन्धि की शर्तें क़ुरैश के पक्ष में हैं। केवल अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को सच्चाई और वास्तविकता का एहसास था और अन्ततः आप (सल्ल०) की बात सत्य सिद्ध हुई। जो आप (सल्ल०) की दूरदर्शिता का खुला प्रमाण है।

3:8 विजय-प्रदर्शन

अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ज़िलहिज्जा सन् 6 हिजरी में मदीना वापस आए। हुदैबिया की सन्धि ने अब आप (सल्ल॰) को यह अवसर दिया कि आप अपने प्राथमिक काम पर ध्यान दें और मानवजाति को अल्लाह के दीन की ओर बुलाएँ। आप (सल्ल॰) ने बिना समय गँवाए विभिन्न प्रमुख सरदारों और राजाओं को पत्र भेजकर उनको ईश्वरीय् धर्म की ओर बुलाया। आप (सल्ल॰) ने अपने निम्नलिखित सहाबियों को इस काम पर लगाया—

(1) दहया कलबी (रज़ि॰) को रोमी साम्राज्य के शहंशाह हिरक़्ल के पास भेजा।

(2) अब्दुल्लाह-बिन-हुज़ाफ़ा (रज़ि॰) को ईरान के बादशाह के पास भेजा।

(3) हातिब-बिन-अबी-बलतआ (रज़ि॰) को मिस्र के बादशाह मक़ूक़स के पास भेजा।

(4) अम्र-बिन-उमैया (रज़ि॰) को हबशा के बादशाह नजाशी के पास भेजा।

(5) साबित-बिन-उमर-बिन-अब्दे-शम्स (रज़ि॰) को यमन के हाकिम क़े पास भेजा।

(6) अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) को ओमान के हाकिम के पास भेजा।

(7) शुजा-बिन-अल-असदी (रज़ि॰) को सीरिया (शाम) के गवर्नर हारिस गस्सानी के पास भेजा।

(8) अला-बिन-हज़्रमी (रज़ि॰) को बहरैन के हाकिम अल-मुन्ज़िर-बिन-सावी के पास भेजा। (इब्ने-हिश्शाम)

इन सबके पास भेजे गए पत्रों का मूल-पाठ एक जैसा था।

हिरक़ल के पास भेजे गए पत्र का मूल-पाठ कुछ इस तरह था—

"अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त करुणामय और दयावान है। मुहम्मद-बिन-अब्दुल्लाह की ओर से रोम के बादशाह हिरक़्ल के नाम।

सुख शान्ति हो उसके लिए जो सच्चाई के आमंत्रण को स्वीकार कर ले। मैं तुमको निमंत्रण देता हूँ कि इस्लाम को स्वीकार कर लो। यदि तुम इस्लाम स्वीकार करते हो तो सुख-शान्ति में रहोगे और ईश्वर तुम्हें दो गुना बदला देगा। किन्तु यदि तुम इनकार करते हो तो तुम्हारी प्रजा का पाप भी तुम्हारे सिर पड़ेगा।"

पत्र के अन्त में सूरा-3 आले-इमरान की यह आयत अंकित थी—

> "ऐ नबी! कहो : 'ऐ किताबवालो! आओ एक ऐसी बात की तरफ़ जो हमारे और तुम्हारे बीच समान है। यह कि हम ईश्वर के सिवा किसी की बन्दगी न करें, उसके साथ किसी को शरीक (सम्मिलित) न ठहराएँ और हममें से कोई ईश्वर के सिवा किसी को अपना रब न बना ले। इस सन्देश को स्वीकार करने से यदि वे मुँह मोड़ें तो साफ़ कह दो कि गवाह रहो, हम तो मुस्लिम अर्थात् केवल एक वास्तविक ईश्वर की बन्दगी करनेवाले हैं।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-64)

नबी (सल्ल॰) के इन सन्देशवाहकों और आप (सल्ल॰) के पत्रों को विभिन्न बादशाहों ने विभिन्न अन्दाज़ से लिया। हिरक़्ल, जिसको दिह्या कलबी (रज़ि॰) ने यरूशलम में आप (सल्ल॰) का सन्देश पेश किया, उसने एक राजदूत की तरह सम्मानपूर्वक स्वागत किया। उसने इस्लाम को सच्चा धर्म कहा। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि वह इस्लाम स्वीकार करने को तैयार था, लेकिन अपने दरबारियों के रवैये को देखकर वह ऐसा नहीं कर सका। उसने नबी (सल्ल॰) के पास तोहफ़े भेजे और दिह्या कलबी (रज़ि॰) को सम्मान के साथ विदा किया।

इसके विपरीत ईरान के बादशाह ख़ुसरो परवेज़ की प्रतिक्रिया बिलकुल अलग थी। उसने ग़ुस्से में उस ख़त के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और यमन के

गवर्नर को आदेश दिया कि आप (सल्ल॰) को (ईश्वर न करे) गिरफ़्तार करके उसके पास भेजे। यमन के गवर्नर ने न केवल उसके आदेश का पालन नहीं किया, बल्कि आप (सल्ल॰) का ख़त मिलने पर इस्लाम क़बूल कर लिया।

हब्शा का बादशाह नजाशी नबी (सल्ल॰) का ख़त मिलने पर मुसलमान हो गया।

मिस्र के बादशाह मक़ूक़स ने नबी (सल्ल॰) के भेजे गए व्यक्ति और पत्र दोनों को बहुत सम्मान दिया। लेकिन उसने इस्लाम स्वीकार नहीं किया।

अल-मुन्ज़िर-बिन-सावी, जो बहरैन का शासक था, उसने नबी (सल्ल॰) का ख़त मिलने पर इस्लाम क़बूल कर लिया।

दोनों भाई जैफ़र और अब्द ने भी, जो ओमान में शासन कर रहे थे, इस्लाम स्वीकार कर लिया। मुंज़िर-बिन-हारिस गस्सानी ने, जो सीरिया का गवर्नर था भेजे गए दूत के साथ अच्छा व्यवहार किया, किन्तु इस्लाम में प्रवेश न हुआ।

हौज़ा-बिन-अली जो यमामा का बादशाह था, उसने इस्लाम में प्रवेश करने की यह शर्त रखी कि उसको इस्लामी राज्य के आधे हिस्से का भागीदार बनाया जाए। नबी (सल्ल॰) ने उसको तुरन्त मना कर दिया। **इस्लामी राज्य तो एक बड़ी ज़िम्मेदारी है, सम्पत्ति नहीं जिसे ताक़त के लालची लोगों के बीच बाँटा जाए।**

इन बड़े और मशहूर शासकों के अलावा छोटे-छोटे बहुत-से शासक इस अवसर पर इस्लाम में दाख़िल हुए। फ़रवा-बिन-रूमी, जो रोमी साम्राज्य का एक गवर्नर था, उसने इस्लाम क़बूल कर लिया और अपनी गवर्नरी सत्य-धर्म के लिए क़ुरबान कर दी। बाद में उसको उसी वजह पर शहीद कर दिया गया। सुमाया, नज्द का गवर्नर, जबला, ग़स्सान का हाकिम, दौमतुल-जन्दल का उकैदर-बिन-अब्दुल-मलिक, ज़ुल-कलाह हुमैरी, जो हुमैर क़बीला का सरदार था, ये सब इस्लाम में दाख़िल हो गए। ज़ुल-कलाअ ने इस्लाम क़बूल करते समय 18000 ग़ुलामों को स्वतन्त्र किया।

(नईम सिद्दीक़ी-2005)

अरब द्वीप की परिस्थिति में भी बड़ा बदलाव आया। मदीना से दूतों को लगभग हर इलाक़े और हर क़बीले में भेजा गया। जिनके द्वारा उन क़बीलों का आह्वान किया गया, जिससे बहुत-से क़बीले इस्लाम ले आए। विभिन्न क़बीलों से प्रतिनिधिमण्डल आप (सल्ल॰) की सेवा में आने लगे। ये प्रतिनिधिमंडल या तो सत्य-धर्म के आह्वान को स्वीकार करने के लिए होते या मदीना की रियासत से शान्ति-सन्धि करने के लिए आते।

हुदैबिया की सन्धि के बाद इस्लाम को अरब में बड़े स्तर पर स्वीकार किया जाने लगा और इस्लाम का प्रभाव बहुत बढ़ गया। क़ुरआन में हुदैबिया की सन्धि को खुली विजय (फ़तहे मुबीन) कहा है और यह उस सफलता का पहला प्रदर्शन था।

मक्का और मदीना में इस शान्ति-सन्धि के बाद आने-जाने का रास्ता खुल गया। अब मक्का के लोग मदीना आकर न केवल इस्लाम को समझ सकते थे, बल्कि किस तरह मुसलमान इसपर अमल कर रहे हैं उसको अपनी आँखों से देख भी सकते थे।

क़ुरैश के नेक लोग अब इस्लाम के प्रभाव को स्वीकार कर रहे थे। क़ुरैश के कई वीर-बहादुर और बड़े लोग इसी समय में इस्लाम में दाख़िल हुए। इसमें हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰), अम्र-बिन-अल-आस (रज़ि॰) और उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) के नाम उल्लेखनीय हैं। यह इस बात का खुला प्रमाण था कि क़ुरैश अपनी योजना में बिलकुल असफल सिद्ध हुए। उनको लग रहा था कि मुसलमानों को मक्का में आने से रोक कर वे इस्लाम के बढ़ते प्रभाव को रोक रहे हैं, जबकि मामला इसके बिलकुल विपरीत हुआ।

ऐसा लगता था कि हुदैबिया-सन्धि के अनुसार सन्धि की सारी शर्तें क़ुरैश के पक्ष में थीं। मुसलमान क्या क़ुरैश का भी ऐसा ही सोचना था। लेकिन कुछ ही दिनों में पता चल गया कि वास्तव में यह किसके पक्ष में थीं। अबू-जन्दल (रज़ि॰) को सुहैल-बिन-अम्र अपने साथ मक्का ले गया था। उसी तरह एक और मुसलमान अबू-बसीर (रज़ि॰), जो मक्का से मदीना भागकर आए, उनको भी सन्धि की शर्तों के अनुसार नबी (सल्ल॰) ने क़ुरैश के भेजे हुए दो दूतों के हवाले कर दिया। जब अबू-बसीर (रज़ि॰) को मक्का ले जाया

जा रहा था, उन्होंने दोनों दूतों को चकमा दिया, और एक की हत्या करके भाग गए।

फिर मदीना नबी (सल्ल॰) की सेवा में हाज़िर हुए और कहा कि आपने अपनी सन्धि के अनुसार मुझे क़ुरैश के हवाले कर दिया था, लेकिन अब मैंने अपने आपको आज़ाद कर लिया है। चूँकि उनको यह पता था कि आप (सल्ल॰) उनको सन्धि के अनुसार फिर मक्का वापस कर देंगे, वे मदीना छोड़कर लाल सागर के पास अरब की मशहूर रास्ते की ओर चले गए। यह वह रास्ता था जहाँ से क़ुरैश के व्यापारियों के क़ाफ़िले गुज़रते थे। अबू-जन्दल (रज़ि॰) और कुछ दूसरे मक्की मुसलमान वहाँ भागकर आए और उनसे मिल गए। अब ऐसे लोगों का एक गरोह तैयार हो गया जो क़ुरैश से उनके अत्याचारों का बदला लेना चाहता था। ये लोग हुदैबिया-सन्धि के बाध्य भी नहीं थे।

इन लोगों ने क़ुरैश के व्यापारियों के क़ाफ़िले को निशाना बनाना शुरू कर दिया। उनके किए गए अचानक हमलों द्वारा ज़बरदस्त व्यापारिक नुक़सान ने क़ुरैश की रातों की नींद और दिन का चैन हराम कर दिया। क़ुरैश यदि सैनिक दस्ते भेजते तो वे पहाड़ियों में छिप जाते और उनके हाथ नहीं आते।

उन लोगों के हमलों से तंग आकर क़ुरैश ने अपना दूत मदीना भेजा और हुदैबिया-सन्धि की शर्तों में से इस हिस्से को निकालने की गुहार लगाई जिसके होते मक्का के मुसलमान मदीना नहीं आ सकते थे। मक्कावालों ने नबी (सल्ल॰) से गुहार लगाई कि वे अबू-बसीर (रज़ि॰) और उनके साथियों को मदीना बुला लें। नबी (सल्ल॰) ने उनकी दोनों माँगे स्वीकार कर लीं और क़ुरैश ने चैन की साँस ली।

इसके विपरीत **मदीना से एक भी ग़ैर-मुस्लिम या यहूदी ने मक्का जाने की कोशिश नहीं की, ताकि इस सन्धि से लाभ उठाया जा सके। इसलिए पूरे अरब को यह स्पष्ट संदेश पहुँचा कि वैचारिक एवं धार्मिक मतभेद के उपरांत भी ये लोग मदीना में अपने आपको सुरक्षित मानते थे।**

हुदैबिया की सन्धि जो देखने में पूरी-की-पूरी इस्लाम-दुश्मन क़ुरैश के पक्ष में लगती थी, मुसलमानों के लिए ज़बरदस्त लाभकारी सिद्ध हुई।

विचारणीय बातें

(1) हुदैबिया की सन्धि एक महत्वपूर्ण उदाहरण है कि किस प्रकार प्रतिकूल परिस्थितियों की दिशा को अपने पक्ष में मोड़ा जा सकता है और नबी (सल्ल॰) ने इसको व्यवहारिक किस तरह किया। इससे यह सिद्ध होता है कि आप (सल्ल॰) की दूरदृष्टि हर चीज़ पर थी और आप (सल्ल॰) को वास्तविक परिस्थिति की समझ थी। यदि यह न होता तो इन परिणामों की प्राप्ति सम्भव न थी।

(2) हुदैबिया से मदीना वापस आने के तुरन्त बाद आप (सल्ल॰) ने अपने प्रतिनिधिमंडलों को विभिन्न रियासतों में भेजना शुरू किया। उनमें उस समय की दो बड़ी शक्तियाँ भी शामिल थीं। इन राजदूतों में से अधिकांश लोगों को राजनयिक कार्यों का कोई अनुभव नहीं था, लेकिन उन्होंने अपनी ज़िम्मेदारियों को बेहतरीन ढंग से निभाया। यह आत्म-विश्वास इन लोगों में उस प्रशिक्षण की वजह से था जो नबी (सल्ल॰) ने उनको दिया था। यह भरोसा और आत्मविश्वास इस वजह से भी था कि उनको इस्लाम की सच्चाई का पूरा विश्वास था।

(3) कुछ शासकों द्वारा इस्लाम स्वीकार करने से यह भी साफ़ होता है कि उन लोगों तक यह सन्देश पहले ही पहुँच चुका था। क़ुरैश द्वारा इस्लाम के बढ़ते प्रभाव को रोकने की सारी कोशिशें बेकार सिद्ध हुईं।

(4) **हुदैबिया की सन्धि से यह भी सिद्ध होता है कि बात-चीत और वार्ताओं से मामले को हल करना युद्ध से अधिक बेहतर विकल्प है।**

(5) **इस पूरे घटनाक्रम से यह भी सिद्ध होता है कि बहुमत सदा सही नहीं होता।**

3:9 ख़ैबर का समर्पण

क़ुरैश से शान्ति-समझौते के बाद ख़ैबर के यहूदी क़बीलों को कोई उम्मीद नहीं रही कि अब वे मुसलमानों के ख़िलाफ़ कोई संयुक्त सेना जमा कर पाएँगे। अब उन्होंने मुसलमानों को पराजित करने के लिए स्वयं ही रणनीति बनाने की कोशिश शुरू कर दी। लेकिन उनको इस बात का अनुमान नहीं था कि क़ुरैश के ख़तरे की समाप्ति के बाद अब नबी (सल्ल०) मदीना से एक बड़ी सेना लेकर दुश्मनों को सबक़ सिखाने के लिए मदीना से दूर निकलकर भी कार्रवाई कर सकते हैं।

जैसे ही आप (सल्ल०) को ख़ैबर के यहूदी क़बीलों की साज़िश का पता चला आप (सल्ल०) 1600 जांबाज़ सैनिकों को लेकर ख़ैबर की ओर चल पड़े। ख़ैबर के यहूदी क़बीले जो अब तक तैयारियों में व्यस्त थे मुसलमानों की इस अचानक कार्रवाई को देखकर दंग रह गए। ख़ैबर में यहूदियों के 6 भव्य क़िले थे। इसके अलावा उनके पास बहुत-सी सुरक्षित हवेलियाँ भी थीं। वे अपने क़िलों में बन्द हो गए। उनके पास दैनिक आवश्यकता और खाने-पीने के सामान की कोई कमी नहीं थी और वे एक लम्बी अवधि तक घेराव की कठिनाइयों को सहन कर सकते थे। इतिहास की किताबों से पता चलता है कि यहूदियों के पास लगभग 20 हज़ार ऐसे लोग थे जो युद्ध में हिस्सा लेने योग्य थे। लेकिन फिर भी उनमें यह साहस नहीं हो सका कि मुसलमानों के मात्र 1600 सैनिकों के सामने आ सकें। मुसलमानों ने सबसे पहले नाइम नामक क़िले पर हमला किया। युद्ध के दृष्टिकोण से इस क़िले का सबसे अधिक महत्व था और वह सुरक्षा के लिहाज़ से सबसे अधिक मज़बूत था और यहूदियों ने उसमें पर्याप्त हथियार और ज़रूरत का सामान जमा कर रखा था।

दस दिनों तक सख़्त मुक़ाबला चलता रहा और अन्त में यह क़िला

हज़रत अली (रज़ि॰) के हाथों फ़तह हुआ। उन्होंने आमने-सामने की लड़ाई में यहूदियों के सबसे मशहूर यौद्धा मरहब को ख़त्म कर दिया। मरहब के बारे में मशहूर था कि वह एक हज़ार पहलवानों से भी अधिक शक्तिशाली है। वहाँ पराजित होने के बाद यहूदी दूसरे क़िले में चले जाए। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण क़िले के हाथ से निकलने के बाद वे मानसिक रूप से पराजित हो चुके थे और कुछ ही दिनों में उन्होंने हथियार डाल दिए।

उनके पूर्व में क़िए गए षड्यन्त्रों के बावजूद नबी (सल्ल॰) ने उनके साथ नर्म व्यवहार किया। यहूदी क़बीले, जिन्होंने हथियार डाल दिए उनकी धन-सम्पत्ति और लोगों को नबी (सल्ल॰) ने छोड़ दिया। आप (सल्ल॰) ने उनके हथियार डालने की शर्तें स्वीकार कीं। यहूदियों ने निवेदन किया कि उन लोगों को ख़ैबर में ही रहने दिया जाए इसके बदले वे ख़ैबर की वार्षिक पैदावार का आधा हिस्सा मुसलमानों को अदा करेंगे।

जब यहूदियों के साथ इस समझौते पर हस्ताक्षर हो चुके तो एक यहूदी महिला ने, जिसका नाम ज़ैनब-बिन्त-हारिस था, नबी (सल्ल॰) और उनके कुछ सहाबियों को खाने का निमन्त्रण दिया। उसको पहले से यह पता था कि नबी (सल्ल॰) को बकरे का भुना हुआ शाना पसन्द है। उसने गोश्त में, विशेषकर शाने के गोश्त में, ज़हर मिला दिया। जब आप (सल्ल॰) खाने पर बैठे तो आप (सल्ल॰) ने पहला कौर (लुक़मा) उसी में से लिया, लेकिन लेते ही उसे उगल दिया। आप (सल्ल॰) ने बताया कि उसमें ज़हर है। उस महिला ने अपना अपराध भी स्वीकार कर लिया। आप (सल्ल॰) ने उसको माफ़ कर दिया। लेकिन जब आप (सल्ल॰) के एक सहाबी बिश्र-बिन-बराअ (रज़ि॰) की, जिन्होंने उसमें से कुछ हिस्सा खा लिया था, उसी ज़हर से मौत हो गई तो उस औरत को मौत की सज़ा दी गई।

ख़ैबर की पराजय के बाद, क़रीब की एक यहूदी आबादी 'फ़दक' ने भी हथियार डाल दिए और मुसलमानों से शान्ति का समझौता कर लिया। उन्होंने भी लगभग उन्हीं शर्तों पर समझौता किया, जिन पर ख़ैबर के यहूदियों ने किया था।

वापसी के सफ़र में वादी-अल-क़ुरा के यहूदियों ने मुसलमानों की सेना पर आक्रमण कर दिया, लेकिन छोटी-सी झड़प के बाद उन्होंने भी ख़ैबर जैसी शर्तों पर सन्धि कर ली।

अभी आप (सल्ल॰) ख़ैबर में ही थे कि हज़रत जाफ़र-बिन-अबू-तालिब (रज़ि॰), जो पैग़म्बर (सल्ल॰) के चचेरे भाई थे और जिन्होंने हबशा हिजरत की थी, शेष मुसलमानों के साथ वापस आ गए। उनके साथ हज़रत अबू-मूसा अशअरी (रज़ि॰) भी थे, जो हबशा में मुसलमानों के साथ मौजूद थे।

सफ़ीया (रज़ि॰) मशहूर यहूदी सरदार हुय्याय-बिन-अख़तब की बेटी और ख़ैबर के एक-दूसरे सरदार किनाना की पत्नी थीं। ख़ैबर के युद्ध में किनाना मारा गया था। सफ़ीया दिह्या कलबी (रज़ि॰) के हिस्से में आई थीं। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने उन्हें दिह्या (रज़ि॰) से ख़रीद कर आज़ाद कर दिया। आज़ाद होने के बाद वे मुसलमान हो गईं। आप (सल्ल॰) ने उनसे शादी की इच्छा व्यक्त की, जिसको उन्होंने ख़ुशी-ख़ुशी क़बूल कर लिया।

मदीना वापसी के बाद नबी (सल्ल॰) ने अबू-सुफ़ियान की बेटी हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) से निकाह को परिपूर्ण किया। उन्होंने हबशा हिजरत की थी और नजाशी ने वहीं उनका निकाह नबी (सल्ल॰) से पढ़ाया था।

ख़ैबर के यहूदियों पर क़ाबू पाने के बाद नबी (सल्ल॰) ने मदीना के आस-पास के बद्दू क़बीलों की ओर ध्यान दिया। उन्होंने एक लम्बे समय से मदीना के मुसलमानों की नाक में दम कर रखा था। वे मुसलमान चरवाहों को परेशान करते और मुसाफ़िरों को भी प्रायः लूट लिया करते थे। पाँच फ़ौजी दस्ते उनके उन्मूलन के लिए भेजे गए। उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है—

(1) एक दस्ता हज़रत उमर (रज़ि॰) के नेतृत्व में शाबान सन् 7 हिजरी को तुराबा की ओर भेजा गया। कोई जंग नहीं हुई।

(2) एक दूसरा दस्ता हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) की कमान में शाबान 7 हिजरी में बनू-कलाब की ओर भेजा गया। लड़ाई में दुश्मन की ज़बरदस्त पराजय हुई।

(3) हज़रत बशीर-बिन-साद (रज़ि॰) के नेतृत्व में एक ऐसा ही दस्ता शाबान 7 हिजरी में बनू-मुर्रा की ओर भेजा गया। दुश्मन पराजित हुआ और मैदान छोड़कर भाग गया।

(4) हज़रत ग़ालिब-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) के नेतृत्व में एक दस्ता रमज़ान 7 हिजरी में मैफ़ाह की ओर भेजा गया। इस लड़ाई में हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) ने एक ऐसे व्यक्ति की हत्या कर दी जिसने कलिमा पढ़ लिया था। (ऐसा गुमान किया जाता है कि उसने जान बचाने के लिए ऐसा किया होगा।) नबी (सल्ल॰) ने उसामा (रज़ि॰) को चेतावनी देते हुए कहा : "क्या तुमने उसका सीना चीर कर देखा था कि वह झूठा है?"

(5) हज़रत बशीर-बिन-साद (रज़ि॰) के नेतृत्व में एक दस्ता शाबान सन् 7 हिजरी को ख़ैबर की ओर भेजा गया। जंग के बाद दुश्मन पराजित हो गया।

विचारणीय बातें

(1) यहूदी संख्या में अधिक थे, लेकिन इसके बावजूद वे साहस नहीं जुटा सके कि वे सामने आकर युद्ध करें। यह इस कारण से था कि उनको पता था कि नबी (सल्ल॰) की शत्रुता का कारण उनका मुसलमानों के प्रति द्वेष है जो नैतिकता की बुनियाद पर नहीं है। इसलिए उनमें मुसलमानों से युद्ध करने का नैतिक साहस नहीं था। क़ुरआन कहता है—

> "ऐ नबी! मोमिनों को जंग पर उभारो। यदि तुम में से 20 आदमी सब्र करनेवाले हों तो वे 200 पर भारी पड़ेंगे और यदि 100 आदमी ऐसे हों तो हक़ का इनकार करनेवाले हज़ार आदमियों पर भारी पड़ेंगे। क्योंकि वे ऐसे लोग हैं जो समझ नहीं रखते।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-65)

मौलाना अबुल-आला मौदूदी (रह॰) इस आयत की व्याख्या में लिखते हैं—

"आज कल जिसको हम नैतिकता कहते हैं, उसको क़ुरआन 'समझ' कहता है। इस शब्द का अर्थ यह है कि जिसके बारे में यह कहा जा रहा है

वह अपने उद्देश्य का पूरा ज्ञान और समझ रखता था। उसके मानस में यह बिलकुल स्पष्ट है कि किस उद्देश्य के लिए उसने अपनी जान की बाज़ी लगा रखी है। अगर उसकी ज़िन्दगी का मक़सद पूरा नहीं होता तो उसकी ज़िन्दगी बेकार है। ऐसा व्यक्ति जिसको उसकी पूरी समझ है, वह उस व्यक्ति से अपने आप बहुत ज़्यादा शक्तिशाली हो जाता है जो नहीं जानता कि उसे क्या करना है और उसका उद्देश्य क्या है? ऐसी स्थिति में एक जैसी शारीरिक क्षमता के बावजूद दोनों में ज़बरदस्त अन्तर पैदा हो जाता है।"

(मौदूदी रह॰, 2007, पृष्ठः 372)

(2) ख़ैबर के यहूदियों को पिछले षड्यंत्रों और उनकी इस्लाम से दुश्मनी के उपरांत भी उनको माफ़ कर दिया गया और कुछ शर्तों के साथ उनको वहीं रहने दिया गया। नबी (सल्ल॰) की कार्य-शैली क़ुरआन की शिक्षाओं और उसके शान्तिमय स्वभाव के ठीक अनुकूल थी। क़ुरआन का आदेश है—

"और ऐ नबी! यदि दुश्मन सुलह और शान्ति चाहता हो तो तुम भी उसके लिए तैयार हो जाओ और अल्लाह पर भरोसा करो, निस्सन्देह वही सब कुछ सुनने और जाननेवाला है और यदि वे धोखे की नीयत रखते हों तो तुम्हारे लिए अल्लाह काफ़ी है। वही तो है जिसने अपनी मदद से और मोमिनों के ज़रिया से तुम्हारा समर्थन किया।" (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयतें-61, 62)

नबी (सल्ल॰) की व्यक्तिगत कार्य-शैली इतनी करुणा भरी थी कि आप (सल्ल॰) ज़बरदस्त ग़लतियों और अत्याचार के बावजूद अपने दुश्मनों को अनदेखा और क्षमा कर देते थे। लेकिन यह व्यवहार भी अल्लाह की सीमाओं के अधीन होता।

3:10 सपना साकार हुआ

ज़ी-क़ादा 7 हिजरी में नबी (सल्ल॰) हुदैबिया की सन्धि की शर्तों के अनुसार उमरा करने के लिए निकले। यह उमरा उस उमरा का बदला था जो मुसलमान गत वर्ष क़ुरैश की हठधर्मी के कारण नहीं कर पाए थे। नबी (सल्ल॰) के नेतृत्व में दो हज़ार यात्रियों का क़ाफ़िला मक्का की ओर रवाना हुआ। इनमें बच्चे और महिलाएँ भी शामिल थीं। हुदैबिया की सन्धि में शामिल तमाम मुसलमान जो उस समय तक जीवित थे इस उमरा-यात्रा में नबी (सल्ल॰) के साथ थे।

आप (सल्ल॰) अपनी ऊँटनी पर सवार होकर ज़ुल-हुलैफ़ा के मुक़ाम पर पहुँचे। यह मदीना से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहाँ पहुँचकर सभी ने एहराम बाँधा और तलबिया[1] पढ़नी शुरू कर दी।

"लब्बै-क अल्लाहुम-म लब्बै-क लब्बै-क ला शरी-क ल-क लब्बैक,
इन्नल-हम-द वन्नेअ-म-त ल-क वल् मुल-क ला शरी-क लक"

अनुवाद :

उपस्थित हूँ।

ऐ अल्लाह! उपस्थित हूँ।

मैं उपस्थित हूँ। आपका कोई शरीक नहीं।

मैं उपस्थित हूँ।

समस्त स्तुतियाँ, कृतज्ञता और सत्ता आपकी ही है।

आपका कोई साझी नहीं।

इस पवित्र गरोह को देखकर रास्ते में मौजूद तमाम क़बीले, उनके सरदार और आम लोग बहुत प्रभावित हुए।

---

1. हज या उमरा करने की नियत।

पिछली यात्रा के दौरान हुए क़ुरैश के हमले को ध्यान में रखते हुए नबी (सल्ल॰) ने कुछ हथियारों को साथ लेने का आदेश दिया था। आप (सल्ल॰) नहीं चाहते थे कि मुसलमान फिर किसी षड्यंत्र का शिकार हो जाएँ।

मक्का के पास पहुँचने के बाद नबी (सल्ल॰) ने हथियारों और 200 घुड़सवारों को, जिनका नेतृत्व मुहम्मद-बिन-मुस्लिमा (रज़ि॰) कर रहे थे, पीछे छोड़ा। उनको यह आदेश था कि हर समय तैयार रहें कि कहीं कोई अचानक संकट न आने पाए। इस प्रकार मुसलमान मक्का में दाख़िल हुए। उनकी तलवारें परम्पराओं के अनुसार म्यानों में थीं। मक्का के लोग रास्तों में और दूर पहाड़ियों से इस गरोह को मक्का में दाख़िल होते हुए देख रहे थे।

जब नबी (सल्ल॰) को पता चला कि क़ुरैश ने यह अफ़वाह फैला रखी है कि मुहाजिरीन को मदीना की जलवायु ने कमज़ोर कर दिया है तो आप (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि वे एहराम को इस तरह अपने शरीर पर लपेटें कि उनका दाहिना हाथ और कंधा खुला रहे और वे बैतुल्लाह (काबा) के पहले तीन चक्कर दौड़कर लगाएँ। यह देखने के बाद मक्कावालों की वह अफ़वाह झूठी सिद्ध हुई।

उमरा करने के बाद नबी (सल्ल॰) ने सहाबियों का एक दल मुहम्मद-बिन-मुस्लिमा (रज़ि॰) और उन घुड़सवारों के पास भेजा जो हथियारों की निगरानी कर रहे थे। अब ये लोग उमरा करने गए और दूसरों ने उनकी जगह संभाली।

सन्धि के अनुसार नबी (सल्ल॰) और उनके सहाबी तीन दिनों तक मक्का में ठहरे। इस बीच मक्का के लोगों को यह अवसर मिला कि आप (सल्ल॰) और आप (सल्ल॰) के साथियों को देखें, उनकी और अपने आचरण की तुलना करें और देखें कि मुसलमान वास्तव में होते कैसे हैं। उनमें से वे लोग जो मुसलमानों से दिल से शत्रुता नहीं रखते थे, वे आप (सल्ल॰) और सहाबियों की जीवन-शैली से प्रभावित होकर सत्य-धर्म की ओर आकर्षित हुए। ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰), अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) और उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) ने इसी प्रभाव में आकर इस्लाम क़बूल किया।

उसी बीच जबकि मुसलमान मक्का में थे, अब्बास (रज़ि॰) की साली,

मैमूना (रज़ि॰) ने जिनके पति का कुछ समय पहले देहान्त हुआ था, अपनी बहन उम्मुल-फ़ज़ल से रिश्ता ढूँढने के लिए कहा। उम्मुल-फ़ज़ल ने यह काम अपने पति हज़रत अब्बास (रज़ि॰) के सिपुर्द किया। जब हज़रत अब्बास (रज़ि॰) ने यह सुझाव दिया कि क्या वह नबी (सल्ल॰) से शादी करना चाहेंगी तो वे बिना किसी हिचकिचाहट के तैयार हो गईं। मक्का से वापसी में सरीफ़ नामी स्थान पर यह शादी सम्पन्न हुई।

जब मुसलमान मक्का से वापस आ रहे थे, हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) की छोटी बच्ची रोने लगी और मदीना जाने की ज़िद करने लगी। तीन क़रीबी रिश्तेदार हज़रत अली (रज़ि॰), हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) और हज़रत जाफ़र (रज़ि॰) उसको गोद लेने के लिए तैयार थे। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने बच्ची को हज़रत जाफ़र (रज़ि॰) की सरपरस्ती में दिया, क्योंकि वे बच्ची के मौसा थे।

मदीना वापस होने के बाद नबी (सल्ल॰) ने निम्नलिखित सैनिक दल निकट के क्षेत्रों में भेजे—

(1) इब्ने-अबी-अलऔजा (रज़ि॰) के नेतृत्व में एक फ़ौजी दस्ता ज़िलहिज्जा 7 हिजरी में क़बीला बनू-सुलैम की ओर भेजा। शत्रु पराजित हुआ और अगले साल पूरे क़बीले ने इस्लाम क़बूल कर लिया।

(2) ग़ालिब-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) के नेतृत्व में एक सैनिक टुकड़ी सफ़र 8 हिजरी में बनी-मलूह की ओर भेजी गई। दुश्मनों को ज़बरदस्त हार का सामना करना पड़ा।

(3) शुजा-बिन-वहूब अल-अस्दी (रज़ि॰) के नेतृत्व में एक दस्ता बनू-आमिर से मुक़ाबले के लिए रबी-उल-अव्वल सन् 8 हिजरी में भेजा गया। एक मामूली जंग के बाद दुश्मन भाग खड़ा हुआ।

(4) काब-बिन-उमैर (रज़ि॰) के नेतृत्व में एक सैनिक टुकड़ी रबी-उल-अव्वल सन् 8 हिजरी में ज़ात-अतलह की ओर भेजी गई। इस टुकड़ी को सीरिया की सीमा पर दुश्मन की गतिविधियों पर नज़र रखने के लिए तैनात किया गया था। इस टुकड़ी के केवल एक सहाबी जीवित वापस आ सके। शेष 14 सहाबियों को शहीद कर दिया गया।

विचारणीय बातें

(1) नबी (सल्ल॰) का निर्णय कि मुसलमान उमरे के सफ़र पर अपने साथ हथियार लेकर चलें, ताकि क़ुरैश के हमले की स्थिति में उनसे बचाव कर पाना सम्भव हो, केवल आप (सल्ल॰) का गुमान नहीं था। क़ुरैश ने पिछले सफ़र में भी कुछ नवजवानों से हमला करवाया था और वे अब भी करा सकते थे। कुछ दिनों के बाद बनू-बक्र का बनू-ख़ुज़ाआ (जो क़बीला मुसलमानों का समर्थक था) पर हमला, जो हुदैबिया सन्धि का स्पष्ट उल्लंघन था, यह स्पष्ट करता है कि अन्दर से ये अब भी मुसलमानों के ख़िलाफ़ थे। **नबी (सल्ल॰) का यह फ़ैसला हमसे यह माँग करता है कि हम अपने द्वारा की गई किसी भी सन्धि का पूर्ण रूप से पालन करें, परन्तु शत्रु की चालों से भी सतर्क रहें।**

(2) इस उमरा ने क़ुरैश की जनता जनार्धन को यह मौक़ा दिया कि वह मुसलमानों को शांतिपूर्ण वातावरण में एक बड़े गरोह के रूप में क़रीब से देखें और उनके चरित्र और व्यवहार को परखें। ये लोग स्वयं अब उनके बारे में स्वतंत्र राय बना सकते थे और मुसलमानों के विरुद्ध होनेवाले प्रचार की सच्चाई तक भी पहुँच सकते थे।

अब उन्हें अवसर मिला कि वे अपनी ग़लत सोच को सुधार सकें। मुसलमानों को क़रीब से देखने की वजह से लोगों ने मुसलमानों के बारे में अपने विचार बदले और मुसलमानों की छवि उनकी दृष्टि में बेहतर हो गई। अगले साल मुसलमानों के विरुद्ध उनका हथियार न उठाना यह स्पष्ट करता है कि उनके दिल बहुत हद तक बदल चुके थे।

3:11 रोम साम्राज्य से सामना

हुदैबिया की सन्धि के बाद नबी (सल्ल॰) ने आस-पास के देशों, बादशाहों और क़बीले के सरदारों के पास अपने राजदूतों को भेजा और उन्हें इस्लाम स्वीकार करने का आह्वान किया। हारिस-बिन-उमैर (रज़ि॰) को जिनको आप (सल्ल॰) ने बसरा के सरदार के पास भेजा था, मूतह के रोमी गवर्नर शुरहबील-बिन-अम्र ने शहीद करवा दिया। यह अपराध अक्षम्य और अन्तर्राष्ट्रीय क़ानूनों की खुली अवहेलना था।

जुमादल-अव्वल सन् 8 हिजरी तदानुसार अगस्त/सितम्बर सन् 629 ई॰ में नबी (सल्ल॰) ने तीन हज़ार मुसलमानों की एक सेना को मूतह की ओर भेजा। सेना की कमान हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा के हाथ में थी। आप (सल्ल॰) का आदेश था कि यदि ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) शहीद हो जाएँ तो हज़रत जाफ़र-बिन-अबी-तालिब (रज़ि॰) कमान सम्भाल लें और वे भी शहीद हो जाएँ तो हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-रवाहा (रज़ि॰) सेना के सरदार होंगे। यदि ये भी शहीद हो जाएँ तो फिर मुसलमान अपना सरदार चुन लें। यह कहकर आप (सल्ल॰) एक तरह से इन तीनों की शहादत का इशारा दे रहे थे।

इस सेना के सरदार को आप (सल्ल॰) ने यह आदेश दिया कि वे उस जगह जाएँ जहाँ हारिस-बिन-उमैर (रज़ि॰) को शहीद किया गया था और लोगों को इस्लाम की ओर बुलाएँ। यदि लोग आह्वान को स्वीकार कर लें और इस्लाम में दाख़िल हो जाएँ तो उन्हें कोई आघात न पहुँचाया जाए। दूसरी स्थिति में अल्लाह की मदद से उन लोगों से जंग करें। आप (सल्ल॰) ने उनको यह भी आदेश दिया कि न तो धोखा दें, न बच्चों, बूढ़ों और महिलाओं पर हाथ उठाएँ, न उनकी हत्या करें। इसी प्रकार जो गिरजाघरों और इबादतगाहों में इबादत कर रहे हों उनको उनके हाल पर छोड़ दिया जाए, यानी उन पर हाथ न उठाएँ। आप (सल्ल॰) ने उनको पेड़ काटने और मकानों को ध्वस्त करने से भी मना किया।

मआन पहुँचने के बाद मुसलमानों को यह सूचना मिली कि क़ैसर स्वयं एक ज़बरदस्त सेना के साथ सीरिया की सीमा पर आया हुआ है। उसकी सेना में एक लाख सैनिक थे। एक और सेना जो लख्म, जुज़ान, बलक़ीन, बहरा और बलीई आदि क़बीलों की थी, उसमें भी क़रीब एक लाख फ़ौजी थे, उनके साथ थी। उस सेना की कमान मालिक-रफ़ीला के हाथ में थी। मालिक बलीई क़बीले से था।

मुसलमानों ने नबी (सल्ल॰) के आदेशानुसार दो दिन मआन में पड़ाव किया। परिस्थितियाँ मुसलमानों के अनुकूल नहीं थी। न तो उनके पास बड़ी सेना थी और न ही अच्छे हथियार। कुछ लोगों का विचार था कि उसी जगह ठहरा जाए। नबी (सल्ल॰) को परिस्थितियों से अवगत कराया जाए और आप (सल्ल॰) से और अधिक सैनिकों को भेजने का आग्रह किया जाए।

लेकिन अब्दुल्लाह-बिन-रवाहा (रज़ि॰) ने एक जोशीली तक़रीर से लोगों के दिल बदलकर रख दिए और मुसलमान साठ गुना बड़ी सेना से मुक़ाबले के लिए तैयार हो गए। हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-रवाहा (रज़ि॰) ने कहा : "लोगो! यदि तुम उस चीज़ से भयभीत हो जिसके लिए तुम आए हो तो यह याद रखो कि तुम तो शहादत का जाम पीने के लिए ही कफ़न सिर से बांधकर निकले हो। हम संख्या-बल से नहीं जीतते, न ही हम हथियारों की ताक़त पर जंग जीतते हैं। हम तो उस सत्य-पथ की ताक़त पर जीतते हैं जिसके द्वारा अल्लाह ने हमें मान-सम्मान दिया है। इसलिए अब आगे बढ़ो, या तो शहादत मिलेगी या फिर जीत हासिल होगी।"

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-रवाहा (रज़ि॰) की इस भावुक और प्रभावशाली तक़रीर से मुसलमान जोश से भर गए। उन्होंने दुश्मन की ओर क़दम बढ़ाया और रोमी और क़बायली संयुक्त-शक्ति से टकराने को तैयार हो गए। संयुक्त सेना की कमान स्वयं हिरक़्ल के हाथों में थी। जब दुश्मन क़रीब आया तो मुसलमानों ने मूतह में मोर्चा सम्भाल लिया।

युद्ध के लिए अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। अगले ही दिन युद्ध शुरू हो गया। रोमी मुसलमानों को नर्म चारा समझ रहे थे और उनको ऐसा लग रहा था कि कुछ घंटों में मुसलमानों का काम तमाम कर देंगे। हज़रत ज़ैद-बिन-

हारिसा (रज़ि॰) ने उस समय तक मुस्लिम सेना का नेतृत्व किया जब तक वे ज़िन्दा रहे। वे पूरे जोश से लड़े और शहीद हो गए।

उनके बाद हज़रत जाफ़र तैयार (रज़ि॰) ने कमान संभाली। युद्ध की तीव्रता में समय के साथ-साथ और बढ़ोत्तरी होती गई। जब युद्ध और तीव्र हो उठा तो हज़रत जाफ़र (रज़ि॰) घोड़े से कूद पड़े और प्यादा सेना के साथ युद्ध करने लगे। जाफ़र (रज़ि॰) की जाँबाज़ी ने मुसलमानों में एक नई जान फूँक दी। लेकिन फिर वे भी शहीद हो गए। उनके शरीर पर 90 से अधिक घाव थे (हदीस : बुख़ारी)। अब मुसलमानों का झंडा हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-रवाहा (रज़ि॰) ने उठाया और अन्ततः उनको वह चीज़ मिल गई जो उनको मूतह खींच लाई थी। वे भी शहीद हो गए।

अब हज़रत साबित-बिन-अरक़म (रज़ि॰) ने झंडा अपने हाथ में ले लिया। उन्होंने मुसलमानों से कहा कि वे अपना सिपहसालार चुन लें। लोगों ने उन्हीं का नाम पेश किया, लेकिन साबित-बिन-अरक़म (रज़ि॰) ने मना कर दिया। उसके बाद यह दायित्व हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) को सौंपा गया। उन्होंने मुसलमानों का नेतृत्व सफलतापूर्वक किया जब तक कि उस दिन लड़ाई ख़त्म न हो गई।

उस समय जबकि मूतह में ज़बरदस्त जंग चल रही थी, नबी (सल्ल॰) ने मुसलमानों को ख़बर दी। आप (सल्ल॰) ने कहा : "ज़ैद (रज़ि॰) ने झंडा उठाया और शहीद हुए। फिर जाफ़र (रज़ि॰) ने अलम (झंडा) उठाया और वे भी शहीद हुए और फिर अलम को अब्दुल्लाह-बिन-रवाहा (रज़ि॰) ने उठाया और वे भी शहीद हुए।" आप (सल्ल॰) की आँखों में आँसू थे। आप (सल्ल॰) ने कहा : "फिर झण्डे को अल्लाह की तलवारों में से एक तलवार ने उठाया और अल्लाह ने मुसलमानों को विजयी बनाया।" (हदीस : बुख़ारी-4262)

उस रात हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) ने, जो एक माहिर फ़ौजी कमान्डर थे, सोच-विचार किया तो पाया कि मुसलमानों और उनके विरोधियों के मध्य सैनिक बलों की संख्या 1 : 66 के अनुपात में थी। उनको यह आभास हुआ कि यदि युद्ध लम्बा खिंचा तो वहाँ मुसलमानों का जनसंहार ही होगा। लेकिन उनको इसका भी अनुमान था कि यदि मुसलमान स्थल से

वापस होते हैं तो रोमी उनका पीछा करेंगे। यह भी एक त्रासदी होगी। उन्होंने अपनी सफल रणनीति से मुस्लिम सेना को युद्ध क्षेत्र से हटा लिया। रात को अंधेरे में उन्होंने सेना का स्थान परिवर्तन इस प्रकार किया कि जो सैनानी आगे थे उनको पीछे करके पीछेवाले सैनानियों को आगे कर दिया। ऐसा करते समय बहुत शोर किया गया, जिससे शत्रु को यह आभास हुआ कि मुसलमानों को नई मदद आ गई है।

अगली सुबह मुसलमानों ने दुश्मन पर पूरी ताक़त से हमला किया। दुश्मन पहले ही समझ रहा था कि मुसलमानों के पास कुमुक (सैनिक टुकड़ी) आ गई है और वह थोड़ा भयभीत था। उनको जंग के मैदान में नए चेहरे भी दिख रहे थे। यह हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) द्वारा स्थान परिवर्तन के कारण था।

हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) ने मैदाने-जंग से मुसलमानों को धीरे-धीरे पीछे हटाना शुरू किया और सफलता के साथ बहुत कम नुक़सान में पूरी सेना को जंग के मैदान से हटा लिया। हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) की दूरदर्शी कर्मशैली सफल सिद्ध हुई और दुश्मन सेना ने मुस्लिम सेना का पीछा करने की हिम्मत नहीं की। उन्होंने सोचा कि रण-स्थल से पीछे हटने में मुसलमानों की कोई चाल है और पीछा करने पर उनके साथी घात में कहीं बैठे होंगे और उनपर अचानक हमला करेंगे।

उस युद्ध की उग्रता का अनुमान हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) के इस वाक्य से किया जा सकता है कि "मूतह के दिन मेरे हाथ से 9 तलवारें टूटी और मेरे हाथ में केवल यमनी तलवार बची।" (हदीस : बुख़ारी-4265)

जब मुस्लिम सेना मदीना वापस हुई तो बहुत-से मुसलमानों ने उन लोगों को बुरा-भला कहा। उन लोगों का मानना था कि यह सेना मूतह से भागकर आई है। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने लोगों को मना किया और फ़रमाया : "यह भगोड़े नहीं हैं। ये वे लोग हैं जो दोबारा जंग में उतरने के लिए पलटे हैं।

कुछ और जंगी कार्रवाइयाँ

जुमादल-आख़िर सन् 8 हिजरी में नबी (सल्ल॰) ने एक सैनिक टुकड़ी

अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) के नेतृत्व में क़बीला बनू-कुज़ाआ की ओर भेजी। इस टुकड़ी में 300 लोग शामिल थे। आप (सल्ल॰) को पता चला था कि यह क़बीला मुसलमानों पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा है। अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) जंगी सूझ-बूझ में निपुण थे। वे रात को सफ़र करते और दिन में पड़ाव करते हुए केवल दस दिनों की छोटी-सी अवधि में ज़ातुस्सलासिल पहुँच गए। जब उन्होंने देखा कि शत्रु की फ़ौज बहुत बड़ी है तो उन्होंने नबी (सल्ल॰) से और अधिक सेना भेजने का आग्रह किया। आप (सल्ल॰) ने तुरन्त 200 फ़ौजियों का एक दस्ता उनकी सहायता के लिए भेज दिया और सैनिकों के आते ही हज़रत अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) ने दुश्मन पर हमला कर दिया। शत्रु बिना मुक़ाबला किए ही सिर पर पैर रखकर भाग खड़ा हुआ।

इसके अलावा आप (सल्ल॰) ने तीन और फ़ौजी दस्ते सन् 8 हिजरी में भेजे। इन दस्तों का विवरण कुछ इस तरह है—

(1) 300 मुसलमानों का एक दस्ता अबू-उबैदा (रज़ि॰) के नेतृत्व में रजब सन् 8 हिजरी में क़बीला जुहैना की ओर भेजा। कोई जंग नहीं हुई।

(2) 10 मुसलमानों का एक दस्ता अबू-क़तादा (रज़ि॰) के नेतृत्व में शाबान सन् 8 हिजरी में ग़तफ़ान क़बीले की ओर भेजा। मुसलमान इसमें विजयी रहे।

(3) 8 मुसलमानों का एक और दस्ता हज़रत अबू-क़तादा (रज़ि॰) के नेतृत्व में इदम घाटी की ओर रमज़ान सन् 8 हिजरी में भेजा गया।

विचारणीय बातें

(1) मूतह की जंग तो केवल एक आरम्भिक जंग थी। ज़ल्द ही मुसलमानों को वैश्विक शक्तियों से लम्बा मोर्चा लेना था। यद्यपि मुसलमान सफल नहीं हुए, लेकिन रोमी मुसलमानों के साहस और बहादुरी को मान गए। उनको विश्वास नहीं हो रहा था कि केवल तीन हज़ार सैनिक जिनके पास हथियार और रसद दोनों की कमी थी वे किस तरह दो लाख प्रशिक्षित सैनिकों से लोहा ले सकते हैं।

(2) हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) की जंगी सूझ-बूझ और उनकी बहादुरी के कारण उनको अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने 'सैफ़ुल्लाह' (अल्लाह की

तलवार) की उपाधि दी। इसमें कोई सन्देह भी नहीं कि वे इस उपाधि के लिए सबसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति थे। हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) और हज़रत उमर (रज़ि०) की ख़िलाफ़त (शासन-काल) में उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि वे इसके हक़दार थे।

(3) नबी (सल्ल०) ने हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि०) के निर्णय की सराहना की। इससे समझा जा सकता है कि **प्रतिकूल स्थिति में विवेकपूर्ण रहना भावुक उग्रता से सदा अच्छा स्वभाव** है। रणनीति के साथ पीछे हटने का जो लाभ भविष्य में मुसलमानों को मिला, वह इससे कहीं बेहतर था जो अपरिपक्व रूप में बहादुरी के प्रदर्शन से होता।

3:12 विनम्र विजेता

हुदैबिया की सन्धि के बाद से ही क़ुरैश एक विचित्र असमंजस की स्थिति का शिकार थे। सन्धि पर हस्ताक्षर करते समय उसकी शर्तों को न केवल वे लोग, बल्कि स्वयं मुसलमान भी क़ुरैश की बड़ी सफलता समझ रहे थे। मुसलमानों को लग रहा था कि क़ुरैश अपनी शर्तें मुसलमानों पर थोपने में सफल हो गए थे। केवल नबी (सल्ल०) की दिव्यदर्शिता ही इस सन्धि के वास्तविक परिणाम को स्पष्टतः समझ रही थी।

केवल दो साल की छोटी-सी अवधि में यह सच्चाई खुलकर सामने आ गई कि यह सन्धि पूरी तरह मुसलमानों के पक्ष में थी। इस्लाम का सत्य-सन्देश न केवल अरब के कोने-कोने तक, बल्कि उसकी सीमाओं के पार भी पहुँचने लगा। हुदैबिया की सन्धि के समय छोटी-सी इस्लामी हुकूमत अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए संघर्ष कर रही थी। लेकिन केवल दो वर्षों में ही न केवल उसके समर्थक पूरे अरब महाद्वीप में मौजूद थे, बल्कि हर समय अराजकता पर उतारू बद्दू क़बीले भी नियन्त्रण में आ गए थे। मदीना अरब का एक महत्वपूर्ण आर्थिक एवं व्यापारिक केन्द्र भी बनता जा रहा था।

उस समय जब मुसलमानों का आर्थिक, धार्मिक एवं सामरिक अस्तित्व बड़ी तेज़ी से बढ़ता जा रहा था, मक्का और क़ुरैश के साथ मामला इसके बिलकुल विपरीत हो रहा था। क़ुरआन की भविष्यवाणी सामने आ रही थी—

> "वास्तविक बात यह है कि इन लोगों को और उनके बाप-दादा को हम ज़िन्दगी का सामान देते चले गए, यहाँ तक कि उनको दिन लग गए। मगर क्या उन्हें नज़र नहीं आता कि हम धरती को विभिन्न दिशाओं से घटाते-चले आ रहे हैं? फिर क्या ये प्रभावी हो जाएँगे?" (क़ुरआन, सूरा-21 अंबिया, आयत-44)

मुसलमानों की सफलता को देखकर क़ुरैश के सरदारों के सीनों पर साँप

लौट रहे थे। अन्ततः उनकी बेचैनी और निराशा को एक मार्ग सूझा। बनू-बक्र और बनू-ख़ुज़ाआ लम्बे समय से एक-दूसरे के ख़िलाफ़ लड़ते-झगड़ते आ रहे थे। हुदैबिया की सन्धि के बाद बनू-बक्र ने क़ुरैश से और बनू-ख़ुज़ाआ ने मुसलमानों से सन्धि कर ली।

हुदैबिया की सन्धि को अनदेखी करते हुए बनू-बक्र ने बिना किसी कारण के बनू-ख़ुज़ाआ पर हमला कर दिया। क़ुरैश ने इस हमले में बनू-बक्र का यौद्धाओं एवं हथियारों से सहयोग किया। यह हुदैबिया की सन्धि की खुली अवहेलना थी। क़ुरैश इस हद तक गिर गए कि जब बनू-ख़ुज़ाआ ने बैतुल्लाह (काबा परिसर) में शरण चाही तो वहाँ भी उनपर हमला कर दिया।

बनू-ख़ुज़ाआ ने नबी (सल्ल॰) से गुहार लगाई और सहायता माँगी। आप (सल्ल॰) ने उनका आग्रह सुनने के बाद पूरी छान-बीन की। जब आप (सल्ल॰) को उनकी सच्चाई का पूरा यक़ीन हो गया तो आप (सल्ल॰) ने क़ुरैश को संदेश लिखा और उनके सामने निम्नांकित चीज़ों में से एक का चुनाव करने को कहा—

(1) बनू-ख़ुज़ाआ के उन लोगों को उनके ख़ून का बदला दिया जाए जो इस हमले में मारे गए हैं।

(2) क़ुरैश बनू-बक्र से अपनी सन्धि तोड़ लें।

(3) हुदैबिया की सन्धि को ख़त्म करने का एलान कर दें।

क़ुरैश ने अपने पिछले घमंड से भरे व्यवहार की भांति पहली दोनों शर्तों को मानने से इनकार कर दिया और तीसरी शर्त के लिए हाँ कर दी।

लेकिन जब उन्हें होश आया तो उन्होंने अबू-सुफ़ियान को मदीना भेजा, ताकि दोबारा सन्धि क़ायम करें। लेकिन उस समय भी वे पहली दो शर्तों को मानने से इनकार ही करते रहे।

मदीना आने के बाद अबू-सुफ़ियान को पहला बड़ा झटका उस समय लगा जब वह अपनी बेटी उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) के घर गया। उन्होंने उसको नबी (सल्ल॰) के बिस्तर पर बैठने से रोक दिया। उसकी अपनी बेटी का मानना था कि वह उस बिस्तर पर बैठने के योग्य नहीं है।

उसके बाद उसने कुछ जान-पहचानवालों द्वारा नबी (सल्ल॰) से बात-चीत करने की कोशिश की। वह पहले हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰), फिर हज़रत उमर (रज़ि॰), फिर हज़रत उसमान (रज़ि॰) और हज़रत अली (रज़ि॰) के पास गया और आप (सल्ल॰) से सिफ़ारिश करने का आग्रह किया। लेकिन किसी ने भी उसका समर्थन नहीं किया। इसी उलझन में वह मदीना के बाज़ार में खड़ा हुआ और अपने आप यह एलान किया कि हुदैबिया की सन्धि दोबारा लागू समझी जाए और फिर वह मक्का वापस चला गया।

मक्का के सरदारों को जब पता चला कि मदीना में अबू-सुफ़ियान के साथ क्या हुआ तो उनको साफ़ पता लग गया कि अबू-सुफ़ियान असफल वापस आया है।

अबू-सुफ़ियान की मदीना से वापसी के बाद नबी (सल्ल॰) ने यह घोषणा करा दी कि कूच करने की तैयारी की जाए। आप (सल्ल॰) ने उस समय लोगों को यह नहीं बताया कि उन्हें जाना कहाँ है। लेकिन लोगों को अनुमान हो गया कि लक्ष्य क्या है?

उस नाज़ुक घड़ी में हातिब-बिन-अबी-बल्तआ (रज़ि॰) से जो कि एक बदरी सहाबी थे, एक ख़तरनाक ग़लती हो गई। उन्होंने अकेले हिजरत की थी और उनका परिवार अभी तक मक्का में था। उनके परिवारवालों को किसी क़बीलेवालों की मदद हासिल नहीं थी। उनको लगा कि यदि वे मक्कावालों को उस ख़तरे के बारे में बता दें तो मक्कावाले उनके परिवार को नुक़सान नहीं पहुँचाएँगे। इसी कारण उन्होंने एक औरत को मक्का की ओर भेजा। उसके साथ एक पत्र था, जिसमें उन्होंने मुसलमानों के हमले की ख़बर दी थी।

नबी (सल्ल॰) को सर्वव्यापी अल्लाह की ओर से हज़रत हातिब-बिन-अबी-बल्तआ (रज़ि॰) की इस ग़लती की सूचना मिल गई। आप (सल्ल॰) ने तुरन्त हज़रत अली (रज़ि॰), हज़रत ज़ुबैर (रज़ि॰) और हज़रत मिक़दाद (रज़ि॰) को उस औरत को गिरफ़्तार करने के लिए भेजा और उसको उन्होंने ठीक उसी जगह गिरफ़्तार किया जहाँ आप (सल्ल॰) ने उनको बताया था। बहुत ज़्यादा

कोशिशों और डराने-धमकाने के बाद उस औरत ने उन लोगों के हवाले वह ख़त किया जो हज़रत हातिब (रज़ि॰) ने मक्का के सरदारों के लिए लिखा था। जब ये लोग उसके साथ मदीना वापस आए तो हज़रत हातिब (रज़ि॰) को नबी (सल्ल॰) ने बुलाया और उनसे इस सम्बन्ध में पूछा। हातिब (रज़ि॰) ने अपनी ग़लती स्वीकार कर ली और उसका कारण आप (सल्ल॰) को बताया। नबी (सल्ल॰) ने उनको माफ़ कर दिया।

10 रमज़ानुल-मुबारक सन् 8 हिजरी को नबी (सल्ल॰) के नेतृत्व में दस हज़ार मुसलमानों का लश्कर मक्का की ओर रवाना हुआ। आप (सल्ल॰) ने एक अजनबी रास्ते को चुना, ताकि मुस्लिम सेना की गतिविधियाँ गुप्त रहें। नबी (सल्ल॰) रास्ते भर दुआ करते रहे : "ऐ अल्लाह! उनकी देखने और सुनने की क्षमता छीन ले, ताकि वे हमें उस समय तक न देख पाएँ जब तक कि हम उनको अचानक जा पकड़ें।"

मक्का के रास्ते में नबी (सल्ल॰) को आप (सल्ल॰) के चचा अब्बास (रज़ि॰) मिले जो मक्का से हिजरत क़रके जा रहे थे। उनके साथ उनके परिवार के लोग और आप (सल्ल॰) के दो चचेरे भाई भी थे। उन्होंने वहीं कलिमा पढ़ा और मक्का के लिए वापस आप (सल्ल॰) के साथ हो लिए।

क़ुरैश को मुसलमानों के इस लश्कर का पता उस समय चला जब वह उनके सिर पर पहुँच गया। क़ुरैश के सरदारों ने अचानक मुसलमानों का कैम्प मर्र-अज़्ज़हरान की घाटी में लगा देखा जो मक्का से केवल कुछ घंटों की दूरी पर था।

अब वह समय आ गया था जब मुसलमानों की सेना के आने की ख़बर शत्रु को दी जानी थी। नबी (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि प्रत्येक फ़ौजी खाना पकाने की आग अलग जलाए। इसकी वजह से मुस्लिम फ़ौजियों का यह कैम्प रात के अंधेरे में बहुत दूर से भी नज़र आ रहा था। आप (सल्ल॰) की कार्य-शैली बिलकुल स्पष्ट थी। क़ुरैश को मुस्लिम सेना के आने और उनके संख्या-बल के बारे में अब अन्दाज़ा हो जाना चाहिए था। नबी (सल्ल॰) चाहते थे कि मक्कावाले बिना युद्ध के ही हथियार डाल दें।

अबू-सुफ़ियान क़ुरैश के दूसरे दो सरदारों, हकीम-बिन-हिज़ाम और

बुदैल-बिन-वरक़ा के साथ मक्का से बाहर आया, ताकि परिस्थितियों का संज्ञान ले। उन लोगों को अत्यधिक भय और आतंक का एहसास हुआ जब उन्होंने इतनी बड़ी सेना को अपने सिर पर पाया। आश्चर्यचकित एवं भयभीत ये लोग मुसलमानों के कैम्प के पास पहुँचे, ताकि और अधिक जानकारी ले सकें। कैम्प के पास आकर वे यह मालूम करना चाहते थे कि आख़िर यह फौज किसकी है कि अबू-सुफ़ियान की आवाज़ अंधेरे में हज़रत अब्बास (रज़ि॰) ने पहचान ली। अब्बास (रज़ि॰) ने सही अवसर मानते हुए अबू-सुफ़ियान से कहा कि नबी (सल्ल॰) के पास चलो और मक्कावालों के लिए अमान माँग लो। नबी (सल्ल॰) ने पूरे सम्मान के साथ उनका स्वागत किया और पूँछा : "कहो अबू-सुफ़ियान! क्या तुमने अब तक यह स्वीकार नहीं किया कि ईश्वर एक ही है।"

अबू-सुफ़ियान ने जवाब दिया : "यदि कोई और ईश्वर होता तो हमारी सहायता ज़रूर करता।"

नबी (सल्ल॰) ने हज़रत अब्बास (रज़ि॰) से कहा कि अबू-सुफ़ियान को यहीं रहने दें, ताकि वह मुसलमानों को क़रीब से देख सके और उनकी ताक़त का अनुमान लगा सके। अगली सुबह जब अबू-सुफ़ियान की नबी (सल्ल॰) के सामने पेशी हुई तो उन्होंने इस्लाम क़बूल कर लिया।

हज़रत अब्बास (रज़ि॰) ने सिफ़ारिश की कि अबू-सुफ़ियान को कुछ विशेष रिआयतें दी जाएँ। आप (सल्ल॰) ने, जो करुणा और दया के साक्षात रूप थे, कहा—

"जो कोई भी अबू-सुफ़ियान (रज़ि॰) के घर में दाख़िल हो जाएगा उसको अमान (सुरक्षा) मिल जाएगी। जो कोई अपने घर में बन्द रहे, उसको अमान है और जो कोई बैतुल्लाह की सीमा के अन्दर है उसके लिए भी अमान है।"

इसके पश्चात् नबी (सल्ल॰) ने अब्बास (रज़ि॰) से कहा कि वे अबू-सुफ़ियान (रज़ि॰) के साथ पहाड़ी पर जाएँ और दिन में मुस्लिम फ़ौज को आगे बढ़ते हुए देखें। अबू-सुफ़ियान (रज़ि॰) बहुत पराभूत होकर इस दृश्य को देख रहे थे। वे बार-बार विभिन्न क़बीलों की पहचान के बारे में पूछते जो थोड़ी ही

दूरी पर धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे। जब नबी (सल्ल॰) अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ आगे बढ़े तो अबू-सुफ़ियान (रज़ि॰) ने पूछा कि ये कौन लोग हैं? तो हज़रत अब्बास (रज़ि॰) ने कहा कि ये नबी (सल्ल॰) हैं और मुहाजिरीन और अनसार उनके साथ हैं।

अबू-सुफ़ियान (रज़ि॰) ने कहा : "कोई इस फ़ौज को पराजित नहीं कर सकता। तुम्हारे भतीजे की हुकूमत बहुत मज़बूत हो गई है।"

अब्बास (रज़ि॰) ने कहा : "यह नुबूवत (पैग़म्बरी) है", तो अबू-सुफ़ियान ने कहा : "मैं स्वीकार करता हूँ।"

मुस्लिम सेना बिना किसी युद्ध के मक्का में दाख़िल हो रही थी; उनकी ख़ुशी का कोई ठिकाना नहीं था। जोश में साद-बिन-उबादा (रज़ि॰) ने जो अनसार के दस्ते का नेतृत्व कर रहे थे, कहा : "आज बदले का दिन है। आज काबा में हत्या की अनुमति है।"

जब नबी (सल्ल॰) को इसकी सूचना मिली तो आप (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि "परचम (झंडा) साद-बिन-उबादा (रज़ि॰) से लेकर उनके बेटे क़ैस (रज़ि॰) को दे दिया जाए।" और फिर आप (सल्ल॰) ने कहा : "आज काबा के सम्मान का दिन है। आज काबा की प्रतिष्ठा पुनः स्थापित होगी। आज करुणा, दया और क्षमा का दिन है।"

अबू-सुफ़ियान (रज़ि॰) उसी समय मक्का शहर के अन्दर आए और मक्का के भयभीत एवं पराजित लोगों को नबी (सल्ल॰) की ओर से अमन का परवाना दिए जाने की सूचना दी। यद्यपि उस समय मक्का के अधिकांश लोगों ने मुसलमानों से मोर्चा लेने को व्यर्थ समझा, लेकिन कुछ लोग, जिनमें अबू-जहल का बेटा इकरिमा, सुहैल-बिन-अम्र, और सफ़वान-बिन-उमैया जैसे जोशीले सरदार थे, उन्होंने सोचा कि एक छोटी-सी फ़ौज इकट्ठा करके मक्का से बाहर पहाड़ियों के पास मुसलमानों को रोकने की कोशिश की जाए। उन लोगों ने दो मुसलमानों को जो किसी कारणवश सेना से बिछड़ गए थे, शहीद भी कर दिया। हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) जो अब तक इस्लाम का विरोध करनेवाले इस्लाम-दुश्मनों की रक्षा में आगे-आगे रहते थे और अब

मुसलमानों के एक दस्ते का नेतृत्व कर रहे थे, उन्होंने उन विरोधी इस्लाम-दुश्मनों को जा दबोचा। थोड़ी देर चली इस लड़ाई के बाद ये दुश्मन अपनी जान बचाकर भाग खड़े हुए।

नबी (सल्ल॰) ने मुस्लिम सेना को इस तरह बाँटा था कि मुस्लिम सेना चारों दिशाओं से एक साथ मक्का में दाख़िल हो। मक्का में प्रवेश करते समय मुसलमान ऊँचे स्वर में नबी (सल्ल॰) की ओर से आम माफ़ी का ऐलान कर रहे थे। इसका अपेक्षित परिणाम सामने आने में देर नहीं लगी और नबी (सल्ल॰) अपनी कोशिश में पूरी तरह सफल रहे कि काबा और हरम में किसी तरह की लड़ाई न हो और उसके सम्मान को चोट न पहुँचे।

क़ुरैश भयभीत और हताश थे। उनकी पुरानी विरोधी कार्रवाइयाँ उन्हें कचोके लगा रही थीं। एक-एक करके वे उन अत्याचारों को याद कर रहे थे जो मुसलमानों पर उन्होंने पिछले दो दशकों में ढ़ाए थे। न केवल उन्होंने नबी (सल्ल॰) की पैग़म्बरी का इनकार किया था और उनका मज़ाक़ उड़ाया था, बल्कि जब वे मक्का में थे तो उनके सहाबियों पर ज़ुल्म-व-सितम की इन्तिहा कर दी थी। अब, जब नबी (सल्ल॰) ने उन्हें बुरी तरह पराजित कर दिया था, वे अपने भविष्य के बारे में चिंतित थे। वे स्वयं अपने लिए निकृष्ट परिणाम की आशा कर रहे थे।

इसकी तुलना में मुसलमान जोश से भरे हुए थे। आज वे लोग जिनको उनके घरों से निकाल बाहर किया गया था, उनकी धन-सम्पत्ति को ज़बरदस्ती उनसे छीन लिया गया था, विजयी के रूप में वापस आ रहे थे। वे अनसार जिन्होंने बिना किसी लालच के उनकी मदद की, उनका साथ दिया, उन मुहाजिरीन को न केवल अपने यहाँ बसाया, बल्कि उनको पलकों पर बिठाया और उनकी ख़ातिर स्वयं भी विरोध और परेशानियों का निशाना बने, वे भी मक्का में विजयी के रूप में दाख़िल हो रहे थे।

इस अवसर पर नबी (सल्ल॰) का क्या हाल था जो एक विजयी सेनापति के रूप में मक्का में दाख़िल हो रहे थे? इतिहास ने इससे पहले कभी ऐसी विजयी सेना नहीं देखी होगी और न ऐसा सेनापति! आप (सल्ल॰) पूर्ण रूप से विनम्रता से भरे हुए थे। अभिमान, जो ऐसे अवसरों पर दुनिया के बादशाहों

की विशिष्ट पहचान होती है, आप (सल्ल॰) से मीलों दूर था। आप (सल्ल॰) को अच्छी तरह मालूम था कि यह महान विजय केवल उस ईश्वरीय मदद पर निर्भर थी जो ईश्वर ने हर क़दम पर मुसलमानों की, की थी। शुक्र की भावनाओं से ओत-प्रोत आप (सल्ल॰) का सिर इतना झुका हुआ था कि आप (सल्ल॰) की मुबारक दाढ़ी के बाल ऊँट की पीठ से लगे जा रहे थे। आप (सल्ल॰) उस समय सूरा फ़तह का पाठ कर रहे थे जो हुदैबिया की सन्धि के तुरन्त बाद अवतरित हुई थी। क़ुरआन का एलान है—

"(ऐ नबी!) यक़ीनन हमने तुमको खुली जीत दे दी।"

(क़ुरआन, सूरा-48 फ़तह, आयत-1)

यदि एक ओर यह धार्मिक गुरु की कामयाबी का अन्दाज़ था तो दूसरी ओर आप (सल्ल॰) सामाजिक समानता का भी नमूना पेश कर रहे थे। क़ुरैश यह देखकर आश्चर्यचकित थे कि आप (सल्ल॰) के आज़ाद किए गए ग़ुलाम हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) के कम उम्र बेटे उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) आप (सल्ल॰) के पीछे बैठे थे। आप (सल्ल॰) का अन्दाज़ इनसानों की बराबरी का स्पष्ट एलान कर रहा था।

मक्का में प्रवेश के बाद बिना कोई देर किए नबी (सल्ल॰) काबा पहुँचे। काबा के निकट एक छोलदारी नबी (सल्ल॰) के लिए लगा दी गई थी। उसी समय आप (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि काबा को तमाम बुतों से पाक कर दिया जाए। आप (सल्ल॰) ने सभी मूर्तियों सहित चित्रों को भी वहाँ से हटाने का आदेश दिया। आप (सल्ल॰) ने स्वयं भी उन बुतों को हटाने में अपने साथियों की मदद की। आप (सल्ल॰) के हाथ में एक कमान थी जिससे आप (सल्ल॰) बुतों को हटा रहे थे और ऊँचे स्वर में इस आयत का पाठ कर रहे थे—

"और उद्घोषणा कर दो कि 'सत्य आ गया और असत्य मिट गया, असत्य तो मिटने ही वाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-81)

"'कहो', सत्य आ गया और अब असत्य के लिए कुछ नहीं हो सकता।" (क़ुरआन, सूरा-34 सबा, आयत-49)

जब काबा और उसके आस-पास के इलाक़े को उन 360 बुतों से पाक कर दिया गया और तसवीरों (चित्रों) को मिटा दिया गया, उस समय नबी (सल्ल॰) हज़रत बिलाल हबशी (रज़ि॰) और उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) के साथ काबा में दाख़िल हुए। बिलाल (रज़ि॰) भी एक आज़ाद किए हुए ग़ुलाम थे। आप (सल्ल॰) के साथ उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) भी थे, जिनके पास काबा की चाबी रहती थी। आप (सल्ल॰) ने काबा के चारो कोनों में 'अल्लाहु अकबर' कहा और नमाज़ अदा की। उसके बाद आप (सल्ल॰) ने काबा की चाबी फिर से उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) को सौंप दी।

यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) के ख़ानदान में नसलों से काबा की देखरेख का उत्तरदायित्व था और काबा की चाबी उनके ख़ानदान के पास शताब्दियों से थी। पैग़म्बरी के एलान के बाद एक बार नबी (सल्ल॰) ने उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) से काबा का दरवाज़ा खोलने को कहा था। लेकिन उन्होंने इनकार कर दिया। उस समय आप (सल्ल॰) ने भविष्यवाणी की कि एक दिन उसमान (रज़ि॰) स्वयं इस चाबी को आप (सल्ल॰) के हवाले करेंगे। आप (सल्ल॰) की भविष्यवाणी अक्षरतः सत्य सिद्ध हुई। लेकिन उस समय आप (सल्ल॰) ने चाबी दोबारा उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) के हवाले करके उनके सम्मान को बरक़रार रखा। यह बात उल्लेखनीय है कि अब तक काबा की चाबी उसमान-बिन-तलहा (रज़ि॰) के ख़ानदान में ही चली आ रही है। नबी (सल्ल॰) ने काबा का तवाफ़ (परिक्रमा) किया। उस समय तक नमाज़ का वक़्त हो चुका था। आप (सल्ल॰) ने हज़रत बिलाल (रज़ि॰) को अज़ान देने का आदेश दिया। बिलाल (रज़ि॰) ख़ाना-काबा की छत पर चढ़े और एक बार फिर वहाँ मौजूद अनेकेश्वरवादियों ने एक ऐतिहासिक दृश्य देखा। उन्होंने देखा कि एक हबशी (काला) ग़ुलाम (आज़ाद किया हुआ) काबा की छत पर चढ़कर अज़ान दे रहा है। यह एक ऐसा सम्मान था जिसकी कोई सपने में भी कल्पना नहीं कर सकता था। मक्का का प्रत्येक सरदार इस सम्मान का इच्छुक था। यह इनाम था हज़रत बिलाल (रज़ि॰) के संकल्प, त्याग और बलिदान का जो उन्होंने पिछले दो दशकों में किया था और वास्तविक बदला तो सम्प्रभुत्व अल्लाह के पास ही है।

उसके बाद नबी (सल्ल०) ने नमाज़ पढ़ाई। नमाज़ के बाद आप (सल्ल०) ने क़ुरैश के महत्वपूर्ण लोगों को सम्बोधित किया। क़ुरैश डरे, सहमे और परेशान थे। उनको अपनी जान और माल पर काले बादल छाए हुए साफ़ दिखाई दे रहे थे। नबी (सल्ल०) ने उनको सम्बोधित करते हुए कहा—

"पूज्य-प्रभु तो केवल अल्लाह है। वह एक अकेला है और उसका कोई साझीदार नहीं। उसने अपना वादा सच कर दिखाया, अपने दास (मुहम्मद सल्ल०) की सहायता की और विरोधियों की सेना पराजित हुई। आज समस्त झूठे घमण्ड और बेकार रस्मों को मैं अपने पैरों तले रौंदता हूँ। तुम सब आदम की संतान हो और आदम (अलैहि०) मिट्टी से बनाए गए थे। सर्वशक्तिमान अल्लाह फ़रमाता है—

> "लोगो! हमने तुमको एक पुरुष और स्त्री से पैदा किया और फिर तुम्हारी क़ौमें और बिरादरियाँ बना दीं, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह की दृष्टि में तुममें सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुममें सबसे अधिक ईशपरायण है। निस्संदेह अल्लाह सर्वज्ञ और सर्वज्ञाता है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-49 हुजुरात, आयत-13)

आप (सल्ल०) का यह संक्षिप्त, मगर व्यापक सम्बोधन क़ुरैश के लिए सन्देश था कि वे अनेकेश्वरवाद और मूर्तिपूजा को त्याग दें और झूठे अभिमान और लड़ाई को भुला दें। जन्म, परिवार, क़ौम एवं क्षेत्र की वजह से कोई सम्मानित या तुच्छ नहीं होता।

नबी (सल्ल०) ने, जिनको क़ुरैश के डर और विवशता का पूरा अनुमान था, उनसे पूछा : "अब जबकि मुझे तुम पर पूरा अधिकार प्राप्त है, तुम्हें क्या लगता है, मैं तुम्हारे साथ क्या व्यवहार करूँगा।"

क़ुरैश जिनकी हिम्मतें टूट चुकी थीं, घमण्ड चकनाचूर हो चुका था, जिनके दिल गुनाहों के बोझ तले दबे जा रहे थे, उन्होंने नबी (सल्ल०) के आगे आत्म-समर्पण करते हुए कहा : "आप एक दयालु और प्रतिष्ठा-प्राप्त भाई हैं और एक दयालु एवं प्रतिष्ठित पिता के बेटे हैं।"

आप (सल्ल॰) ने कहा : "मैं तुम्हारे साथ वही व्यवहार करूँगा जो हज़रत यूसुफ़ (अलैहि॰) ने अपने भाइयों के साथ किया था। तुम सब स्वतन्त्र हो। अल्लाह भी तुमको माफ़ करे।"

यह आम माफ़ी क़ुरैश के लिए अविश्वसनीय थी। वे मानसिक तौर पर अपने गुनाहों के बदले किसी भी सज़ा के लिए तैयार थे। उनको मालूम था कि वे कठोर से कठोर सज़ा के पात्र हैं। लेकिन उनका सामना एक ऐसे व्यक्ति से था जो अल्लाह का नबी था और दुनिया के लिए सर्वथा कृपालु बनाकर भेजा गया था। अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता है—

> "ऐ नबी! हमने तुमको संसार वालों के लिए करुणामय बनाकर भेजा है।" (क़ुरआन, सूरा-21 अंबिया, आयत-107)

क़ुरैश पर मुसलमानों को पूरी तरह विजय प्राप्त हो चुकी थी। आप (सल्ल॰) ने उनके देह पर शक्ति का प्रयोग किए बिना ही जीत हासिल कर ली थी। यह आप (सल्ल॰) की तत्वदर्शितापूर्ण कार्यशैली और विवेक का परिणाम था। अब आप (सल्ल॰) ने दया-करुणा और उदारता दिखाते हुए उनके हृदयों को भी जीत लिया। लोग आप (सल्ल॰) से बैअत् (वचन) करने के लिए टूट पड़े। वे सब परवानों की तरह इस्लाम में प्रविष्ट हो रहे थे। क़ुरआन कहता है—

> "जब अल्लाह की सहायता आ जाए और विजय मिल जाए और (ऐ नबी!) तुम देख लो कि लोग फ़ौज-की-फ़ौज अल्लाह के दीन में दाख़िल हो रहे हैं, तो अपने रब की स्तुति एवं उसका महिमागान करो, और उससे क्षमा की दुआ माँगो, निस्सन्देह वह बड़ा माफ़ करनेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-110 नस्र, आयतें-1 से 3)

मक्का की विजय के बाद नबी (सल्ल॰) ने कई छोटे-छोटे दलों को भेजा, ताकि वे अनेक स्थानों पर स्थापित बुतों को हटा दें। उन दस्तों का विवरण कुछ इस तरह है—

(1) हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) को 25 रमज़ान सन् 8 हिजरी को 30 घोड़सवारों के साथ उज़्ज़ा का बुत हटाने के लिए नख़ला भेजा गया।

(2) अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) को सुवाअ् का बुत हटाने के लिए रबात की ओर भेजा गया।

(3) साद-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) को 20 घोड़सवारों के साथ मनात के बुत को हटाने के लिए भेजा गया।

(4) हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद (रज़ि॰) को 350 लोगों के साथ जज़ीमा की ओर भेजा गया। उन लोगों ने कहा कि वे तो पहले ही इस्लाम क़बूल कर चुके हैं। ख़ालिद (रज़ि॰) ने उनके हथियार ले लिए और उनको मक्का आने दिया। लेकिन उनमें से कुछ लोगों ने प्रतिरोध किया तो उन सबको मार डाला गया। नबी (सल्ल॰) ने इसपर सख़्त नाराज़गी जतलाई।

यद्यपि नबी (सल्ल॰) ने आम माफ़ी की उद्घोषणा कर दी थी, लेकिन दस लोग ऐसे थे जिनको इस आम माफ़ी से अलग रखा गया था। ये ऐसे लोग थे जिन्होंने मुसलमानों के ख़िलाफ़ जघन्नय अपराध किए थे। आप (सल्ल॰) ने उन्हें गिरफ़्तार करने का आदेश दिया। लेकिन उनमें से अधिकांश लोग ख़ुद ही आप (सल्ल॰) की सेवा में हाज़िर हो गए और आप (सल्ल॰) से माफ़ी चाही। आप (सल्ल॰) ने ऐसे लोगों को भी माफ़ कर दिया।

विचारणीय बातें

(1) बिना किसी रक्तपात और युद्ध के मक्का पर विजय नबी (सल्ल॰) की बेहतरीन योजनाओं एवं रणनीतियों का नतीजा था। इस रणनीति को हम निम्नलिखित बिन्दुओं में विभाजित कर सकते हैं—

(i) नबी (सल्ल॰) ने इस सफ़र को बिलकुल गुप्त रखा था। उसकी तैयारियों से क़ुरैश बिलकुल बेख़बर रहे। आम तौर पर आप (सल्ल॰) किसी मुहिम पर जाने से पहले अपने लक्ष्य को स्पष्ट कर दिया करते थे।

(ii) उस लश्कर के रास्ते और लश्कर की गतिविधियों को भी पूरी तरह गुप्त रखा गया था।

(iii) जब यह लश्कर क़ुरैश के सिर पर पहुँच गया तो प्रत्येक सैनिक ने अलग आग सुलगाई जिससे दुश्मन पर अपनी शक्ति प्रकट की जा

सके। इस विशिष्ट प्रबल शक्ति-प्रदर्शन का प्रभाव यह हुआ कि क़ुरैश यौद्धिक विरोध से रुके रहे।

(iv) क़ुरैश के सरदार अबू-सुफ़ियान को उनके अनुमान से कहीं अधिक सम्मान दिया गया। इस बात से उनका दिल इस्लाम के प्रति नर्म पड़ गया और अन्ततः वे इस्लाम के दायरे में दाख़िल हो गए। नबी (सल्ल॰) ने उनको अनुमति दी कि वे मुसलमानों की सेना को देखें। एक बार जब उन्होंने उस ज़बरदस्त सेना को क़रीब से देखा तो उन्हें पता चल गया कि विरोध करना बेकार है।

(v) मुस्लिम सेना मक्का के चारों ओर से एक साथ दाख़िल हुई। इसका उद्देश्य यह था कि क़ुरैश मुक़ाबला न कर सकें। यदि केवल एक ओर से दाख़िल होते तो संघर्ष की संभावना थी।

(vi) बार-बार ऊँचे स्वर में आम माफ़ी की घोषणा ने भी इसको निश्चित किया कि मक्का में लोग आतंकित न हो जाएँ और भगदड़ न मच जाए। ऐसा होता तो संघर्ष आवश्यंभावी हो जाता।

(vii) नबी (सल्ल॰) को इस बात का पूर्ण ज्ञान था कि ये सारी तैयारियाँ और योजनाएँ व्यर्थ चली जातीं यदि अल्लाह संप्रभुत्व की मदद आप (सल्ल॰) और सहाबियों के साथ न होती। आप (सल्ल॰) के आचार-व्यवहार से इसका लगातार प्रदर्शन हो रहा था।

(2) हज़रत साद-बिन-उबादा (रज़ि॰) के इस "आज बदले का दिन है" पर त्वरित प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए आप (सल्ल॰) ने मुस्लिम सैनिकों पर यह स्पष्ट कर दिया कि किसी तरह का बदला नहीं लिया जाएगा और न ही किसी को नुक़सान पहुँचाया जाएगा। काबा के सम्मान को हर हाल में शेष रखना था। हज़रत साद (रज़ि॰) से झंडा लेकर उनके बेटे के हवाले करने से आप (सल्ल॰) ने यह सुनिश्चित किया कि उनके सम्मान पर भी कोई आँच न आए।

(3) क़ुरैश की झूठी अकड़ और बड़ाई को सुधारवादी सेना ने पैरों तले रौंद दिया। उनको और अधिक धक्का उस समय लगा जब नबी (सल्ल॰)

ने एक स्वतन्त्र किए गए हबशी ग़ुलाम हज़रत बिलाल (रज़ि०) को आदेश दिया कि वे काबा पर चढ़कर अज़ान दें। लेकिन नबी (सल्ल०) के माफ़ करने के व्यवहार ने उनके मान-सम्मान को आघात पहुँचने से पूरी तरह बचा लिया।

3:13 हुनैन की शिक्षा

मक्का की विजय के बाद अरब के उन क़बीलों को, जो अब तक मुसलमानों और क़ुरैश के बीच चल रहे संघर्ष की समाप्ति और किसी एक पक्ष की स्पष्ट जीत की प्रतीक्षा कर रहे थे, साफ़ पता चल गया कि मुसलमान अरब द्वीप की सबसे बड़ी शक्ति हैं। लेकिन कुछ शक्तिशाली क़बीले, जिनमें हवाज़िन और सक़ीफ़ शामिल थे, वे अब भी सच्चाई मानने को तैयार न थे। इन दोनों क़बीलों ने अरब के इस्लाम-विरोधियों की ओर से मुसलमानों के इस बढ़ते हुए असर को समाप्त करने की कोशिश की।

इन दोनों क़बीलों ने मुसलमानों पर हमले की तैयारियाँ शुरू कर दीं। नबी (सल्ल॰) को इसकी ख़बर मिल गई और आप (सल्ल॰) ने त्वरित कार्रवाई करने का फ़ैसला किया। बारह हज़ार सैनिकों का लशकर नबी (सल्ल॰) के नेतृत्व में ताइफ़ की तरफ़ रवाना हुआ। इस फ़ौज में दो हज़ार के क़रीब ऐसे सैनिक थे जो अभी-अभी इस्लाम के दायरे में दाख़िल हुए थे। ये लोग उत्साह एवं जोश से भरे हुए थे और अपनी बहादुरी का प्रदर्शन दुनिया के सामने करना चाहते थे। लेकिन उनका ईमान अभी परिपक्व नहीं हुआ था और उनका उत्साह अब तक क़बायली और क्षेत्रीय मानसिकता के अधीन था। उनमें से कुछ जोशीले लोगों ने ऊँचे स्वर में कहा : "आज हमको कौन हरा सकता है।"

जब मुसलमानों की फ़ौज रवाना हुई तो क़ुरैश के नव-मुस्लिम लोग आगे-आगे थे। ये वे लोग थे जिनको अब तक नबी (सल्ल॰) का वह प्रशिक्षण नहीं हुआ था जो शुरू के सहाबियों को प्राप्त था। उन लोगों का धैर्य और संयम और समझ-बूझ अलग ही थी।

हवाज़िन के तीरन्दाज़ (धनुर्धर), जो अपने युद्ध कौशल के लिए पूरे अरब में मशहूर थे, हुनैन की घाटी के पास दोनों ओर से हमला करने के लिए छुपे हुए थे। जैस ही मुसलमानों की फ़ौज वहाँ पहुँची, उनपर दोनों ओर से तीर की बारिश होने लगी और सामने से हवाज़िन की सेनाओं ने उनपर

हमला कर दिया। मुसलमान इस हमले के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे। उनके पाँव उखड़ गए और वे तितर-बितर होकर पीछे हटने लगे।

इस परिस्थिति में जबकि मुस्लिम सेनाओं में भगदड़ मची हुई थी, नबी (सल्ल॰) एक चट्टान की भाँति अपनी जगह पर खड़े रहे। अनसार और मुहाजिरीन में से कुछ जाँबाज़ ही आप (सल्ल॰) के साथ थे। ये लोग अपनी जगह पर डटे रहे, यद्यपि हवाज़िन के सैनिकों का ख़तरा सामने था। आप (सल्ल॰) ऊँचे स्वर में कहते रहे! "मैं अल्लाह का रसूल हूँ। इसमें कोई झूठ नहीं।"

इसके बाद हज़रत अब्बास (रज़ि॰) को आप (सल्ल॰) ने हुक्म दिया कि वे उन लोगों को आवाज़ दें जिन्होंने हुदैबिया के बैअते-रिज़वान में संकल्प लिया था। इसका अच्छा नतीजा सामने आया। अनसार और मुहाजिरीन जो असंतुलित ढंग से पीछे हट रहे थे, रुक गए और मैदाने-जंग में वापस आने लगे। भगदड़ रुक गई और अब मुसलमानों ने आगे बढ़ना शुरू किया। उनमें एक नई जान आ गई। ऐसा लग रहा था कि नींद से जाग गए हों। थोड़ी ही देर में स्थिति बदल गई और हवाज़न पर ज़बरदस्त हमला हुआ और अपनी पूरी कोशिश के उपरांत भी हवाज़िन पराजय को नहीं टाल सके। उनके पाँव उखड़ गए और वे जंग के मैदान से भाग खड़े हुए। उन्होंने अपने मवेशियों और महिलाओं को भी वहीं छोड़ दिया। इब्ने-साद के मुताबिक़ (अल-तबक़ात अल-कुबरा) इस युद्ध में मुसलमानों को निम्नलिखित संपत्ति हाथ लगी—

(1) चौबीस हज़ार ऊँट
(2) चालीस हज़ार दुम्बे
(3) चार हज़ार औक़िया चाँदी
(4) छः हज़ार क़ैदी, जिनमें महिलाएँ और बच्चे शामिल थे।

भागती हुई हवाज़िन की सेना का मुसलमानों ने पीछा किया और औतास नामक जगह पर एक ज़बरदस्त जंग हुई। इस युद्ध में दुश्मन के बड़े-बड़े सरदार मारे गए। शेष लोग अपने क़िले में बन्द हो गए, जो ताइफ़ की पहाड़ियों के बीच था।

नबी (सल्ल॰) ने उनका घेराव किया। यह घेराव लगभग दस दिनों तक चला। (मेहदी रिज़्कुल्लाह, खण्ड-2, पृष्ठः 738)

जब घेराव का कोई नतीजा सामने आता नहीं दिखा तो नबी (सल्ल॰) ने अपने प्रसिद्ध यौद्धाओं से विचार-विमर्श किया। उन्होंने घेराव समाप्त करने का सुझाव दिया। आप (सल्ल॰) ने घेराव समाप्त किया और मक्का वापस आ गए। वापसी के सफ़र में कुछ सहाबियों (रज़ि॰) ने आप (सल्ल॰) से आग्रह किया कि आप (सल्ल॰) सक़ीफ़ के लिए बददुआ करें। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने उनके लिए दुआ की : "ऐ अल्लाह! सक़ीफ़ क़बीला के लोगों को हिदायत दे और उनको मेरे पास भेज दे।" यह दुआ शीघ्र ही क़बूल हुई और ताइफ़ के तमाम लोग इस्लाम की परिधि में आ गए।

मक्का को वापस होते समय नबी (सल्ल॰) ने जिइर्रना नामक स्थान पर विश्राम किया और वहीं ग़नीमत का माल बाँटा गया। यह वही ग़नीमत का माल था जो हुनैन और औतास की जंगों में मुसलमानों को मिला था। मक्का के लोगों को यह संदेश देने के लिए कि अब उनके लिए नबी (सल्ल॰) के दिल में कोई खटास नहीं है और यह कि मुसलमानों पर उनके द्वारा किए गए अत्याचार को पूरी तरह भुला दिया गया है, नबी (सल्ल॰) ने ग़नीमत के माल में उनको बड़ा हिस्सा दिया। उसकी तुलना में मुहाजिरीन और अनसार को बहुत कम संपत्ति मिली। ये वे लोग थे जो आप (सल्ल॰) के साथ हमेशा कंधे-से-कंधा मिलाकर खड़े हुए थे और उन्होंने हर मौक़े पर आप (सल्ल॰) का साथ दिया था।

स्वाभाविक तौर पर उनमें काना फूसी शुरू हो गई। लेकिन नबी (सल्ल॰) को जैसे ही इसका पता चला आप (सल्ल॰) ने अनसार को बुलाया और कहा : "क़ुरैश अब भी अज्ञानता के ज़्यादा क़रीब हैं। उनको बहुत-सी समस्याओं का सामना भी करना पड़ रहा है। मैं उनका दिल जीतना चाहता हूँ और उनके दिलों को नर्म करना चाहता हूँ। (उनको ग़नीमत का माल ज़्यादा दिए जाने का मक़सद इसके सिवा कुछ नहीं) क्या तुम इस बात से ख़ुश नहीं हो कि लोग दुनिया ले जाएँ और तुम अल्लाह के रसूल को अपने साथ ले जाओ।"

अनसार ने एक स्वर में कहा : "हाँ, हम इस बँटवारे के लिए तैयार हैं।" तब नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "यदि लोग एक आसान रास्ते से जा रहे हों और अनसार एक कठिन पहाड़ी रास्ते से चलने का फ़ैसला करें तो मैं अनसार

के साथ पहाड़ों के सफ़र की कठिनाइयाँ क़बूल करूँगा।" (हदीस : बुख़ारी-4332)

इस तरह यह खटास भी समाप्त हो गई। अनसार आसानी से नबी (सल्ल॰) के विचारों से सहमत हो गए। मन खटास की जगह ख़ुशी की भावनाओं से भर गया। ग़नीमत का माल बँट जाने के बाद हवाज़िन के लोग नबी (सल्ल॰) की सेवा में हाज़िर हुए और इस्लाम क़बूल करने का एलान किया। उन्होंने नबी (सल्ल॰) से आग्रह किया कि उनके घरवालों को और उनके माल को उन्हें वापस कर दिया जाए। आप (सल्ल॰) ने उनके परिजनों और माल में से किसी एक को चुनने के लिए कहा। वे माल छोड़ने के लिए तैयार हो गए।

नबी (सल्ल॰) ने ज़ुहर की नमाज़ के बाद मुसलमानों से उदार हृदयता का प्रदर्शन करते हुए उन क़ैदियों को रिहा करने की माँग की जो उनके क़ब्ज़े में थे। आपके इस आग्रह पर सभी ने क़ैदियों को रिहा कर दिया, यद्यपि माँग करने से पहले ही कुछ लोगों ने कुछ क़ैदियों को रिहा कर दिया था। इस प्रकार सभी 6000 क़ैदी रिहा कर दिए गए।

इसके बाद नबी (सल्ल॰) मक्का वापस आए, उमरा किया और मदीना के लिए रवाना हो गए। हज़रत अत्ताब-बिन-उसैद (रज़ि॰) को मक्का का गवर्नर और हज़रत मुआज़-बिन-जबल को इमाम नियुक्त किया गया।

सन् 8 हिजरी की कुछ अन्य महत्वपूर्ण घटनाएँ

इस साल नबी (सल्ल॰) की दो बेटियों—हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) और हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि॰) का देहान्त हो गया। हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) मदीना हिजरत करते समय ज़ख़्मी हो गई थीं, जब क़ुरैश के बदमाशों ने उनको ऊँट से गिरा दिया था। हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि॰) की शादी हज़रत उसमान (रज़ि॰) से रुक़ैया (रज़ि॰) के निधन के बाद की गई थी। हज़रत उसमान (रज़ि॰) को नबी (सल्ल॰) की दो बेटियों से शादी करने का सम्मान प्राप्त था। इसी सम्मान के कारण से उनको 'ज़ुन्नूरैन' (दो नूरवाले) की उपाधि मिली।

हज़रत मारिया क़िबतीया (रज़ि॰) से उसी साल नबी (सल्ल॰) के यहाँ एक बेटे इबराहीम (रज़ि॰) का जन्म हुआ।

विचारणीय बातें

(1) हुनैन की जंग और आरम्भ में हुए नुक़सानों से यह बात दोबारा स्पष्ट हो गई कि केवल संख्या-बल के कारण विजय प्राप्त नहीं होती। जंग में दुश्मनों पर विजय अल्लाह की सहायता से ही हासिल हो सकती है। उसकी मदद के बाद संख्या-बल और हथियारों की कमी विजय को नहीं रोक सकती। क़ुरआन स्पष्टतः कहता है—

"अल्लाह इससे पहले बहुत-से अवसरों पर तुम्हारी सहायता कर चुका है। अभी हुनैन की जंग के दिन (उसकी मदद की शान तुम देख चुके हो)। उस दिन तुम्हें अपनी संख्या-बल पर बड़ा गर्व था। किन्तु वह तुम्हारे कुछ काम न आया और धरती अपनी विशालता के बावजूद तुम पर तंग हो गई और तुम पीठ फेरकर भाग निकले।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-25)

एक और जगह कहा गया—

"अल्लाह तुम्हारी सहायता करने पर हो तो कोई शक्ति तुम पर प्रभावी होनेवाली नहीं, और वह तुम्हें छोड़ दे, तो उसके बाद कौन है जो तुम्हारी सहायता कर सकता हो? अतः जो सच्चे मोमिन हैं उनको अल्लाह ही पर भरोसा रखना चाहिए।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-160)

(2) ताइफ़ के क़बीलों के लिए दुआ से यह बात स्पष्ट है कि नबी (सल्ल॰) को मानवता से कितनी मुहब्बत थी और आप (सल्ल॰) लोगों को इस्लाम की ओर आकर्षित करने के लिए हर समय किस प्रकार प्रयास करते रहते थे। ये वही लोग थे जिन्होंने ताइफ़ के सफ़र में आप (सल्ल॰) के साथ सबसे बुरा बर्ताव किया था। उस समय भी आप (सल्ल॰) ने उनके लिए दुआ की थी और इस अवसर पर भी उनके लिए दुआ की। इतिहास साक्षी है कि आप (सल्ल॰) के इस माफ़ करने से काम लेने का ही परिणाम था कि ताइफ़ इस्लाम का एक महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया।

3:14 इस्लाम अपने शिखर पर

इसमें कोई सन्देह नहीं कि पूरा अरबद्वीप मुसलमानों और मक्का के अनेक इस्लाम-विरोधियों के आपसी विवाद ख़त्म होने का इन्तिज़ार कर रहा था। अरबवाले इस प्रतीक्षा में थे कि देखें आख़िर कौन विजयी होता है। अरब के अधिकांश लोगों को यह लग रहा था कि यह क़ुरैश का आन्तरिक संघर्ष है और जब तक यह संघर्ष मुसलमानों की विजय के साथ नहीं रुका, अरबद्वीप के अधिकांश क़बीलों ने उस समय तक उन दोनों में से किसी एक पक्ष के साथ सन्धि नहीं की। क़ुरैश और मुसलमानों की वर्षों से चली आ रही लड़ाई के बावजूद जहाँ धर्म की बात आती, अधिकांश अरब क़बीले मक्का के क़ुरैश को ही अपना मार्गदर्शक मानते। किन्तु मक्का पर मुसलमानों की स्पष्ट विजय का पता चलते ही अरब के अनेक क़बीले नबी (सल्ल॰) की सेवा में पहुँचकर इस्लाम क़बूल करने लगे। क़ुरआन इस वास्तविकता को इन शब्दों में बयान करता है—

> "जब अल्लाह की सहायता आ जाए और विजयी होने का सौभाग्य प्राप्त हो जाए और (ऐ नबी!) तुम देख लो कि लोग समूह के समूह अल्लाह के धर्म में दाख़िल हो रहे हैं तो अपने रब की स्तुति के साथ उसका महिमागान करो और उससे क्षमा की दुआ माँगो, निस्संदेह वह बड़ा माफ़ करनेवाला है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-110 नस्र, आयतें-1 से 3)

यह बात उल्लेखनीय है कि जब नबी (सल्ल॰) ज़ी-कादा सन् 6 हिजरी में उमरा की नीयत से निकले, उस समय आप (सल्ल॰) के साथ केवल 1400 लोग थे, लेकिन जब आप (सल्ल॰) दो साल से भी कम अवधि के बाद मक्का विजय के अवसर पर मदीना से चले तो आप (सल्ल॰) के साथ दस हज़ार मुसलमान थे। उसके बाद ज़िल-हिज्जा सन् 10 हिजरी में आप (सल्ल॰) के

साथ अरफ़ात के मैदान में एक लाख बीस हज़ार का ठाठें मारता हुआ मुसलमानों का समुद्र था।

9 हिजरी को वफ़द (दलों) का साल भी कहा जाता है। एक सावधानी पूर्ण अनुमान के अनुसार केवल उस साल अरब के विभिन्न भागों और विभिन्न क़बीलों से मदीना में आप (सल्ल०) की सेवा में उपस्थित होनेवाले जनसमूहों (दलों) की संख्या लगभग 60 थी। इनमें से अधिकांश तो इस्लाम क़बूल करने के लिए मदीना आते थे। मदीना में ये जनसमूह आम तौर पर कुछ दिन ठहरते, ताकि इस्लाम की मौलिक धारणाओं से परिचित हो सकें और इस्लाम की जीवन-शैली को प्रत्यक्ष रूप से जान सकें। यह सब नबी (सल्ल०) की प्रत्यक्ष निगरानी में होता। कभी-कभी जब ये दल वापस जाते तो आप (सल्ल०) उनके साथ कुछ सहाबियों को भेज देते जो न केवल उन लोगों को धर्म की शिक्षा देते, बल्कि उन क़बीलों में जाकर दूसरे लोगों को भी धर्म का प्रचार करते।

कुछ क़बीलों के जनसमूह इस्लाम क़बूल नहीं करते, लेकिन अपनी वफ़ादारी और अधीनता प्रकट करने के लिए आते। इस तरह अरब क़बीलों में से अधिकांश ने या तो इस्लाम स्वीकार कर लिया या फिर उन्होंने मुसलमानों से सन्धि कर ली।

किन्तु इसके बावजूद अब तक अरब में कुछ क़बीले ऐसे भी थे, जिन्होंने न केवल इस्लाम क़बूल नहीं किया, बल्कि वे मुसलमानों के ख़िलाफ़ भी थे। उन लोगों को अधीन करने के उद्देश्य से नबी (सल्ल०) ने 6 मुस्लिम फ़ौजी दस्ते मुहर्रम और रबीउस्सानी सन् 9 हिजरी के बीच भेजे। ये सभी दस्ते बिना किसी उल्लेखनीय संघर्ष के विजयी वापस लौटे।

अब इस्लाम की जड़ें अरब की भूमि में बहुत गहराई तक फैल चुकी थीं। लेकिन इसके उपरान्त भी ख़तरा अब भी शेष था। कुछ लोगों ने इस्लाम को केवल दिखावे के लिए क़बूल कर लिया था, ताकि इस्लाम के वर्चस्व का लाभ उठाया जा सके। वे मुसलमानों से मिलकर और इस्लाम क़बूल करके यह दिखाना चाहते थे कि उनके इस्लाम में दाख़िल होने से उस मज़हब को

शक्ति मिली है। ऐसे ही अवसरवादी लोगों की क़लई क़ुरआन इन शब्दों में खोलता है—

> "ये बद्दू लोग कहते हैं कि 'हम ईमान लाए।' उनसे कहो : तुम ईमान नहीं लाए, बल्कि यूँ कहो कि 'हम अधीन हो गए।' ईमान अभी तुम्हारे दिलों में प्रविष्ट नहीं हुआ है। यदि तुम अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञाकारी हो जाओ तो वह तुम्हारे कर्मों के प्रतिफल में कोई कमी न करेगा, निस्संदेह अल्लाह अत्यन्त क्षमावान और कृपालु है।" (क़ुरआन, सूरा-49 हुजुरात, आयत-14)

इसके अतिरिक्त बहुत-से ऐसे ख़तरनाक दुश्मन भी थे जिन्होंने इस्लाम केवल इसलिए क़बूल किया, ताकि उसको अन्दर से क्षति पहुँचा सकें। ये मुनाफ़िक़ीन (कपटाचारी) थे जो अब्दुल्लाह-बिन-उबई के नेतृत्व में हिजरत के बाद से अब तक सक्रिय थे। यद्यपि उनकी हवा बहुत हद तक उखड़ चुकी थी। लेकिन परिस्थितियाँ बदल जाने के बावजूद उनमें कोई बदलाव नहीं आया था। अरब की इस्लाम विरोधी शक्तियों की पराजय के बाद इन लोगों ने रोमियों को अपनी आशाओं का केन्द्र बना लिया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि रोमी, इस्लाम की बढ़ती हुई शक्ति से अत्यधिक चिन्तित थे। उन इस्लाम-विरोधियों ने रोमियों को अवसर उपलब्ध करा दिया जहाँ वे इस्लाम को नुक़सान पहुँचा सकें।

मदीना के मुनाफ़िक़ीन और रोमन साम्राज्य के बीच गुप्त सम्बन्ध स्थापित हो चुके थे। उन गुप्त सम्बन्धों को और मज़बूत करने के लिए मुनाफ़िक़ीन को एक केन्द्र की तलाश थी। जहाँ से वे इस काम को जारी रख सकें। इसी उद्देश्य से उन्होंने मदीना से कुछ दूरी पर एक मस्जिद बनाई। नबी (सल्ल॰) के सामने उन्होंने बहाना बनाया कि दूरी की वजह से मस्जिदे-नबवी में उनका आना बहुत ही मुश्किल था। इस मस्जिद की स्थापना को विश्वसनीय बनाने के लिए उन्होंने नबी (सल्ल॰) से निवेदन किया कि आप आकर इस मस्जिद में नमाज़ पढ़ाएँ। किन्तु आप (सल्ल॰) अपनी व्यस्तता के कारण यह नहीं कर पाए।

विचारणीय बातें

(1) हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) रिसालत (पैग़म्बरी) की अन्तिम कड़ी हैं। इसलिए यह ज़रूरी था कि आपको ऐसा सम्मान दिया जाए कि जिस सोच की आप दावत दे रहे हैं, उन्हीं विचारों की बुनियाद पर एक कल्याणकारी राज्य स्थापित किया जाए जो दुनिया के सामने एक नमूना बने ताकि आलोचकों को यह कहने का अवसर न मिल सके कि ईश्वरीय वाणी और इस्लामी शिक्षाओं के आधार पर एक नेक और अच्छे समाज का गठन और इस्लामी राज्य की स्थापना एक काल्पनिक चीज़ है और वास्तविक जीवन में ऐसा कर पाना सम्भव नहीं।

न केवल यह कि नबी (सल्ल॰) ने ऐसे नेक समाज का गठन किया और वैचारिक आधारों पर एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना की, बल्कि ऐसे प्राणन्योछावर करनेवालों का एक समूह तैयार कर दिया जो इस विचारधारा के लिए अपनी जान पर खेलने को तैयार थे। उन सहाबियों (रज़ि॰) ने आप (सल्ल॰) के बाद उस काम को जारी रखा। **इतिहास में ऐसा कोई दूसरा उदाहरण नहीं मिलता जहाँ किसी ने अध्यात्मिक एवं सांसारिक दोनों स्तरों पर एक ही समय में इतनी ज़बरदस्त कामयाबी हासिल की हो।**

(2) दूसरी बात जो मन में बिठाने की है वह यह कि नबी (सल्ल॰) को इस महान कार्य को पूरा करने के लिए कभी भी अनुकूल वातावरण नहीं मिला। बाहरी दुश्मनों की समाप्ति के बाद भी आन्तरिक शत्रु, इस्लाम और मुसलमानों के मूलोद्देश्य को हर समय चोट पहुँचाने को तैयार थे। मुनाफ़िक़ीन के षड्यन्त्र अन्तिम समय तक कम नहीं हुए।

नबी (सल्ल॰) की महानता इस बात में भी है कि आप (सल्ल॰) ने ऐसे तत्वों को कभी भी इसकी अनुमति नहीं दी कि वे आप (सल्ल॰) को आप (सल्ल॰) के मूल उद्देश्य से विचलित कर सकें। आप (सल्ल॰) की इस महान विशेषता में आप के माननेवालों के लिए एक बेमिसाल आदर्श एवं उदाहरण है।

3:15 तबूक का सफ़र

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि नबी (सल्ल॰) ने एक प्रभावशाली व्यवस्था कर रखी थी, जिसके द्वारा वे अपने शत्रुओं की गतिविधियों से सतर्क रह सकें। आप (सल्ल॰) को सूचना मिली कि सीरिया में रोम के शहंशाह ने एक भारी सेना इकट्ठी करनी शुरु की है जो मुसलमानों पर हमले की तैयारियाँ कर रही है। यह सूचना परेशान करनेवाली थी और समय और परिस्थितियाँ नबी (सल्ल॰) से त्वरित कार्रवाई की माँग कर रही थीं।

आप (सल्ल॰) ने यह घोषणा कर दी कि एक सेना सीरिया की सीमा पर जाएगी, ताकि सीमा पर ही दुश्मनों को रोक लिया जाए और उनको अरब की सीमा में दाख़िल न होने दिया जाए। मुसलमानों के लिए यह एक अत्यन्त कठिन समय था। इसके कई कारण थे। पहला यह कि अरबों को रोमन साम्राज्य की सैनिक शक्ति का पूरा ज्ञान था। रोमन सेना युद्ध-कौशल में निपुण थी। उनसे युद्ध अरब के किसी और क़बीले से जंग की तरह नहीं होगा। दूसरी बात यह कि उस सेना का सामना करने के लिए मुसलमानों को एक लम्बा और थका देनेवाला सफ़र करना था। तीसरी महत्वपूर्ण बात यह थी कि खजूर की फ़सल लगभग तैयार थी और उसके पकने के दिन निकट थे। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण था क्योंकि पिछले वर्ष फ़सल अच्छी नहीं हुई थी और अब इस फ़सल से लोगों ने बहुत सारी उम्मीदें बाँध रखी थीं। ये समस्त कारण पर्याप्त थे कि पाखण्डी और कमज़ोर ईमानवालों को इस मुश्किल सफ़र से रोक दें। मुनाफ़िक़ीन (पाखण्डी) तरह-तरह के बहाने लेकर आते, अपनी मजबूरी बताते और आप (सल्ल॰) उनको रुकने की अनुमति दे देते।

लेकिन वे लोग जो सच्चे मुसलमान थे, उन्होंने इसको धर्म की सेवा का एक और अवसर माना। हज़रत उसमान-बिन-अफ़्फ़ान (रज़ि॰), अब्दुर्रहमान-बिन-औफ (रज़ि॰), हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰), हज़रत उमर (रज़ि॰), हज़रत

अब्बास (रज़ि॰), हज़रत तलहा (रज़ि॰), साद-बिन-उबादा (रज़ि॰), मुहम्मद-बिन-मुस्लिमा (रज़ि॰) और आसिम-बिन-अदी (रज़ि॰) आदि ने इस सफ़र के लिए बड़ी-बड़ी राशि एवं सामग्री पेश कीं। ऐसे नेक और भले मोमिनों ने जिनके पास अधिक धन-सम्पत्ति नहीं थी, उन्होंने भी अपनी क्षमतानुसार बढ़-चढ़कर उसमें भाग लिया।

रजब 9 हिजरी तदानुसार 630 ई॰ को नबी (सल्ल॰) तीस हज़ार वफ़ादार सैनिकों के साथ मदीना से तबूक की ओर रवाना हुए। मालदार मुसलमानों की समस्त कोशिशों के बावजूद मुस्लिम फ़ौज में प्रयाप्त साधनों की ज़बरदस्त कमी थी। इसी वजह से उस सफ़र को तंगी का सफ़र भी कहा जाता है।

एक बहुत कठिन और थका देनेवाले सफ़र के बाद मुसलमानों की फ़ौज तबूक पहुँची। रोमी सेना अब तक मूता में मुसलमानों की बहादुरी को भूल नहीं पाई थी। केवल तीन हज़ार मुसलमानों ने दो लाख की रोमन सेना के छक्के छुड़ा दिए थे। अब जब उनको पता चला कि नबी (सल्ल॰) तीस हज़ार सेना के साथ खुद आए हैं तो वे सीरिया की सीमा में वापस चले गए। आप (सल्ल॰) ने उनका पीछा करने की कोशिश नहीं की। आप (सल्ल॰) का उद्देश्य तो पूरा हो चुका था।

आप (सल्ल॰) की इस साहसिक कार्रवाई ने अरब और अरब के बाहर यह संदेश दे दिया कि नया मुस्लिम राज्य न केवल अपनी रक्षा कर सकता है, बल्कि अपने तमाम दुश्मनों से लोहा लेने की सामर्थ्य भी रखता है। आप (सल्ल॰) तबूक में 20 दिनों तक ठहरे रहें और कई ईसाई क़बीलों से शान्ति-समझौता किया।

मदीना वापसी के मौक़े पर रास्ते में पाखण्डी मुस्लिमों (मुनाफ़िक़ीन) के मस्जिद बनाने की साज़िश के कारणों की सूचना अल्लाह तआला की वह्य के द्वारा मिली। आप (सल्ल॰) को सचेत किया गया कि यह मस्जिद मुसलमानों के ख़िलाफ़ षड्यंत्र तैयार करने के लिए बनाई गई है। वापसी के तुरन्त बाद आप (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि इस झूठी मस्जिद को ध्वस्त कर दिया जाए।

कुछ अन्य महत्वपूर्ण घटनाएँ

तबूक से मदीना वापस आने के कुछ ही दिनों के बाद ज़ी-कादा सन् 9 हिजरी में मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) का सरदार अब्दुल्लाह-बिन-उबई मर गया।

उस साल नबी (सल्ल॰) की ज़िन्दगी में भी कई महत्वपूर्ण घटनाएँ घटीं।

मक्का विजय और उसके बाद के शान्तिपूर्ण माहौल की वजह से मुसलमानों में आमतौर से ख़ुशहाली आ गई। लेकिन इस बदले हुए वातावरण से नबी (सल्ल॰) के परिजनों को कोई आर्थिक लाभ नहीं हुआ। नबी (सल्ल॰) की धर्म पत्नियाँ जो अब तक आप (सल्ल॰) के साथ तंगी की ज़िन्दगी ख़ुशी-ख़ुशी गुज़ारती आई थीं, अब अपनी परेशानियों से थोड़ी राहत चाहती थीं। जब उनकी ओर से बेहतर सहूलतों की माँग जारी रही तो आप (सल्ल॰) को बहुत दुख हुआ और आप (सल्ल॰) ने पूरे एक महीने तक अपनी तमाम पत्नियों से दूरी बनाए रखी। जल्द ही अल्लाह की ओर से इस विषय में चेतावनी आ गई—

> "ऐ नबी! अपनी पत्नियों से कहो : यदि तुम दुनिया और उसकी ज़ीनत (शोभा) चाहती हो तो आओ, मैं तुम्हें कुछ दे-दिलाकर भले तरीक़े से विदा कर दूँ और अगर तुम अल्लाह और उसके रसूल और आख़िरत की भलाई चाहती हो, तो जान लो कि तुम में से जो नेक काम करते हैं अल्लाह ने उनके लिए बड़ा प्रतिफल रखा है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयतें-28, 29)

स्वाभावतः आप (सल्ल॰) की धर्म पत्नियों ने अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) को ही चुना और अपनी माँगों को त्याग दिया।

उसी साल नबी (सल्ल॰) के बेटे इबराहीम के जन्म के कुछ महीनों बाद ही देहान्त हो गया। आप (सल्ल॰) स्वाभाविक तौर पर बहुत दुखी थे। आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

> "ऐ इबराहीम! यदि अल्लाह के आदेश सच नहीं होते और उसके वादों के पूरा होने का यक़ीन नहीं होता कि हम में से बाद में जानेवाले अन्ततः पहले जानेवालों से दोबारा मिलेंगे तो हम इससे

बहुत अधिक तुम्हारी मौत पर आँसू बहाते और मातम करते। हमारी आँखें आँसुओं से तर हैं और दिल ग़म से चूर हैं। लेकिन हमारे होंट चुप हैं। हम तो केवल वही बात कहेंगे जो अल्लाह को ख़ुश कर दे। इबराहीम! हम तुम्हारी मौत पर दुखी हैं।"

जिस दिन इबराहीम का देहान्त हुआ, उसी दिन सूर्यग्रहण लग गया। लोग कहने लगे कि आसमान और ज़मीन दोनों अल्लाह के रसूल के बेटे की मौत पर शोक मना रहे हैं। यह बात सुनने के बाद नबी (सल्ल॰) ने मुसलमानों को सम्बोधित करते हुए कहा—

"सूरज और चाँद अल्लाह की निशानियों में से दो निशानियाँ हैं। उनपर किसी के जन्म या मृत्यु की वजह से ग्रहण नहीं लगता। जब भी तुम सूरज और चाँद को ग्रहण लगता हुआ देखो तो जल्द-से-जल्द नमाज़ द्वारा अल्लाह संप्रभुत्व की याद में लग जाओ।"

(हदीस : बुख़ारी-1043)

विचारणीय बातें

(1) तबूक की जंग ने मुनाफ़िक़ों की उम्मीदों पर पानी फेर दिया। वह नवजात इस्लामी राज्य को नुक़सान पहुँचता देखना चाहते थे। लेकिन उल्टा हुआ। उनकी असलियत खुलकर सामने आ गई। मुनाफ़िक़ों की मस्जिद जिसको क़ुरआन मस्जिद-ए-ज़िरार (क्षति पहुँचाने वाली मस्जिद) कहता है, ध्वस्त कर दी गई। यह उनके लिए बहुत बड़ा धक्का था।

(2) यह बात यहाँ उल्लेखनीय है कि अरब पर मुसलमानों के वर्चस्व के बाद मदीना में ख़ुशहाली आई। लेकिन इस आम ख़ुशहाली का आपके व्यक्तिगत जीवन या आप (सल्ल॰) के घरवालों के जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। आप (सल्ल॰) और आप (सल्ल॰) के घरवाले अब भी अपनी पहलेवाली जीवन-शैली पर क़ायम रहे।

(3) आप (सल्ल॰) के कमसिन बच्चे की मौत के ही दिन सूर्यग्रहण पड़ा। कुछ लोगों ने इन दोनों घटनाओं को जोड़ना शुरू किया। लेकिन आप (सल्ल॰) ने इसे जैसे ही सुना, उन्होंने यह बात स्पष्ट कर दी कि आसमान

में तैरनेवाले सूरज, चाँद और सितारे अपनी निश्चित धूरि पर घूम रहे हैं और उनका हमारे सांसारिक जीवन से कोई लेना-देना नहीं है। इस प्रकार नबी (सल्ल॰) ने हमेशा-हमेशा के लिए इस अंधविश्वास की जड़ काट दी।

3:16 इस्लामी राज्य के अन्तर्गत प्रथम हज

ज़िल-हिज्जा 9 हिजरी में इस्लामी हुकूमत के अन्तर्गत पहला हज किया गया। उस समय तक हज के फ़र्ज़ (अनिवार्य कर्म) होने का आदेश अवतरित नहीं हुआ था। अल्लामा-इब्ने-क़य्यिम (रह॰) के अनुसार सन् 10 हिजरी में हज के फ़र्ज़ (अनिवार्य) होने का आदेश आया।

नबी (सल्ल॰) इस वर्ष हज पर नहीं गए। इसके मुख्य कारण यह थे—

1. हज फ़र्ज़ नहीं हुआ था।
2. मदीना के राज्य को स्थिरता प्रदान करने का महत्वपूर्ण काम हाथ में था।
3. अनेकेश्वरवादी भी इस साल हज में शामिल थे, जिन्होंने अपने ग़लत रीति-रिवाज को हज में मिला दिया था।

नबी (सल्ल॰) ने 300 मुसलमानों के एक क़ाफ़िले को हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के नेतृत्व में हज के लिए रवाना किया।

हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के मदीना रवाना होने के बाद सूरा-9 बराअ्त, जिसे सूरा तौबा भी कहते हैं, अवतरित हुई। इस सूरा में अनेकेश्वरवादियों के सम्बन्ध में स्पष्ट आदेश थे। आप (सल्ल॰) ने हज़रत अली (रज़ि॰) को हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के पास भेजा, ताकि वे मिना के आम जनसमूह के सामने इसका एलान कर सकें। हज़रत अली (रज़ि॰) को अरबों की प्रथा के अनुसार भेजा गया था। अरब में रिवाज था कि किसी भी महत्वपूर्ण सरकारी आदेश का एलान या तो सत्ताधारी स्वयं करेंगे या उनके ख़ूनी रिश्तेदार करेंगे। दूसरी स्थिति में उस आदेश को स्वीकार नहीं किया जाता।

जब हज़रत अली (रज़ि॰) हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के पास पहुँचे तो उन्होंने पूछा : "सरदार बनाकर भेजे गए हो या अनुयायी?" हज़रत अली

(रज़ि०) ने जवाब दिया : "अनुयायी।" हज़रत अली (रज़ि०) की बात से यह साफ़ हो गया कि इस हज के सफ़र के प्रमुख हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) ही हैं और हज़रत अली (रज़ि०) को केवल एक विशेष कार्य के लिए भेजा गया है। हज़रत अली (रज़ि०) ने मिना के जनसमूह में सूरा-9 तौबा की आरम्भिक आयतों का पाठ किया और निम्नलिखित उद्घोषणाएँ कीं—

(1) जन्नत में केवल एक वास्तविक ईश्वर की बन्दगी करनेवाले ही प्रविष्ट होंगे।

(2) किसी को भी नग्नावस्था में काबा के तवाफ़ (परिक्रमा) की अनुमति नहीं होगी।

(3) किसी भी ऐसी सन्धि को जिसपर नबी (सल्ल०) ने हस्ताक्षर किए हैं, पूरा किया जाएगा। लेकिन उसको और आगे नहीं बढ़ाया जाएगा।

(4) अगले साल किसी अनेकेश्वरवादी को हज की अनुमति नहीं दी जाएगी। इस सिलसिले में हज़रत अली (रज़ि०) ने निम्नलिखित आयतों की तिलावत की—

"बरी होने का एलान है अल्लाह और उसके रसूल की ओर से उन अनेकेश्वरवादियों को जिनसे तुमने समझौते किए थे। अतः तुम लोग देश में चार महीने और चल फिर लो और जान रखो कि तुम अल्लाह को विवश करनेवाले नहीं हो, और यह कि अल्लाह सत्य का इनकार करनेवालों को रुसवा करनेवाला है। अल्लाह और उसके रसूल की ओर से तमाम लोगों के लिए यह घोषणा की जाती है बड़े हज के दिन अल्लाह अनेकेश्वरवादियों के प्रति अपने उत्तरदायित्व से बरी है और अल्लाह के रसूल भी। अब अगर तुम लोग तौबा कर लो तो तुम्हारे लिए ही बेहतर है और जो मुँह फेरते हो तो ख़ूब समझ लो कि तुम अल्लाह को विवश करने वाले नहीं हो और ऐ नबी! इनकार करनेवालों को सख़्त अज़ाब की ख़ुशख़बरी सुना दो, सिवा उन अनेकेश्वरवादियों के जिनसे तुमने समझौते किए, फिर उन्होंने अपने वादे को पूरा करने में तुम्हारे साथ कोई कमी नहीं की और न तुम्हारे ख़िलाफ़ किसी की मदद की, तो ऐसे

लोगों के साथ तुम भी समझौते की अवधि समाप्त होने तक वादा निभाओ। क्योंकि अल्लाह ईशपरायण लोगों ही को पसन्द करता है।" (क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयतें-1 से 4)

क़ुरआन की उपरोक्त आयतों ने अनेकेश्वरवादियों के सामने तीन रास्ते रखे। इसमें दो तो स्पष्ट थे और एक गुप्त था। स्पष्ट रास्ते ये थे—

(1) इस्लाम में दाख़िल हो जाओ।

(2) इस्लामी हुकूमत के अधीन हो जाओ, जिज़िया (कर) दो, और अपने पुराने मज़हब की पैरवी करते रहो।

उनके पास तीसरा रास्ता यह था कि वे अरबद्वीप छोड़कर चले जाएँ, यदि वे पहली दोनों शर्तों से ख़ुश नहीं हैं। उनको फ़ैसला करने के लिए चार महीने की मुहलत दी गई थी।

विचारणीय बातें

(1) यह एलान एक तरह से नबी (सल्ल॰) के 22 वर्षीय संघर्ष का प्रतिफल था। नबी (सल्ल॰) की कोशिशें अब फल दे रही थीं और अन्ततः एक इस्लामी राष्ट्र अपनी पूरी चमक-दमक के साथ अस्तित्व में आ रहा था।

(2) यह नबी (सल्ल॰) को दी गई ज़िम्मेदारी के पूरा होने का प्रदर्शन भी था।

(3) यह सर्वोच्च, महिमावान के वादे के पूरा होने का मौक़ा भी था। क़ुरआन ने नबी (सल्ल॰) की उन ज़िम्मेदारियों का स्पष्ट शैली में उल्लेख किया है जो उनको दी गई थीं। क़ुरआन एलान करता है—

"ये लोग कहते हैं कि अल्लाह के प्रकाश को अपनी फूकों से बुझा दें। मगर अल्लाह अपने प्रकाश को पूर्ण किए बिना माननेवाला नहीं है। चाहे अधर्मियों को यह कितना ही नागवार हो। वह अल्लाह ही है जिसने अपने रसूल को हिदायत और सत्य-धर्म के साथ भेजा है। ताकि उसे अन्य समस्त जीवन-प्रणालियों पर प्रभावी कर दे, चाहे अनेकेश्वरवादियों को यह कितना ही नागवार हो।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयतें-32, 33)

3:17 अन्तिम हज (हज्जतुल-विदा)

सन् 9 हिजरी के बाद अल्लाह ने अपनी प्रकाशना (वह्य) के द्वारा पूरे जीवन-काल में एक बार हज के फ़र्ज़ (अनिवार्य) होने का आदेश जारी कर दिया। हज को उन लोगों पर फ़र्ज़ किया गया जो उस यात्रा और उस यात्रा के दौरान घरवालों के ख़र्च पूरे करने की सामर्थ्य रखते हों।

जब अगले साल सन् 10 हिजरी में हज का मौसम निकट आया, आप (सल्ल॰) ने अपने हज पर जाने का एलान कर दिया। आप (सल्ल॰) का यह एलान सुनते ही अरब के कोने-कोने से मुसलमान मदीना आने लगे, ताकि नबी (सल्ल॰) के साथ हज करने का गौरव प्राप्त कर सकें।

आप (सल्ल॰) मदीना से 26 ज़ी-कादा को ज़ुहर की नमाज़ अदा करने के बाद हज के इस पवित्र सफ़र के लिए निकले। आप (सल्ल॰) के साथ एक लाख से अधिक सहाबियों (रज़ि॰) का एक विशाल जनसमूह था। यह संख्या बढ़कर लगभग एक लाख बीस हज़ार उस वक़्त हो गई जब 9 ज़िलहिज्जा को आप (सल्ल॰) ने अरफ़ात के मैदान में विदाई ख़ुतबा (प्रवचन) दिया।

नबी (सल्ल॰) ज़ुल-हुलैफ़ा के स्थान पर रुके, एहराम बांधा और तलबिया पढ़ना शुरू किया—

"हाज़िर हूँ, ऐ अल्लाह! मैं हाज़िर हूँ। मैं हाज़िर हूँ, आप का कोई शरीक (साझी) नहीं। मैं हाज़िर हूँ। तमाम तारीफ़, शुक्र और सत्ता आपकी ही है। आपका कोई शरीक नहीं।"

इस महान् सफ़र में हर मोड़ पर, जहाँ भी आप (सल्ल॰) रुके, हर अवसर पर नबी (सल्ल॰) व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप में हज की सही विधि के बारे में लोगों को बताते रहे।

पवित्रात्माओं का यह क़ाफ़िला 5 ज़िलहिज्जा को मक्का-मुकर्रमा (पवित्र मक्का शहर) पहुँचा। आप (सल्ल॰) सीधे काबा गए और तवाफ़ किया। फिर आप (सल्ल॰) ने मक़ामे-इबराहीम पर रुककर दो रकअत् नमाज़ अदा की

और फिर सफ़ा की पहाड़ी की तरफ़ गए।

सफ़ा से आप (सल्ल॰) ने 'सई' शुरू की। 'सई' सफ़ा और मरवा के बीच सात चक्कर लगाने को कहते हैं। नबी (सल्ल॰) मक्का में चार दिन रुके और फिर 8 ज़िल-हिज्जा को प्रातः फ़ज्र की नमाज़ के बाद मिना पहुँचे और वहीं पड़ाव किया।

9 ज़िल-हिज्जा को प्रातः फ़ज्र की नमाज़ के बाद आप (सल्ल॰) अराफ़ात के लिए रवाना हुए। वहाँ ज़ुहर के वक़्त आप (सल्ल॰) ने ज़ुहर और अस्र की नमाज़ एक साथ अदा की और आप (सल्ल॰) ने अपना वह ऐतिहासिक ख़ुतबा (अभिभाषण) दिया जो दुनिया हमेशा याद रखेगी। इसको ख़ुत्बतुल-विदा (अन्तिम अभिभाषण) का नाम दिया जाता है। इसे मानवाधिकार के पहले चार्टर के रूप में इनसानियत हमेशा याद रखेगी। नबी (सल्ल॰) ने एक लाख बीस हज़ार से अधिक के समूह के सामने यह ख़ुतबा दिया। आप (सल्ल॰) ने कहा—

"समस्त स्तुति एवं प्रशंसाएँ अल्लाह के लिए हैं। हम उसी की प्रशंसा और स्तुति करते हैं और उसी से मदद और क्षमा चाहते हैं और उसी के सामने तौबा करते हैं। हम उसी से अपने मन की ख़राबियों और बुरे कर्मों से पनाह चाहते हैं। जिसको अल्लाह मार्ग दिखाए उसे कोई गुमराह नहीं कर सकता और जिसको वह गुमराह कर दे उसे कोई मार्ग नहीं दिखा सकता और मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं। वह अकेला है, उसका कोई शरीक (साझी) नहीं और मैं एलान करता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल है।"

"लोगो! मेरी बात ग़ौर से सुनो! मुझे नहीं पता कि मैं दोबारा तुमसे इस जगह मिल सकूँ या हज कर सकूँ।"

"लोगो! अल्लाह कहता है कि हमने तुमको एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया है और तुम्हारे बहुत-से क़बीले और ख़ानदान बनाए हैं, ताकि तुम पहचाने जा सको और अल्लाह की दृष्टि में प्रतिष्ठित वह है जो अधिक ईशपरायण है। किसी अरबी को किसी अजमी (ग़ैर-अरबी) पर और किसी

अजमी को किसी अरबी पर कोई महत्ता और बरतरी नहीं है और न किसी काले को किसी गोरे पर और न किसी गोरे को किसी काले पर महत्ता और बरतरी हासिल है। महत्ता केवल चरित्र की पवित्रता के आधार पर है।"

"तुम सब आदम (अलैहि०) की सन्तान हो और आदम (अलैहि०) मिट्टी से पैदा किए गए थे। ख़बरदार! ख़ून या माल का हर वह दावा जिसके लोग मुद्दई (दावेदार) हैं वे मेरे क़दमों के नीचे हैं। (मैं उन्हें मिथ्या ठहराता हूँ।) मगर बैतुल्लाह की निगरानी और हाजियों को पानी पिलाने की सेवा पहले ही की तरह चलती रहेगी।"

इसके बाद आप (सल्ल०) ने कहा : "ऐ क़ुरैश के लोगो! क़ियामत के दिन कहीं ऐसा न हो कि तुम दुनिया का बोझ अपनी गर्दनों पर उठाए हुए आओ और लोग आख़िरत का सामान लेकर आएँ। याद रखो यदि ऐसा हुआ तो मैं तुम्हें अल्लाह के अज़ाब (प्रकोप) से न बचा सकूँगा।"

"ख़बरदार! अज्ञानकाल की समस्त रस्में मेरे क़दमों के नीचे रौंद दी गई हैं। अज्ञानकाल के तमाम ख़ून (चाहे वह किसी के भी हों) सब माफ़ हैं (अब दोनों पक्षों में से कोई इसका बदला न लेगा।) मैं सबसे पहले अपने ही ख़ानदान का एक ख़ून जो रबीअ्-बिन-हारिस के बेटे का है, माफ़ करता हूँ, जिसे क़बीला हुज़ैल ने मार डाला था। अज्ञानकाल का हर ब्याज माफ़ है। (इस क़ानून की शुरुआत भी मैं अपनी तरफ़ से करता हूँ।) और अपने चचा अब्बास-बिन-अब्दुल-मुत्तलिब का सूद (ब्याज) माफ़ करता हूँ। उनका सूद सब-का-सब माफ़ और निरस्त है।"

"लोगो! निस्सन्देह तुम्हारे ख़ून, तुम्हारी धन-सम्पत्तियाँ और तुम्हारी इज़्ज़त-व-आबरू क़ियामत तक एक-दूसरे पर हराम हैं, जिस तरह तुम पर इस दिन, इस महीने और इस शहर का सम्मान करना अनिवार्य है और तुम सब बहुत जल्द अपने पालनहार से जा मिलोगे, जहाँ तुमसे तुम्हारे कर्मों का हिसाब-किताब होगा।"

"ऐ लोगो! तुम्हारी औरतों पर तुम्हारे कुछ अधिकार हैं और उसी तरह तुम पर तुम्हारी औरतों के अधिकार हैं। तुम्हारा उन पर यह हक़ है कि तुम्हारे

बिस्तर पर किसी ग़ैर-मर्द को न आने दें तथा उन पर तुम्हारा यह हक़ है कि खुली बेहयाई का कोई काम न करें। किन्तु यदि वे ऐसा काम करें तो तुम्हारे रब ने तुम्हें अनुमति दी है कि उनके सोने की जगह अपने से अलग कर दो, (किन्तु यदि वे फिर भी इससे न रुकें) तो फिर तुम्हें इजाज़त है कि ऐसी हल्की मार मारो कि शरीर पर निशान न पड़ें। यदि वे अपनी हरकतों से रुक जाएँ तो दस्तूर के मुताबिक़ उनका खाना और कपड़ा तुम्हारे ज़िम्मे है।"

"ख़बरदार! किसी स्त्री के लिए जाएज़ नहीं कि वह अपने पति के माल में से उसकी अनुमति के बग़ैर किसी को कुछ दे। औरतों के साथ अच्छा व्यवहार करने के हमेशा पाबन्द रहो। क्योंकि वे तुम्हारी निगरानी में हैं और इस हैसियत में नहीं है कि अपने मामले खुद चला सकें। औरतों के विषय में अल्लाह से डरते रहो। तुमने उनको अल्लाह की अमानत के रूप में हासिल किया है और अल्लाह के कलिमे के साथ उनसे सम्बन्ध स्थापित किया है।"

"लोगो! अल्लाह तआला ने (विरासत का क़ानून लागू करके) हर हक़दार को उसका हक़ दे दिया है। इसलिए अब किसी वारिस के हक़ में वसीयत जाइज़ और लागू नहीं। बच्चे का वंश उस मर्द से होगा जिसकी वह पत्नी है। जिसने दुष्कर्म किया उसके लिए सज़ा है और उसका हिसाब-किताब अल्लाह के ज़िम्मे है। जिसने अपने बाप के अलावा किसी और की ओर निस्बत की या किसी ग़ुलाम ने अपने को किसी और मालिक से जोड़ा तो उसपर प्रभु की धिक्कार है।"

"क़र्ज़ अदा किया जाएगा और उधार ली गई चीज़ वापस की जाएगी। ज़मानत लेनेवाला, ज़मानत का ज़िम्मेदार है। ख़बरदार! अपराध करनेवाला स्वयं अपने अपराध का ज़िम्मेदार है। बाप के अपराध का ज़िम्मेदार पुत्र नहीं और पुत्र के अपराध का ज़िम्मेदार बाप नहीं।"

"किसी व्यक्ति के लिए किसी भाई की चीज़ लेना उचित नहीं। मगर उस स्थिति में जाइज़ है कि वह स्वेच्छा से दे दे। अतः तुम लोग अपने ऊपर अत्याचार न करो।"

"लोगो! ख़ूब अच्छी तरह समझ लो कि हर मुसलमान दूसरे मुसलमान

का भाई है और सब मुसलमान आपस में एक-दूसरे के भाई-भाई हैं। तुम्हारे ग़ुलाम तुम्हारे भाई हैं, तुम जो कुछ ख़ुद खाते हो, उन्हें भी खिलाओ और जो ख़ुद पहनो, उन्हें भी पहनाओ।"

"ख़बरदार! मेरे बाद गुमराह या सत्य के इनकारी न हो जाना कि एक-दूसरे की गर्दनें मारने लगो। जिस व्यक्ति के पास किसी की अमानत हो उसके लिए अनिवार्य है कि वह अमानत वाले को अमानत ठीक-ठीक रीति से लौटा दे।"

"ऐ लोगो! यदि कोई कुरूप और काला हबशी भी तुम्हारा अमीर (शासक) बना दिया जाए और वह अल्लाह की किताब (क़ुरआन मजीद) के अनुसार तुम्हारा नेतृत्व करे तो तुमपर उसकी बात मानना अनिवार्य है।"

"ऐ लोगो! मेरे बाद कोई नबी नहीं आएगा और तुम्हारे बाद कोई उम्मत नहीं। मैं तुम्हारे बीच एक चीज़ छोड़े जा रहा हूँ, जिसे अगर तुम मज़बूत पकड़े रहोगे तो कभी भटकने न पाओगे—वह है अल्लाह की किताब (क़ुरआन)

"लोगो! अब शैतान इस बात से मायूस हो गया है कि इस भूमि (अरब) पर उसकी पूजा की जाए। लेकिन दूसरे मामले में अपने नीच कर्मों के द्वारा उसकी बात मानी तो वह उसपर भी राज़ी रहेगा। तुम अपने धर्म को उसकी बुराई से बचा कर रखना।"

"ख़बरदार! अपने रब की इबादत करते रहो। पाँच वक़्त की नमाज़ों की पाबन्दी करो। रमज़ान के महीने के रोज़े रखो। अपने मालों में से स्वेच्छा के साथ ज़कात अदा करते रहो। अपने रब के घर (बैतुल्लाह) का तवाफ़ करते रहो और अपने अधिकारियों के हुक्म की पैरवी (आज्ञापालन) करते रहो और अपने अधिकारियों के हुक्म की पैरवी करोगे तो अपने रब की जन्नत में दाख़िल हो जाओगे।"

"ख़बरदार! जो लोग यहाँ मौजूद हैं वे मेरी बातों को उन लोगों तक पहुँचा दें जो यहाँ मौजूद नहीं हैं। क्योंकि बहुत-से लोग जिनको मेरा सन्देश पहुँचेगा वे उन लोगों से अधिक सुरक्षित स्मरण रखनेवाले होंगे जो इस वक़्त सुननेवाले हैं। तुम लोगों से मेरे बारे में भी पूछा जाएगा। बताओ, तुम लोग मेरे बारे में क्या कहोगे?"

जनसमूह ने जवाब दिया : "हम गवाही देते हैं कि आप ने अपनी ज़िम्मेदारी को पूरी तरह अदा कर दिया। अल्लाह का सन्देश (हम तक और लोगों तक) पहुँचा दिया और नसीहत कर दी।"

इसके बाद आप (सल्ल॰) ने अपनी शहादत की उंगली (तर्जनी) आसमान की ओर उठाई और फिर जनसमूह की ओर संकेत करते हुए कहा : "ऐ अल्लाह! तू गवाह रहना। ऐ अल्लाह! तू गवाह रहना। ऐ अल्लाह! तू गवाह रहना।" इसके बाद आप (सल्ल॰) ने दो रकअत् ज़ुहर और दो रकअत् अस्र की नमाज़ अदा की। दोनों नमाज़ें मिलाकर अदा की गईं।

नमाज़ अदा करने के बाद आप (सल्ल॰) जबले-रहमत (नामी पहाड़ी) पर पहुँचे और सूरज डूबने तक दुआ में तल्लीन रहे।

सूर्यास्त के बाद आप (सल्ल॰) मुज़्दलफ़ा के लिए रवाना हुए। वहाँ पहुँचकर तीन रकअत् नमाज़ मग़रिब और दो रकअत इशा की नमाज़ अदा की। यहाँ भी दोनों वक़्तों की क़स्र नमाज़ें एक साथ अदा की गईं। फिर आप (सल्ल॰) ने फ़ज्र की नमाज़ तक आराम किया। फ़ज्र की नमाज़ अदा करने के बाद आप (सल्ल॰) मशअरे-हराम के लिए रवाना हुए और वहाँ सूरज निकलने तक इबादत में व्यस्त रहे।

फिर मिना की ओर बढ़े और जमरात पर कंकरियाँ मारीं। कंकरियाँ मारते समय आप (सल्ल॰) तलबिया से रुक गए।

फिर आप (सल्ल॰) ने 63 ऊँटों को स्वयं क़ुरबान किया और बाक़ी 37 ऊँट हज़रत अली (रज़ि॰) को क़ुरबान करने को कहा।

फिर सिर के बाल साफ़ कराए (यानी हलक़ किया) और मक्का पहुँचकर तवाफ़ किया। उसी दिन आप (सल्ल॰) मिना वापस आए जहाँ 13 ज़िल-हिज्जा तक ठहरे रहे। फिर वहाँ से ज़ुहर (दोपहर) से पहले रवाना हुए और फिर उक़बा की घाटी में ठहरे। वहीं आप (सल्ल॰) ने ज़ुहर, अस्र, मग़रिब और इशा की नमाज़ें अदा की। इशा के बाद आप (सल्ल॰) ने कुछ देर आराम किया और फिर मक्का रवाना हो गए।

मक्का पहुँचकर आप (सल्ल॰) मक्का से विदा होने से पहले काबा का अंतिम तवाफ़ (परिक्रमा) किया और मदीना के लिए रवाना हो गए।

3:18 सर्वोच्च प्रभु का बुलावा

अन्तिम अभिभाषण के बाद अल्लाह तआला ने आप (सल्ल॰) को दी गई ज़िम्मेदारियों के पूरा हो जाने की उद्घोषणा की। क़ुरआन कहता है—

> "आज सत्य के विरोधियों को तुम्हारे धर्म की ओर से पूरी निराशा हो चुकी है। अतः तुम उनसे न डरो, बल्कि मुझ से डरो, आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारा धर्म पूर्ण कर दिया। तुम पर अपनी नेमत पूरी कर दी और तुम्हारे लिए एकेश्वर की निष्ठापूर्ण भक्ति (इस्लाम) को धर्म के रूप में पसंद किया।" (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-3)

उपरोक्त आयत सुनने के बाद हज़रत उमर (रज़ि॰) ने रोना शुरू कर दिया। जब उनसे रोने का कारण पूछा गया तो उन्होंने कहा : "शिखर पर पहुँचने के बाद केवल नीचे ही जा सकते हैं।"

इस ईश्वरीय प्रकाशना (वह्य) से यह बात साफ़ हो जाती है कि नबी (सल्ल॰) ने अपनी ज़िम्मेदारियाँ पूरी तरह अदा कर दी थीं। ये वे ज़िम्मेदारियाँ थीं जिनको अदा करने के लिए नबी (सल्ल॰) को दुनिया में भेजा गया था।

मदीना वापस आने के बाद नबी (सल्ल॰) को ज्ञात हुआ कि रोमी सल्तनत सीमा के पास आबाद उन क़बीलों को परेशान कर रही है जो मुसलमान हो गए थे। आप (सल्ल॰) ने बिना देर किए सेना को तैयारी का आदेश दिया। यह सेना उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) के नेतृत्व में तैयार की गई। हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) की आयु अभी कम थी, जबकि सेना में अनेक वरिष्ठ सहाबी शामिल थे। उन वरिष्ठ सहाबियों में हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰), हज़रत उमर (रज़ि॰) और कई दूसरे सुप्रसिद्ध सहाबी मौजूद थे।

कई नव-मुस्लिम लोगों को, जो अभी इस्लाम की मूल शिक्षा को पूरी तरह धारण नहीं कर पाए थे, हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) की इस महत्वपूर्ण सेना के नेतृत्व पर आपत्ति थी। उनको लगता था कि केवल अठारह वर्ष का

यह नवजवान जो एक आज़ाद किए हुए ग़ुलाम का पुत्र था, इस सेना का सेनापति कैसे हो सकता है? लोगों की आपत्ति की सूचना जब आप (सल्ल०) तक पहुँची तो आप (सल्ल०) नाराज़ हुए और अपने फ़ैसले को पूर्वत् रखा।

अभी यह सेना मदीना से कुछ दूर ही गई होगी कि सूचना मिली कि नबी (सल्ल०) बीमार पड़ गए हैं। उस समय यह सेना मदीना से केवल 3 मील की दूरी पर थी। हज़रत उसामा (रज़ि०) ने आगे बढ़ने का फ़ैसला कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया।

बीमारी के शुरू में आप (सल्ल०) नमाज़ की इमामत ख़ुद ही करते रहे। इसी बीच आप (सल्ल०) ने कुछ छोटे-मोटे ख़ुतबे (प्रवचन) भी दिए। आप (सल्ल०) ने इन ख़ुत्बों में से एक ख़ुतबे में कहा : "पिछली उम्मतों ने अपने नबियों की क़ब्रों को उपासनागृह बना लिया था।" आप (सल्ल०) ने अपने साथियों को ऐसा करने से मना किया। आप (सल्ल०) ने बार-बार महिलाओं से अच्छा व्यवहार करने की नसीहत दी। ग़ुलामों से अच्छा व्यवहार करने का आदेश दिया और अनसार के अधिकारों को हमेशा पूरा करते रहने को कहा।

आप (सल्ल०) ने एक ख़ुतबे में लोगों से कहा कि यदि किसी भी व्यक्ति की किसी प्रकार की देनदारी आप (सल्ल०) के ज़िम्मे है तो वह माँग ले।

आप (सल्ल०) ने अपने अन्तिम ख़ुतबे में कहा : "एक ग़ुलाम को यह चुनने को कहा गया कि वह अपने लिए दुनिया या जो अल्लाह के पास है, में से किसी एक को चुन ले तो उसने अपने लिए उस चीज़ को चुना जो अल्लाह के पास है।" यह सुनकर हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) रोने लगे। उनको आभास हो गया कि जिस ग़ुलाम का उल्लेख नबी (सल्ल०) कर रहे हैं वह कोई और नहीं, बल्कि आप (सल्ल०) स्वयं हैं।

इस बीमारी में नबी (सल्ल०) अपनी दूसरी पत्नियों की सहमति से हज़रत आइशा (रज़ि०) के हुजरे (कोठरी) में आराम करने लगे।

अन्तिम दिनों में बीमारी बढ़ती चली गई। उस समय आप (सल्ल०) ने हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) को नमाज़ की इमामत करने का आदेश दिया।

अन्ततः 12 रबी-उल-अव्वल को वह समय आ ही गया जो हर मनुष्य

के जीवन में आता है। 12 रबी-उल-अव्वल तदानुसार 8 जून 632 ई॰ को नबी (सल्ल॰) ने अपने प्राण, अपने प्रभु के सिपुर्द कर दिए। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन (बेशक हम अल्लाह ही के हैं और अल्लाह ही की तरफ़ हमें लौट कर जाना है)।

सहाबियों (रज़ि॰) को जब इस दुखद घटना की सूचना मिली तो उनको अपने कानों पर विश्वास नहीं आया। इस घटना ने लोगों को इतना हताश कर दिया मानो कि दुनिया उनके लिए अंधेरी हो गई हो। मस्जिदे-नबवी में मौजूद सहाबियों का ग़म के मारे बुरा हाल था। हज़रत उमर (रज़ि॰) तो इस घटना से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने अपनी तलवार म्यान से निकाल ली और कहा कि जो भी यह कहेगा कि आप (सल्ल॰) नहीं रहे, मैं उसका सिर काट दूँगा।

लेकिन हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) ने उस समय परिस्थितियों को संभाला और बेमिसाल बुद्धिमत्ता का प्रमाण दिया। वे मंच पर खड़े हुए और एक ऐतिहासिक अभिभाषण दिया। हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) ने कहा—

"स्तुति एवं प्रशंसाएँ केवल अल्लाह को ही शोभा देती हैं। तुम में से जो भी मुहम्मद (सल्ल॰) की पूजा करता था उसको मालूम होना चाहिए कि अब वे हमारे बीच नहीं रहे, लेकिन जो सर्वोच्च अल्लाह की उपासना करता है उसको मालूम होना चाहिए कि वह जीवित और शाश्वत है। उसको कभी मृत्यु आने वाली नहीं।"

फिर उन्होंने क़ुरआन की इस आयत का पाठ किया—

> "मुहम्मद इसके सिवा कुछ नहीं कि बस एक रसूल हैं, उनसे पहले और रसूल भी गुज़र चुके हैं, फिर क्या यदि उनकी मृत्यु हो जाए या उनकी हत्या कर दी जाए तो तुम लोग उल्टे पाँव फिर जाओगे? याद रखो! जो उल्टा फिरेगा वह अल्लाह का कुछ नुक़सान न करेगा, अलबत्ता जो अल्लाह के शुक्र-गुज़ार (कृतज्ञ) बन्दे बनकर रहेंगे, उन्हें वह उसका शुभ प्रतिफल देगा।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-144)

इस ज़ोरदार सम्बोधन ने लोगों को सदमे की लहर से बाहर निकाला। हज़रत उमर (रज़ि०) ये आयत सुनकर गिर गए और रोना शुरु कर दिया।

अगले दिन हज़रत अब्बास (रज़ि०), हज़रत अली (रज़ि०), हज़रत फ़ज़ल-बिन-अब्बास (रज़ि०), क़स्म-बिन-अब्बास (रज़ि०), शुक़रान (रज़ि०), (अल्लाह के रसूल सल्ल० के आज़ाद किए हुए ग़ुलाम), हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि०) और हज़रत औस-बिन-ख़ौला (रज़ि०) ने मिलकर नबी (सल्ल०) को ग़ुस्ल दिया।

लोगों ने दस-दस की जमाअत में जनाज़े की नमाज़ अदा की और यह सिलसिला पूरे दिन और रात के अधिकांश हिस्से में जारी रहा। फिर हज़रत आइशा (रज़ि०) का हुजरा (कमरा) आप (सल्ल०) का अंतिम विश्राम गृह बना। यह वही हुजरा था जहाँ नबी (सल्ल०) ने अपने जीवन के अन्तिम कुछ दिन बिताए थे।

अध्याय 4
नबी (सल्ल०) एक महान इनसान

4:1 नबी (सल्ल॰) क़ुरआन के दर्पण में

इतिहास की महत्वपूर्ण विभूतियों को समझने के लिए हम सामान्यतः ऐतिहासिक स्रोतों, या पुरात्व के धरोहरों की मदद लेते हैं। लेकिन हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) अकेले ऐसे ऐतिहासिक व्यक्तित्व हैं कि हम उनके बारे में दुनिया की सबसे अधिक प्रमाणिक दस्तावेज़, क़ुरआन, से सब कुछ मालूम कर सकते हैं।

एक बार किसी ने हज़रत आइशा (रज़ि॰) से पूछा कि "नबी (सल्ल॰) का व्यक्तित्व कैसा था?" तो उन्होंने उसी से सवाल किया : "क्या तुमने क़ुरआन नहीं पढ़ा?" एक बार किसी और ने उनसे आप (सल्ल॰) के आचरण के बारे में पूछा तो उनका उत्तर था : "आप (सल्ल॰) का आचरण क़ुरआन के ठीक अनुकूल था।"

नबी (सल्ल॰) का व्यक्तित्व और पवित्र क़ुरआन एक-दूसरे के लिए दर्पण के समान हैं। नबी (सल्ल॰) के व्यक्तित्व में हम उस विभूति को पूर्ण रूप में देखते हैं जिसकी क़ुरआन हमसे माँग करता है और क़ुरआन मजीद में हम नबी (सल्ल॰) की महानता, उनकी महत्ता, उनका अध्यात्मिक स्तर और चरित्र को स्पष्ट रूप में देख सकते हैं।

उस पूर्ण व्यक्तित्व की, जिसकी माँग क़ुरआन करता है, विशेषताओं को क़ुरआन ने विभिन्न स्थानों पर बयान किया है। हम यहाँ उनमें से दो उदाहरण पेश करते हैं। क़ुरआन मोमिन (निष्ठावान सच्चा ईश-भक्त) के चरित्र का विवरण देते हुए कहता है—

> "निस्सन्देह सफलता पाई है, ईमान लानेवालों ने, जो अपनी नमाज़ में विनम्रता अपनाते हैं, व्यर्थ के कामों से दूर रहते हैं, ज़कात की नीति पर चलते हैं, अपनी शर्मगाहों (गुप्तांगों) की रक्षा करते हैं,

सिवा अपनी पत्नियों के और उन स्त्रियों के जो यथाविधी उनके स्वामित्व में हों कि उनपर वे निन्दा के क़ाबिल नहीं हैं, लेकिन जो उसके अलावा कुछ और चाहें वही ज़्यादती करनेवाले हैं; अपनी धरोहरों और अपने दिए वचनों का लिहाज़ रखते हैं और अपनी नमाज़ों की हिफ़ाज़त करते हैं। यही लोग वे वारिस हैं जो विरासत में जन्नतुल-फ़िरदौस (बैकुण्ठ) पाएँगे और उसमें हमेशा रहेंगे।

(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयत-1-11)

एक दूसरी जगह अल्लाह तआला फ़रमाता है—

"रहमान (दयावान प्रभु) के (प्रिय) दास वे हैं जो ज़मीन पर नर्म चाल चलते हैं और अज्ञानी उनके मुँह आएँ तो कह देते हैं कि 'तुम को सलाम' जो अपने रब के आगे सजदे और खड़े रहने में रातें गुज़ारते हैं, जो दुआएँ करते हैं कि ऐ हमारे प्रभु! जहन्नम (नरकाग्नि) की यातना से हमको बचा ले, उसकी यातना तो जान को लागू है। निश्चय ही वह जगह ठहरने की दृष्टि से भी बहुत बुरी है और स्थान की दृष्टि से भी।

जो ख़र्च करते हैं तो न फ़ुज़ूलख़र्ची करते हैं और न कंजूसी से काम लेते हैं, बल्कि उनका ख़र्च दोनों सीमाओं के बीच संतुलन बनाए रखता है। जो अल्लाह के अतिरिक्त किसी दूसरे को पूज्य नहीं पुकारते और न अल्लाह के वर्जित किए हुए किसी की नाहक़ हत्या करते हैं और न वे व्यभिचार करते हैं। जो कोई यह काम करे वह अपने पाप का बदला पाएगा। क़ियामत के दिन उसकी यातना बढ़ती चली जाएगी और वह उसी में अपमानित होकर स्थाई रूप से पड़ा रहेगा। सिवाय उसके कि जो पलट आया और ईमान लाया और अच्छा कर्म किया, तो ऐसे लोगों की बुराइयों को अल्लाह भलाइयों से बदल देगा और वह बड़ा क्षमाशील और दयालु है।

जो शख़्स तौबा करके शुभ-कर्म करता है वह तो अल्लाह की ओर पलट आता है, जैसा कि पलटने का हक़ है। (और रहमान के बन्दे वे हैं) जो असत्य के गवाह नहीं बनते तथा यदि किसी बेकार

चीज़ पर उनका गुज़रना होता है तो सज्जन आदमी की तरह गुज़र जाते हैं। जिन्हें यदि उनके रब की यातना सुनाकर नसीहत की जाती है तो वह उसपर अंधे और बहरे बनकर नहीं रह जाते, जो दुआएँ माँगा करते हैं कि ऐ हमारे प्रभु! हमें अपनी पत्नियों और अपनी औलाद से आँखों की ठंडक दे और हमको परहेज़गारों का नेतृत्व करनेवाला बना। ये हैं वे लोग जो अपने सब्र का फल बुलन्द मन्ज़िल की शक्ल में पाएँगे। अभिवादन और सलाम के साथ उनका स्वागत होगा। वे हमेशा-हमेशा वहाँ रहेंगे। क्या ही अच्छी है वह ठहरने की जगह और स्थान।"

(क़ुरआन, सूरा-25 फ़ुरक़ान, आयतें-63 से 76)

नबी (सल्ल०) का जीवन, वैयक्तिक एवं सार्वजनिक दोनों दृष्टि से समस्त मनुष्यों के लिए अनुकरण के योग्य हैं। क़ुरआन इस बात को इस तरह कहता है—

"और निस्सन्देह तुम महान नैतिकता के शिखर पर हो।"

(क़ुरआन, सूरा-68 क़लम, आयत-4)

नबी (सल्ल०) की रसूल की हैसियत से नियत कार्य उनसे पहले आए नबियों से भिन्न नहीं था। क़ुरआन में है—

"हमने तुमसे पहले जो रसूल भी भेजा है उसको यही वह्य (प्रकाशना) की है कि मेरे सिवा कोई प्रभु-पूज्य नहीं है, अतः तुम लोग मेरी ही उपासना करो।" (क़ुरआन, सूरा-21 अंबिया, आयत-25)

इससे यह पता चलता है कि नबी (सल्ल०) वही सन्देश लेकर आए थे जो सन्देश देकर दूसरे रसूल इससे पहले भेजे गए थे। क़ुरआन कहता है—

"ऐ नबी! हमने तुम्हारी तरफ़ उसी तरह वह्य भेजी है जिस तरह नूह और उसके बाद के पैग़म्बरों की तरफ़ भेजी थी। हमने इबराहीम, इसमाईल, इसहाक़, याक़ूब और औलादे-याक़ूब, ईसा, अय्यूब, यूनुस, हारून और सुलैमान की ओर वह्य भेजी। हमने दाऊद को ज़बूर दी, हमने उन रसूलों पर भी वह्य अवतरित की जिनका उल्लेख

हम इससे पहले तुमसे कर चुके हैं और उन रसूलों पर भी जिनका उल्लेख तुम से नहीं किया। हमने मूसा (अलैहि॰) से इस प्रकार बात-चीत की जिस तरह बात-चीत की जाती है।

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयतें-163, 164)

इस सन्देश के एक होने पर भी नबी (सल्ल॰) को पिछले नबियों की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण एवं विशेष कर्तव्य निभाना था। इसकी वजह यह थी कि मुहम्मद (सल्ल॰) पैग़म्बरी की इस कड़ी में अन्तिम नबी थे। इस दृष्टि से आप (सल्ल॰) को इस ईश्वरीय सन्देश को रियासत की शक्ल में पूरा करना था।

आइए अब देखें कि क़ुरआन नबी (सल्ल॰) की महत्ता, उनके स्थान और उनके व्यक्तित्व के बारे में क्या कहता है।

जन्म का उद्देश्य

क़ुरआन में अल्लाह तआला फ़रमाता है—

"ऐ नबी! हमने तुमको समस्त संसारवालों के लिए दया-पात्र बनाकर भेजा है।" (क़ुरआन, सूरा-21 अंबिया, आयत-107)

अन्तिम नबी (सल्ल॰) को पूरी दुनिया के लिए नबी बनाकर भेजा गया था। आप (सल्ल॰) को नबी बनाकर भेजने का उद्देश्य यह था कि पूरे संसार को उसके पैदा होने के मूलोद्‌देश्य से अवगत करा दिया जाए। क़ुरआन इस सम्बन्ध में इन शब्दों में बताता है—

"मैंने जिन्न और मनुष्यों को इसके सिवा किसी काम के लिए पैदा नहीं किया है कि वे मेरी ही बन्दगी (यानी न केवल पूजा और बन्दगी बल्कि दासता और अनुसरण भी) करें।"

(क़ुरआन, सूरा-51 ज़ारियात, आयत-56)

क़ुरआन के अनुसार अल्लाह सर्वशक्तिमान की इबादत और बन्दगी केवल कुछ रस्मों को पूरा करने का नाम नहीं है। यह बन्दगी पूरे जीवन पर छाई हुई है और इस पूरी ज़िन्दगी को अल्लाह सर्वशक्तिमान के आदेशों के

प्रकाश में गुज़ारना सच्ची इबादत है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का बुनियादी काम मानवजाति को अल्लाह के आज्ञापालन की तरफ़ बुलाना था और लोगों को उनके कर्मों के अच्छे और बुरे परिणामों की ओर सचेत करना था। आप (सल्ल॰) को इस्लाम के प्रति निष्ठावान और प्रतिबद्ध अनुयाइयों को तैयार करना जो कि न केवल ख़ुद नेकी और भलाई के नमूना हों, बल्कि आप (सल्ल॰) के इस महान कार्य में सहयोग भी दें और इस काम को आप (सल्ल॰) के बाद भी उसी गति से जारी रखें। इन दोनों ज़िम्मेदारियों का क़ुरआन में कई स्थानों पर उल्लेख हुआ है।

सार्वजनिक कार्यभार

क़ुरआन कहता है—

"ऐ नबी! हमने तुम्हें भेजा है साक्षी बनाकर, शुभ सूचना देनेवाला और डरानेवाला बनाकर, अल्लाह की अनुमति से उसकी तरफ़ दावत देनेवाला बनाकर और रौशन चिराग़ बनाकर।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयतें-45, 46)

यह बात दिन के उजाले की तरह स्पष्ट है कि आप (सल्ल॰) को सम्पूर्ण मानवजाति के पास उस सच्चे धर्म की ओर बुलाने के लिए भेजा गया था जिसकी ओर हज़रत आदम (अलैहि॰) से लेकर हज़रत ईसा (अलैहि॰) तक सारे पैग़म्बरों ने बुलाया था। यह धर्म हर प्रकार की ख़राबियों एवं मिलावटों से पाक था। आप (सल्ल॰) पर यह ज़िम्मेदारी भी डाली गई थी कि वे लोगों को सचेत करें कि यदि वे सच्चाई को झुठलाने और दबाने की कोशिश करेंगे तो फ़ैसले के दिन (क़ियामत के दिन) वे अल्लाह की सज़ा के पात्र होंगे। इसके विपरीत वे लोग जो इस सच्चाई को पूरी निष्ठा के साथ दिल से स्वीकार करेंगे और सीधे रास्ते पर चलेंगे, अल्लाह तआला उन लोगों को अच्छा पुण्यफल देगा।

विशेष कार्यभार

"वही तो है जिसने अपने रसूल को हिदायत और सच्चे धर्म के साथ भेजा है, ताकि उसे पूरे-के-पूरे धर्म पर प्रभावी कर सके चाहे

अनेकेश्वरवादियों को यह कितना ही नागवार गुज़रे।"

(क़ुरआन, सूरा-61 सफ़, आयत-9)

नबी (सल्ल॰) पर यह ख़ास ज़िम्मेदारी डाली गई थी कि वे उस धर्म को उसके मूल रूप में स्थापित कर दें और पिछले संप्रदायों के द्वारा की जाने वाली मिलावटों को इसमें से अलग कर दें।

दुनिया ने देखा कि नबी (सल्ल॰) ने इस ज़िम्मेदारी को किस कुशलता से केवल दस साल की छोटी-सी अवधि में पूरा किया। मदीना आने के बाद केवल दस साल की अवधि में इस महान कार्य को पूरा करना एक ऐसा चमत्कार है जिसकी मिसाल मानवता के इतिहास में नहीं मिलती। आप (सल्ल॰) पूरे मानव-इतिहास में एक ऐसे अकेले मार्गदर्शक और पैग़म्बर हैं जिन्होंने एक सोच या दृष्टिकोण की तरफ़ बुलाया और फिर उसी के आधार पर एक कल्याणकारी रियासत क़ायम करके दिखा दी। अरब में इस्लामी रियासत की स्थापना, जिसकी बुनियाद क़ुरआन पर थी, यह सिद्ध करती है कि नबी (सल्ल॰) के द्वारा लाया गया धर्म एक व्यवहारिक धर्म है। यह काल्पनिक धर्म नहीं जो केवल कागज़ के पन्नों की शोभा बनाने तक सीमित हो।

इस ज़िम्मेदारी को निभाने में आप (सल्ल॰) को ऐसे लोगों को प्रशिक्षित भी करना था जो इस काम को आप (सल्ल॰) के जीवन में और आप (सल्ल॰) के बाद भी आगे बढ़ाएँ।

क़ुरआन में है—

"वही है जिसने उम्मियों के अन्दर एक रसूल स्वयं उन्हीं में से उठाया, जो उन्हें उसकी आयतें सुनाता है, उनकी ज़िन्दगी संवारता है, और उनको किताब और तत्वदर्शिता की शिक्षा देता है; यद्यपि इससे पहले वे स्पष्ट पथभ्रष्टता में पड़े हुए थे।"

(क़ुरआन, सूरा-62 जुमा, आयत-2)

इसमें कोई सन्देह नहीं कि नबी (सल्ल॰) ने अपने उत्तरदायित्व को अनुपम ढंग से पूरा किया और वह भी एक बहुत ही कम अवधि में। आप (सल्ल॰) ने प्रतिकूल परिस्थितियों, दुश्मनों के विरोध और (कपट रखनेवालों की) आन्तरिक

षड्यंत्रकारियों के हथकंडो के बावजूद इस बेजोड़ सफलता को हासिल किया। आप (सल्ल॰) ने अपने सहाबियों को इस तरह प्रशिक्षित किया कि उनकी ज़िन्दगियों में इन्क़िलाबी परिवर्तन आ गया। जाहिल और अपरिपक्व लोगों को ज्ञान एवं विवेक की शिक्षा दी, क़ानून-व्यवस्था का पाबन्द बनाया, अल्लाह का तक़वा (डर और प्रेम) कमाल की हद तक उनमें पैदा किया और उनको इस योग्य बना दिया कि एक छोटी-सी अवधि के बाद इन्हीं लोगों ने दुनिया की सत्ता संभाली और उसका नेतृत्व किया। **इस पूरे घटनाक्रम में सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि लोगों के निजी व्यक्तित्व को प्रभावित किए बिना उन्हें एक संगठित समूह की शक्ल दे दी।**

न्यायधिकारिता

नबी (सल्ल॰) केवल एक राष्ट्राध्यक्ष और लोगों की समस्याओं को सुलझाने-वाले ही न थे, आप (सल्ल॰) के फ़ैसलों को सम्बन्धित लोग ख़ुशी-ख़ुशी स्वीकार करते थे। क़ुरआन का कथन है कि एक सच्चे मुसलमान का यही चरित्र होता है—

> "नहीं, ऐ नबी! तुम्हारे रब की क़सम ये कभी मोमिन नहीं हो सकते जब तक कि अपने आपसी मतभेद में ये तुमको अपना फ़ैसला करनेवाला न मान लें, फिर जो कुछ तुम फ़ैसला करो उसपर अपने दिलों में भी तंगी न महसूस करें, बल्कि प्रसन्नचित्त से उसे स्वीकार कर लें।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-65)

जहाँ तक मुस्लिम राज्य की ग़ैर-मुस्लिम जनता का विषय था, उनको इसकी स्वतन्त्रता थी कि वे अपने आन्तरिक विषयों का निर्णय वे अपने ही धार्मिक ग्रन्थों और आस्थाओं की रौशनी में करें। लेकिन यदि वे उन मामलों का फ़ैसला नबी (सल्ल॰) से चाहते तो आप (सल्ल॰) को यह हक़ था कि चाहें तो उनके मसले में फ़ैसला दें या उनके आग्रह को स्वीकार न करें। (यदि यह आशंका हो कि उनकी नीयत में कोई खोट है।)

आज्ञापालन व अनुसरण

जहाँ तक सांसारिक विषयों में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की पैरवी का प्रश्न है, हर मुसलमान के लिए आप (सल्ल॰) की पैरवी करना पुण्य प्राप्त

करने की बात है। रहा धर्म का मामला; तो इस मामले में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की पैरवी करना अनिवार्य है। क़ुरआन का स्पष्ट आदेश है—

"......जो कुछ रसूल तुम्हें दे वह ले लो और जिस चीज़ से तुम्हें रोक दे, उससे रुक जाओ। अल्लाह से डरो, अल्लाह सख़्त सज़ा देनेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-59 हश्र, आयत-7)

इसका कारण यह है कि जो धर्म रसूल (सल्ल॰) लेकर आए हैं वह उनका स्वयं का बनाया हुआ नहीं है। वे तो केवल सन्देशवाहक हैं जो सृष्टि के रचयिता के सन्देश को बिना किसी मिलावट के मनुष्यों तक लेकर आए हैं। क़ुरआन स्पष्ट शब्दों में कहता है—

"सौगन्ध है तारे की जब कि वह डूब गया, तुम्हारा मित्र न भटका है, न बहका है। वह अपने मन की इच्छा से नहीं बोलता, यह तो वह्य (प्रकाशना) है जो उसपर अवतरित होती है।"
(क़ुरआन, सूरा-53 नज्म, आयतें-1-4)

इसलिए यह हर मुसलमान के लिए अनिवार्य है कि वह नबी (सल्ल॰) के आदेशों का पालन करे, चाहे यह उसके व्यक्तिगत हितों के विरुद्ध ही क्यों न हो। क़ुरआन कहता है—

"जिसने रसूल की पैरवी की उसने वास्तव में अल्लाह की पैरवी की और जो मुँह मोड़ गया, तो बहरहाल हमने तुम्हें उन लोगों पर पासबान बनाकर तो नहीं भेजा है।"
(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-80)

श्रद्धा

एक आम मुसलमान के लिए नबी (सल्ल॰) का मान-सम्मान बिलकुल स्वाभाविक है और यह उसकी प्रकृति का हिस्सा बन जाता है। क़ुरआन कहता है—

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! अल्लाह और उसके रसूल के आगे अग्रसरता न करो और अल्लाह से डरो, अल्लाह सब कुछ सुनने और जाननेवाला है। ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! अपनी आवाज़

नबी की आवाज़ से ऊँची न करो और न नबी के साथ ऊँची आवाज़ से बात करो, जिस तरह तुम आपस में एक-दूसरे से करते हो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा किया कराया सब अकारथ हो जाए और तुम्हें ख़बर भी न हो। जो लोग अल्लाह के रसूल के सामने बात करते हुए अपनी आवाज़ नीची रखते हैं वे वास्तव में वही लोग हैं जिनके दिलों को अल्लाह ने ईशपरायणता के लिए जाँच कर चुन लिया है। उनके लिए क्षमा है और महान प्रतिफल।"

(क़ुरआन, सूरा-49 हुजरात, आयतें-1 से 3)

इन स्पष्ट आदेशों पर चलना हर मुसलमान के लिए ज़रूरी है। नबी (सल्ल॰) की ज़िन्दगी में इन आयतों के अवतरित होने के बाद सहाबी (रज़ि॰) इस बात का इस हद तक ध्यान रखते कि कभी-कभी उनकी आवाज़ मुश्किल से सुनाई देती।

आज भी मस्जिदे-नबवी में जो ख़ामोशी और शान्ति दिखाई देती है, उसका मुख्य कारण नबी (सल्ल॰) के लिए वही आदर है, जो उस समय से मुसलमानों के दिलों में बैठा हुआ है। हालाँकि मस्जिदे-नबवी में हर वक़्त ज़बरदस्त भीड़ रहती है। (मस्जिद के एक कोने में आप (सल्ल॰) आराम फ़रमा रहे हैं)। नबी (सल्ल॰) के मान-सम्मान का एक अर्थ यह भी है कि मुसलमान अपने विचारों एवं सोच पर आप (सल्ल॰) की शिक्षाओं को प्राथमिकता दें। यदि ऐसा न हुआ तो उनके नेक काम व्यर्थ चले जाएँगे।

प्रतिष्ठा

क़ुरआन कहता है—

"अल्लाह और उसके फ़रिश्ते नबी पर दुरूद भेजते हैं। ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! तुम भी उनपर दुरूद-व-सलाम भेजो।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-56)

यह आयत नबी (सल्ल॰) का स्थान किसी भी मनुष्य की तुलना में इतना बुलन्द कर देती है कि दूसरे के लिए उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। साथ-ही-साथ यह आयत इनसानों को यह अवसर प्रदान करती है कि वे ऐसे

काम में शामिल हों जो अल्लाह और फ़रिश्ते भी करते हैं। (यानी आप सल्ल॰ पर दुरूद व सलाम भेजते हैं।)

यह बात याद रखने की है कि यहाँ जिस दुरूद और सलाम का उल्लेख है उसका अर्थ 'कर्ता' से जुड़ा हुआ है। जहाँ अल्लाह का उल्लेख किया गया है वहाँ उसका मतलब यह है कि अल्लाह तआला अपनी रहमत और बरकत नबी (सल्ल॰) पर अवतरित करते हैं और जब यही दुरूद व सलाम मनुष्यों और फ़रिश्तों से जुड़ा हुआ हो तो इसका मतलब यह है कि वे अल्लाह से नबी (सल्ल॰) के दर्जे को और बुलन्द करने की दुआ करते हैं।

महत्ता

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) की आत्मजागरुकता और अध्यात्मिक शक्ति इनसानियत के सर्वश्रेष्ठ शिखर पर है। सूरा-53 नज्म में क़ुरआन इस विशेष स्थान को विस्तार से बयान करता है। यहाँ आप (सल्ल॰) के मेराज के सफ़र का उल्लेख किया गया है। चूँकि इस सफ़र की कल्पना मानवीय सोच से ऊपर की चीज़ है, इसलिए क़ुरआन इसको इन शब्दों में बयान कर रहा है जो मनुष्य समझ सकता है। क़ुरआन कहता है—

> "तब उसने अल्लाह के बन्दे को वह्य पहुँचाई जो वह्य भी उसे पहुँचानी थी। नज़र ने जो कुछ देखा, दिल ने उसमें झूठ न मिलाया। अब क्या तुम उस चीज़ पर उससे झगड़ते हो, जिसे वह आँखों से देखता है? और एक बार फिर उसने सिदरतुल-मुन्तहा के पास उसको उतरते देखा, जहाँ पास ही जन्नतुल-मावा है। उस समय सिदरह पर छा रहा था जो कुछ कि छा रहा था। **निगाह न चुंधियाई, न हद से आगे बढ़ी, और उसने अपने रब की बड़ी-बड़ी निशानियाँ देखीं।"** (क़ुरआन, सूरा-53 नज़्म, आयतें-10 से 18)

इस सफ़र के दौरान आप (सल्ल॰) एक ऐसे अनुभव से गुज़रे जिससे मानव-इतिहास में न आप (सल्ल॰) से पहले कोई व्यक्ति गुज़रा और न बाद में गुज़रेगा। इसके उपरान्त भी आप (सल्ल॰) ने उस शिष्टाचार का ध्यान रखा जिसकी इस अवसर पर केवल आप (सल्ल॰) से ही कल्पना की जा

सकती है। आप (सल्ल०) न घबराए, न आतंकित हुए। आप (सल्ल०) को अपने रुतबे और अपनी सीमाओं की पूरी समझ थी। अपने व्यक्तित्व के अध्यात्मिक स्थान का महत्व और मानवीय सीमाओं की इतनी पूर्ण समझ हमें कहीं और देखने को नहीं मिलती।

कष्ट पहुँचाना

"जो लोग अल्लाह और उसके रसूल को कष्ट पहुँचाते हैं, उनपर दुनिया और आख़िरत में अल्लाह ने लानत की है और उनके लिए अपमानजनक ईश्वरीय प्रकोप है।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-57)

क़ुरआन ने यह स्पष्ट कर दिया है कि नबी (सल्ल०) को कष्ट देना या दुख पहुँचाना अल्लाह को कष्ट पहुँचाने के समान है। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के विरुद्ध घृणा, बैर और जलन केवल उसी सन्देश की वजह से है जिसको लेकर वे आए हैं। आप (सल्ल०) के दुश्मन और आलोचक इस शत्रुता में इसलिए पड़े हुए हैं, क्योंकि वे मिथ्या दृष्टिकोणों, झूठी इच्छाओं और घमंड में फँसे हुए हैं। यही कारण है कि परलोक में अपमानजनक प्रकोप है और आग उनके आने की प्रतीक्षा कर रही है।

अल्लाह तआला अपने नबी (सल्ल०) को दिलासा देता है कि आप (सल्ल०) को झुठलाना, आप (सल्ल०) के सन्देश को स्वीकार न करना, और आप (सल्ल०) के आचरण पर कीचड़ उछालना, यह आप (सल्ल०) के विरुद्ध नहीं जैसा कि देखने में लगता है, यह तो अल्लाह के संदेश का इनकार है और यह उनको बहुत मँहगा पड़ेगा। अल्लाह तआला नबी (सल्ल०) को तसल्ली देते हुए कहता है—

"ऐ नबी! हमें ज्ञात है कि जो बातें ये लोग बनाते हैं, उनसे तुम्हें दुख होता है। किन्तु ये लोग तुम्हें नहीं झुठलाते, बल्कि ये दुराचारी वास्तव में ईश्वर की शिक्षाओं को इनकार कर रहे हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-33)

मानवीय दर्जा

क़ुरआन में जहाँ स्पष्ट शब्दों में आप (सल्ल॰) की श्रेष्ठता का उल्लेख किया गया है, वहीं पर यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि आप (सल्ल॰) एक मनुष्य हैं और आप (सल्ल॰) भी दूसरे मनुष्यों की तरह मृत्यु को प्राप्त होंगे। यह अपने आप में नबी (सल्ल॰) की महानता का प्रमाण है।

क़ुरआन आप (सल्ल॰) को यह एलान करने को कहता है कि आप (सल्ल॰) भी दूसरे मनुष्यों की तरह ही मनुष्य हैं। जो चीज़ आप (सल्ल॰) को दूसरों से श्रेष्ठ बनाती है वह चीज़ वह ईश्वरीय संदेश है जो आप (सल्ल॰) पर अवतरित हुआ। क़ुरआन कहता है–

> "ऐ नबी! कहो कि मैं तो एक मनुष्य हूँ तुम ही जैसा, मेरी ओर प्रकाशना की जाती है कि तुम्हारा पूज्य-प्रभु बस एक ही पूज्य-प्रभु है। अतः जो कोई अपने प्रभु से भेंट करने की लालसा रखता हो उसे चाहिए कि नेक कर्म करे और बन्दगी में अपने पूज्य-प्रभु के साथ किसी और को शामिल न करे।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-18 कहफ़, आयत-110)

आप (सल्ल॰) के आलोचकों की अनुचित आपत्तियाँ और उनकी आप (सल्ल॰) से चमत्कारों की लगातार माँगों के बारे में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को समझाया जाता है कि इस तरह की बातों में न उलझें और लोगों पर अपने पैग़म्बर होने की हैसियत को स्पष्ट कर दें। क़ुरआन कहता है–

> "ऐ नबी! उनसे कहो : "मैं तुमसे यह नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं। न मैं परोक्ष का ज्ञान रखता हूँ, और न यह कहता हूँ कि मैं फ़रिश्ता हूँ। मैं तो केवल उस प्रकाशना (वह्य) की पैरवी करता हूँ जो मुझपर अवतरित की जाती है। फिर उनसे पूछो कि क्या अंधा और आँखोंवाला दोनों बराबर हो सकते हैं? क्या तुम ग़ौर नहीं करते।"
>
> "और ऐ नबी! तुम उस (प्रकाशना-ज्ञान) के द्वारा से उन लोगों को नसीहत करो जो इस बात का डर रखते हैं कि अपने रब के सामने

कभी इस हाल में पेश किए जाएँगे कि उसके सिवा वहाँ कोई (ऐसा सत्ताधारी) न होगा जो उनका सहयोगी और सहायक हो, या उनकी सिफ़ारिश करे। शायद कि (इस नसीहत से सचेत होकर) वे ईशपरायणता का मार्ग अपना लें।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयतें-50, 51)

न केवल आलोचकों और इस्लाम-दुश्मनों को, बल्कि मुसलमानों को भी यह बात मन में बिठा लेने का आदेश दिया गया है कि आप (सल्ल॰) अल्लाह के पैग़म्बर हैं और आप (सल्ल॰) को भी मृत्यु से छुटकारा नहीं। आप (सल्ल॰) सदैव हमारे साथ नहीं रहेंगे, बल्कि आप (सल्ल॰) का लाया हुआ पैग़ाम रहेगा। आप (सल्ल॰) की पैरवी करनेवालों को इस बात की चेतना दी गई है कि वे उस रास्ते को पकड़े रहें जो नबी (सल्ल॰) ने उन्हें दिखाया। यदि वे ऐसा करेंगे तो उनके लिए हमेशा-हमेशा के लिए इनाम और अच्छा प्रतिफल है। क़ुरआन स्पष्ट शब्दों में उद्घोषणा करता है—

"मुहम्मद इसके सिवा कुछ नहीं कि बस एक रसूल हैं, उनसे पहले और रसूल भी गुज़र चुके हैं, फिर क्या यदि वे मर जाएँ, या उनकी हत्या कर दी जाए तो तुम लोग उल्टे पांव फिर जाओगे! याद रखो! जो उल्टा फिरेगा वह अल्लाह का कुछ नुक़सान न करेगा, अलबत्ता जो अल्लाह के कृतज्ञ बन्दे बनकर रहेंगे उन्हें वह उसका अच्छा फल देगा।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-144)

आदर्श व्यक्तित्व

आप (सल्ल॰) की महानता इस सच्चाई में छुपी हुई है कि अल्लाह के सन्देश को लोगों तक पहुँचाने की आप (सल्ल॰) के समस्त प्रयास मानवीय स्तर पर थे। लोगों को यह विश्वास नहीं होता कि इस भूमि पर कभी ऐसा व्यक्ति भी चलता-फिरता था जो सांसारिक संसाधनों की कमी और दुश्मनों के समस्त हथकंडों के बावजूद एक ऐसी क्रान्ति ले आया जिसने मानव-इतिहास की धारा को सर्वदा के लिए बदल दिया और यह आमूल परिवर्तन केवल तेईस वर्षों की छोटी-सी अवधि में आया।

नबी (सल्ल॰) की महानता का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि ईशदूत के रूप में अपने कठिन दायित्व को निभाने और चुनौतीपूर्ण लक्ष्य को प्राप्त करने में नबी (सल्ल॰) के सारे प्रयत्न पूर्णरूप से मानवीय स्तर पर किए गए।

बड़े-बड़े बुद्धिमान आश्चर्यचकित हो जाते हैं कि कोई व्यक्ति सांसारिक संसाधनों के अभाव, कट्टर विरोध तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के होते हुए भी तेईस (23) वर्ष की छोटी-सी अवधी में ऐसी क्रांति लाने में सक्षम हुआ जिसने मानव-इतिहास के धारे को पूर्णरूप से बदल दिया।

नबी (सल्ल॰) एक ईशदूत, महान समाज-सुधारक, परिपक्व राजनेता, कुशल सेनापति, ईमानदार व्यापारी, आदर्श गृहस्थ तथा करुणामय मार्गदर्शक थे। हम अपने जीवन के हर पहलू के लिए आप (सल्ल॰) की जीवनी से प्रोत्साहन और मार्गदर्शन पा सकते हैं। क़ुरआन बुलावा देता है—

> "वास्तव में तुम लोगों के लिए अल्लाह के रसूल में एक सर्वोच्च आदर्श है, प्रत्येक उस व्यक्ति के लिए जो अल्लाह और क़ियामत के दिन का उम्मीदवार हो और अधिकता से अल्लाह को याद करे।" (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-21)

महत्वपूर्ण बात यह है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के उत्तम आचरण पर चलना और उसका अनुकरण करना हमसे अपेक्षित भी है और हमारे लिए सम्भव भी।

4:2 व्यक्तिगत जीवन

जब हम इतिहास के महापुरुषों की बात करते हैं तो सामान्यतः हम उनके व्यक्तिगत जीवन की अनदेखी कर देते हैं। इसके दो कारण हैं। पहला कारण तो यह है कि उनके निजी जीवन के बारे में हमारी जानकारी सीमित होती है। दूसरा कारण यह है कि उनके व्यक्तिगत जीवन का प्रभाव उनके ऐतिहासिक कारनामों पर नहीं पड़ा।

लेकिन इस सिलसिले में अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का जीवन बिलकुल भिन्न है। आप (सल्ल॰) के ज़ीवन और जीवन के हर पहलू के बारे में हमारे पास पूरा विवरण मौजूद है। इन जानकारियों का माध्यम हदीसशास्त्र, क़ुरआन की व्याख्या, और जीवनी साक्ष्य हैं। इन माध्यमों से नबी (सल्ल॰) की व्यक्तिगत एवं पारिवारिक ज़िन्दगी के बारे में विस्तृत जानकारियाँ हमारे सामने मौजूद हैं, जब हम किसी को अपना आदर्श स्वीकार करते हैं तो वह हमारे लिए उस समय तक आदर्श नहीं हो सकता जब तक कि उसके व्यक्तिगत जीवन के बारे में हमें विस्तार से जानकारी न हो।

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन के बारे में जानकारी के दो स्रोत सबसे अधिक महत्वपूर्ण हो सकते हैं। एक तो उसका जीवन-साथी और दूसरे हर समय साथ रहनेवाला सेवक। इन दोनों स्रोतों से नबी (सल्ल॰) के जीवन के बारे में हमारे पास अत्यधिक जानकारियाँ मौजूद हैं। यद्यपि कई दूसरे स्रोत भी हैं, जिनसे सही-सही जानकारियाँ जीवनी की किताबों में दर्ज हैं; लेकिन ये दोनों स्रोत अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं और इन दोनों स्रोतों से नबी (सल्ल॰) के बारे में हमें महत्वपूर्ण जानकारियाँ मिलती हैं।

उल्लेखनीय बात यह है कि एक आदमी चाहे तो पूरे संसार से अपना वास्तविक चरित्र छुपा ले, लेकिन वह अपनी पत्नी से ऐसा नहीं कर सकता

है। वह बात याद रखने की है जो हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने उस समय आप (सल्ल॰) के बारे में कही जब आप (सल्ल॰) के पास पहली बार हज़रत जिबरील (अलैहि॰) वह्य (प्रकाशना) लेकर आए। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने कहा : "अल्लाह की क़सम! अल्लाह आप को कभी बेकार नहीं जाने देगा। आप अपने सगे-सम्बन्धियों एवं परिजनों से अच्छे सम्बंध रखते हैं, ग़रीबों का ख़्याल रखते हैं, मेहमानों की दिल खोलकर ख़ातिरदारी करते हैं और ज़रूरतमन्दों की मदद करते हैं।

स्पष्ट रहे कि यहाँ हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने आपकी इबादतों या सच्चे होने का उल्लेख नहीं किया है, बल्कि आपके व्यवहार और आचरण का उदाहरण दिया है।

दूसरी घटना ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) की है। ये हज़रत ख़दीजा (सल्ल॰) के ग़ुलाम थे, जिनको उन्होंने नबी (सल्ल॰) को भेंट में दिया था। ये क़बीला कल्ब के हारिसा-बिन-शुरजील के बेटे थे। आठ साल की आयु में बद्दुओं ने शब-ख़ून (रात में छुपकर किए गए अकस्मात हमले) के दौरान उनको क़ैद कर लिया और फिर उक्काज़ के बाज़ार में उनको बेच दिया। उनको हकीम-बिन-हिज़ाम ने ख़रीदकर अपनी भतीजी हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) को तोहफ़े में दे दिया। आप (सल्ल॰) से शादी के बाद हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने उनको नबी (सल्ल॰) को भेंट कर दिया। जब वे लगभग 16 साल के थे तो उनके पिता और चचा को पता चला कि उनका बेटा ज़ैद, नबी (सल्ल॰) के पास है। वे उनको लेने नबी (सल्ल॰) के पास पहुँचे। उन्होंने कहा कि वे ज़ैद की आज़ादी के लिए कोई भी क़ीमत अदा करने को तैयार हैं।

नबी (सल्ल॰) हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) को बिना किसी क़ीमत के आज़ाद करने के लिए तैयार हो गए। किन्तु शर्त यह थी कि ज़ैद (रज़ि॰) स्वयं अपने परिवारवालों के साथ जाना चाहें।

हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) के पिता और चचा को विश्वास नहीं आया, जब उन्होंने नबी (सल्ल॰) के साथ ठहरने का फ़ैसला किया और घरवालों के साथ जाने से इनकार कर दिया। उसी समय नबी (सल्ल॰) हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) को लेकर ख़ाना-काबा तशरीफ़ ले गए और हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) को अपना मुँह

बोला बेटा बनाने का ऐलान कर दिया। इस घटना से यह स्पष्ट है कि रसूल होने के एलान से पहले भी आप (सल्ल॰) लोगों का किस प्रकार ध्यान रखते थे।

ये दोनों घटनाएँ बताती हैं कि पैग़म्बरी से पहले भी आप (सल्ल॰) का व्यक्तिगत जीवन बिलकुल पवित्र और सराहनीय था।

अब हम आप (सल्ल॰) के परिवार के लोगों पर एक दृष्टि डालते हैं।

हज़रत ख़दीजा-बिन्त-खुवैलिद (रज़ि॰)

हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) से शादी के समय हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की आयु 25 साल थी, जबकि हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) की आयु 40 साल थी और वे विधवा थीं। वे मक्का के एक प्रतिष्ठित परिवार से थीं। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) की पहली शादी अतीक़-बिन-आइज़ के साथ हुई थी। अतीक़ की मृत्यु के बाद हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) की शादी अबू-हाला से हुई उनकी भी मृत्यु हो गई। पहली दो शादियों से उनके दो बच्चे थे, हिन्द और हाला।

नुबूवत (पैग़म्बरी) के दसवें साल 65 साल की आयु में हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) का इन्तिक़ाल हुआ। नबी (सल्ल॰) उन्हें बहुत चाहते थे और आप (सल्ल॰) उनको पूरी ज़िन्दगी कभी भुला न सके। आप (सल्ल॰) हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) की इतनी अधिक तारीफ़ किया करते थे कि हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती थीं कि मैंने नबी (सल्ल॰) की दूसरी किसी पत्नी के लिए इतनी ईर्ष्या महसूस नहीं की जितनी कि ख़दीजा (रज़ि॰) के लिए। यद्यपि कभी उन्होंने हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) को देखा तक नहीं था।

नबी (सल्ल॰) की तमाम सन्तानें, इबराहीम (रज़ि॰) के अलावा, हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) से ही हुईं। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) से आप (सल्ल॰) को चार बेटियाँ और दो बेटे हुए।

हज़रत क़ासिम (रज़ि॰)

हज़रत क़ासिम (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के समस्त बच्चों में सबसे बड़े थे। उनकी मृत्यु केवल दो साल की आयु में हो गई थी। उन्हीं की वजह से नबी (सल्ल॰) को अबुल-क़ासिम भी कहा जाता है।

हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰)

हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) की बेटियों में सबसे बड़ी थीं। उनका जन्म आप (सल्ल॰) की हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) से शादी के पाँचवें साल हुआ था। उनकी शादी उनके ममेरे भाई अबुल-आस-बिन-रबीअ् से हुई थी। जब नबी (सल्ल॰) ने सत्य-धर्म की ओर उनका आह्वान किया तो हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) बिना किसी हिचकिचाहट के और बिना देर लगाए इस्लाम में आ गईं।

उस समय अबुल-आस कहीं सफ़र पर गए हुए थे। सफ़र से वापस आने पर जब उन्हें ज्ञात हुआ तो उन्होंने यह आपत्ति की कि इतना बड़ा निर्णय उनसे विचार-विमर्श के बिना हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) ने कैसे ले लिया। लेकिन उन्होंने ऐसा कोई सख़्त क़दम नहीं उठाया जैसा कि नबी (सल्ल॰) के अन्य दो दामादों ने उठाया था।

अबुल-आस अपने बाप-दादा के धर्म पर ही रहे। बद्र की जंग में उन्होंने मुसलमानों के ख़िलाफ़ जंग में हिस्सा लिया। गिरफ़्तार हुए और क़ैदी बना लिए गए। उनको इस शर्त पर रिहा किया गया कि वे मक्का जाकर हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) को मदीना आने की अनुमति दे देंगे। उन्होंने अपना वादा पूरा किया और हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) को मदीना के लिए रवाना कर दिया।

लेकिन रास्ते में उनके ऊँट पर मक्का के कुछ दुष्टों ने हमला कर दिया, जिससे वे ऊँट से गिर पड़ीं और गम्भीर चोट आई। चोट इतनी ज़्यादा थी कि वे कभी पूरी तरह ठीक नहीं हो पाईं। अबुल-आस (रज़ि॰) सन् 6 हिजरी में ईमान लाए और मदीना हिजरत की। हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) का सन् 8 हिजरी के शुरू में इन्तिक़ाल हो गया।

हज़रत रुक़ैया (रज़ि॰)

हज़रत रुक़ैया (रज़ि॰) का जन्म हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) के जन्म के तीन साल बाद हुआ। उनकी शादी उतबा-बिन-अबू-लहब से हुई थी, लेकिन जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने रसूल होने की उद्घोषणा की तो अबू-लहब आप (सल्ल॰) का सबसे बड़ा और ख़तरनाक शत्रु बन गया। उसने उतबा को आदेश दिया कि वह रुक़ैया (रज़ि॰) को तलाक़ दे दे। बाद में उनका निकाह

हज़रत उसमान (रज़ि॰) से हो गया। ये दोनों हब्शा हिजरत करनेवाले शुरू के लोगों में से थे। ये दोनों आठ साल के बाद नुबूवत (पैग़म्बरी) के बारहवें साल मक्का वापस आ गए। जब मुसलमानों ने मदीना हिजरत करना शुरू किया तो हज़रत उसमान (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) की अनुमति से मदीना चले गए। सन् एक हिजरी में हज़रत रुकैया (रज़ि॰) भी मदीना चली गईं। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि वे बद्र की जंग के मौक़े पर सख़्त बीमार थीं। जब मुस्लिम फ़ौज विजयी होकर मदीना लौटी, उससे पहले ही उनका इन्तिक़ाल हो गया। हज़रत उसमान (रज़ि॰) से उनका एक बेटा अब्दुल्लाह था, जिसका इन्तिक़ाल सन् 4 हिजरी में हो गया।

हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि॰)

हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि॰) का जन्म उस समय हुआ जब नबी (सल्ल॰) की आयु लगभग 36 साल थी। उनकी शादी बचपन में ही अबू-लहब के बेटे उतैबा से हो गई थी। लेकिन रुख़्सती (विदाई) होनी बाक़ी थी। अबू-लहब के कहने पर उतैबा ने उनको तलाक़ दे दी। नबी (सल्ल॰) के परिवार के दूसरे सदस्यों के साथ उन्होंने मदीना हिजरत की। यह सन् 1 हिजरी की घटना है। हज़रत रुक़ैया (रज़ि॰) की मृत्यु के बाद आप (सल्ल॰) ने उम्मे-कुलसुम का निकाह हज़रत उसमान (रज़ि॰) से कर दिया। उनकी मृत्यु अल्पायु में ही सन् 9 हिजरी में हो गई।

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰)

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) की सबसे छोटी बेटी थीं। सन् 2 हिजरी में हज़रत अली (रज़ि॰) से इनका विवाह हुआ। हज़रत अली (रज़ि॰) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) के दो बेटे हज़रत हसन (रज़ि॰) और हज़रत हुसैन (रज़ि॰) थे। नबी (सल्ल॰) के देहावसान के केवल 3 माह बाद ही उनका भी इन्तिक़ाल हो गया।

हज़रत अब्दुल्लाह (रज़ि॰)

हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) से नबी (सल्ल॰) की यह सबसे छोटी सन्तान थी। इनका जन्म आप (सल्ल॰) को नुबूवत मिलने के बाद हुआ। इनको

तैयब और ताहिर के नाम से भी बुलाया जाता है। इनका भी बचपन में ही इन्तिक़ाल हो गया।

जब हज़रत अब्दुल्लाह का इन्तिक़ाल हुआ तो क़ुरैश के लोगों ने आप (सल्ल॰) की हँसी उड़ानी शुरू कर दी कि आप (सल्ल॰) का वंश अब चलने वाला नहीं है। आप (सल्ल॰) को इसका बहुत दुख था। एक वह्य के द्वारा अल्लाह तआला ने आप (सल्ल॰) को दिलासा दिया—

> "(ऐ नबी!) हमने तुम्हें कौसर प्रदान कर दिया। अतः तुम अपने प्रभु ही के लिए नमाज़ पढ़ो और क़ुरबानी करो। तुम्हारा दुश्मन ही जड़ कटा है।" (क़ुरआन, सूरा-108 कौसर, आयतें-1 से 3)

इतिहास से यह सिद्ध है कि नबी (सल्ल॰) के परिजनों ने आप (सल्ल॰) की पैग़म्बरी और सत्य-धर्म के लिए बड़ी-बड़ी परेशानियाँ झेलीं और उनको संघर्ष से गुज़रना पड़ा। किसी भी दूसरे व्यक्ति के लिए दो बेटों का बालावस्था में इन्तिक़ाल और बेटियों का धर्म के लिए तलाक़ हो जाना इतना दुख का कारण बनता कि वह इस महान कार्य से रुक जाता या कम-से-कम दिल छोटा कर बैठता। इन घटनाओं ने नबी (सल्ल॰) को दुखी तो ज़रूर किया, लेकिन आप (सल्ल॰) ने उनको सत्य-धर्म के अपने प्रचार-प्रसार के उत्तरदायित्व के मार्ग में अवरोधक नहीं बनने दिया।

नुबूवत के दसवें साल नबी (सल्ल॰) को दो ज़बरदस्त त्रासदियों का सामना करना पड़ा। उस साल आप (सल्ल॰) ने अपने दो महत्वपूर्ण समर्थकों को खो दिया। इसे ग़म का साल भी कहा जाता है, क्योंकि इसी साल आप (सल्ल॰) के चचा अबू-तालिब और आप (सल्ल॰) की पत्नी हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) का देहावसान हुआ। अबू-तालिब क़ुरैश के सामने आप (सल्ल॰) के लिए एक ढाल के समान थे। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) आप (सल्ल॰) की एक बड़ी भावनात्मक सहारा थीं। उन्होंने जिस तरह पूरे घर की ज़िम्मेदारी अपने कंधों पर ले रखी थी उसका उदाहरण मिलना मुश्किल है।

उनके इन्तिक़ाल के बाद आप (सल्ल॰) को घर की देखभाल और बच्चियों के पालन-पोषण के लिए किसी सहारे की आवश्यकता महसूस हुई तो हज़रत

उसमान-बिन-मज़ऊन (रज़ि॰) की पत्नी ख़ौला (रज़ि॰) ने आप (सल्ल॰) के सामने हज़रत सौदा-बिन्त-ज़मआ (रज़ि॰) और हज़रत आइशा-बिन्त-अबू-बक्र (रज़ि॰) का रिश्ता पेश किया।

हज़रत सौदा-बिन्त-ज़मआ (रज़ि॰)

हज़रत सौदा-बिन्त-ज़मआ (रज़ि॰) शुरू में इस्लाम क़बूल करनेवालों में से थीं। उनके पति सकरान-बिन-अम्र (रज़ि॰) ने भी इस्लाम क़बूल कर लिया था और दोनों ने हब्शा हिजरत की। हब्शा से वापसी पर सकरान (रज़ि॰) की मृत्यु हो गई। जब ख़ौला (रज़ि॰) ने उनसे नबी (सल्ल॰) के रिश्ते के लिए कहा तो वे तुरन्त तैयार हो गईं। शव्वाल 10 नबवी को ही उनका विवाह नबी (सल्ल॰) से हो गया। वे मेहनती, समझदार और अच्छे आचार-विचार की मालिक थीं। हज़रत सौदा (रज़ि॰) ने घरेलू ज़िम्मेदारियाँ बेहतरीन अन्दाज़ से निभाईं। उनकी नबी (सल्ल॰) से कोई सन्तान नहीं हुई। पहली शादी से उनको एक बेटा था, जिसका नाम अब्दुर्रहमान (रज़ि॰) था। सन् 17 हिजरी में जलूला की जंग में अब्दुर्रहमान (रज़ि॰) शहीद हो गए। हज़रत सौदा (रज़ि॰) का इंतिक़ाल सन् 22 हिजरी में हुआ।

हज़रत आइशा-बिन्त-अबू-बक्र (रज़ि॰)

हज़रत आइशा (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के सबसे प्रिय दोस्त हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) की पुत्री हैं। हज़रत ख़ौला (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) से रिश्ते के लिए हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) और उनकी पत्नी उम्मे-रुम्मान (रज़ि॰) से बात की। हज़रत आइशा (रज़ि॰) का हाथ मुतइम-बिन-अदी ने अपने बेटे के लिए माँग रखा था। अबू-बक्र (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) को उत्तर देने से पहले मुतइम-बिन-अदी से बात करना उचित समझा। जब हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) ने उससे रिश्ते के बारे में पूछा तो उसने कहा कि क्योंकि हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) अब अपने पैतृक धर्म पर क़ायम नहीं रहे तो यह रिश्ता भी ख़त्म हो गया।

यह मालूम होने के बाद हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) के रिश्ते को स्वीकार कर लिया। शव्वाल सन् 10 नबवी में हज़रत आइशा (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के निकाह में आ गईं, लेकिन उनकी रुख़सती (विदाई)

सन् 2 हिजरी में मदीना आने के बाद हुई।

हज़रत आइशा (रज़ि॰) के बारे में इतिहास में पर्याप्त विवरण मौजूद हैं। वे एक विदुषी और विवेकशील महिला थीं और इन्होंने नबी (सल्ल॰) से धर्म को अच्छी तरह समझा और सीखा था। आरम्भिक मुस्लिम विद्वानों में इनका स्थान बहुत ऊँचा है।

हज़रत आइशा (सल्ल॰) से लगभग 2210 हदीसें उद्धृत हैं। हदीस बयान करनेवालों में इनका दर्जा बहुत ऊँचा है। ये पाँचवीं सबसे अधिक हदीस बयान करनेवाली हस्ती हैं। महिलाओं में इस दृष्टि से इनका स्थान सबसे ऊपर है। इनकी मृत्यु तक वरिष्ठ मुसलमान हदीस सीखने और विभिन्न विषयों पर इनसे धार्मिक प्रकरणों का हल मालूम करने आते थे। फ़िक़्ह (इस्लामी विधिशास्त्र), हदीस, अरब का इतिहास, शायरी और अरबी साहित्य पर इनकी गहरी निगाह थी और इनको उन तमाम विषयों का माहिर समझा जाता था। हज़रत आइशा (रज़ि॰) का इंतिक़ाल सन् 57 हिजरी में हुआ।

हज़रत हफ़सा-बिन्त-उमर (रज़ि॰)

हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) हज़रत उमर (रज़ि॰) की बेटी थीं। इनकी शादी ख़ुनैस-बिन-हुज़ाफ़ा (रज़ि॰) से हुई थी। हज़रत ख़ुनैस (रज़ि॰) ने बहुत ही शुरुआती दौर में इस्लाम क़बूल कर लिया था। उन्होंने हब्शा हिजरत की और वहाँ से मदीना वापस आए। वे उन भाग्यशाली सहाबियों में से एक थे जिन्हें बद्र की जंग में भाग लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सन् 2 हिजरी में हज़रत ख़ुनैस (रज़ि॰) का इन्तिक़ाल हो गया।

हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) का नबी (सल्ल॰) से निकाह सन् 3 हिजरी में शाबान के महीने में हुआ।

हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) बहुत ऊँचे दर्जे की महिला थीं। लेकिन सबसे बड़ा सम्मान जो इन्हें प्राप्त हुआ वह था क़ुरआन के पहले संस्करण का इनकी सुरक्षा में रखा जाना। पूर्ण क़ुरआन का पहला संस्करण हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के ख़िलाफ़त-काल में तैयार करवाया गया और हज़रत उमर (रज़ि॰) के ख़िलाफ़त के ज़माने में उसको हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) की निगरानी में दे

दिया गया। इसी संस्करण को बाद में हज़रत उसमान (रज़ि०) के ख़िलाफ़त के काल में नक़ल करके पूरी इस्लामी रियासत में भेजा गया। क़ुरआन, जिसका हम प्रतिदिन पाठ करते हैं, क़ुरआन के उसी संस्करण की नक़ल है।

उम्मुल-मोमिनीन हज़रत हफ़सा (रज़ि०) एक शिक्षित और प्रबुद्ध महिला थीं। उनकी ईशपरायणता की यह स्थिति थी कि वे अकसर रोज़े रखतीं और रात में अपने प्रभु से प्राथनाएँ करतीं थीं। इनका इन्तिक़ाल जुमादल-ऊला सन् 45 हिजरी में 63 वर्ष क़ी आयु में हुआ।

हज़रत ज़ैनब-बिन्त-ख़ुज़ैमा (रज़ि०)

यह सबसे पहले इस्लाम क़बूल करनेवालों में से थीं। इनका विवाह अब्दुल्लाह-बिन-हारिस (रज़ि०) से हुआ था। अब्दुल्लाह (रज़ि०) जंगे-बद्र में शहीद हो गए थे। हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के निकाह में रमज़ान 3 हिजरी में आईं। लेकिन केवल आठ महीने बाद ही रबी-उस्सानी सन् 4 हिजरी में इस दुनिया से चल बसीं। इनको अल्लाह की राह में ख़र्च करने और ग़रीबों एवं मिसकीनों की मदद करने के कारण उम्मुल-मसाकीन अर्थात् ग़रीबों की माँ के नाम से भी जाना जाता था।

हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि०)

हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि०) का वास्तविक नाम हिन्द था। वे अबू-उमैया की बेटी थीं। यह पहले अब्दुल्ल्लाह-बिन-अब्दुल-असद (रज़ि०) के निकाह में थीं। अब्दुल्लाह (रज़ि०) को अबू-सलमा (रज़ि०) के नाम से भी जाना जाता था। ये दोनों हब्शा हिजरत करनेवालों में शामिल थे। हब्शा से मक्का वापस आकर दोनों ने फिर मदीना हिजरत की।

हज़रत अबू-सलमा (रज़ि०) उहुद की जंग में बुरी तरह घायल हो गए थे और उन्हीं ज़ख़्मों की वजह से सन् 4 हिजरी में उनका इन्तिक़ाल हो गया। इन दोनों के दो बेटे सलमा (रज़ि०) और उमर (रज़ि०) और दो बेटियाँ ज़ारा (रज़ि०) और ज़ैनब (रज़ि०) थीं। ज़ैनब (रज़ि०) का जन्म तो उनके पिता की मृत्यु के कुछ दिनों बाद हुआ।

उम्मे-सलमा (रज़ि०) और अबू-सलमा (रज़ि०) दोनों बेहतरीन मुसलमान

थे और दोनों की एक-दूसरे से मुहब्बत की मिसाल दी जाती थी। अपनी बीमारी के दौरान हज़रत अबू-सलमा (रज़ि॰) ने अपनी प्रिय पत्नी से कहा कि वह दुआ करें कि मेरे इन्तिक़ाल के बाद उनको बेहतर बदला मिले।

उनकी मृत्यु के बाद हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) को आश्चर्य हुआ कि उनके पति से अच्छा व्यक्ति और बेहतर दूसरा बदल कौन हो सकता है, लेकिन अपने पति की हिदायत के मुताबिक़ दुआ करती रहीं। कुछ दिनों के बाद उनके पास नबी (सल्ल॰) से निकाह का सन्देश आया। शव्वाल 4 हिजरी में उम्मे-सलमा (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के निकाह में आ गईं।

हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) बहुत ही बुद्धिमान और समझदार महिला थीं। सुलह-हुदैबिया के दौरान उनके सुझाव ने नबी (सल्ल॰) की बेहतरीन मदद की। यह वह अवसर था जब सहाबियों (रज़ि॰) ने आप (सल्ल॰) के आदेश का पालन नहीं किया कि वे लोग क़ुरबानी करें और सिर मुंडवाएँ। इस घटना का उल्लेख हम अध्याय 3.7 में कर चुके हैं।

आप (सल्ल॰) इस परेशानी में हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) के पास आए और उनसे इसका उल्लेख किया। उम्मे-सलमा (रज़ि॰) ने आप (सल्ल॰) को सुझाव दिया कि आप (सल्ल॰) स्वयं अपने जानवर क़ुरबान करें और दूसरों से कुछ न कहें। आप (सल्ल॰) ने जब उनका सुझाव मानते हुए अपने जानवरों को क़ुरबान किया तो सभी सहाबी भी ख़ामोशी से उठ खड़े हुए और इस काम को पूरा किया।

हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) का इन्तिक़ाल सन् 63 हिजरी में हुआ। उम्महातुल-मोमिनीन में दुनिया से सबसे आख़िर में जानेवाली हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि॰) ही थीं।

हज़रत ज़ैनब-बिन्त-जहूश (रज़ि॰)

ये नबी (सल्ल॰) की फूफीज़ाद बहन थीं। उनकी शादी नबी (सल्ल॰) के आज़ाद किए हुए ग़ुलाम और मुंह बोले बेटे हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) से हुई थी। इस विवाह के लिए वे नबी (सल्ल॰) के आग्रह करने पर तैयार हुई थीं, किन्तु यह विवाह आपसी ताल-मेल न होने के कारण चल नहीं सका

और उनके बीच मतभेद बढ़ते गए। उनके बीच समझौता कराने की आप (सल्ल॰) की सारी कोशिशें अप्रभावी रहीं। अन्ततः सन् 5 हिजरी में हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि॰) ने हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) को तलाक़ दे दी। हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) के इस घाव पर मरहम लगाने का एक ही तरीक़ा था और वह यह था कि उनको नबी (सल्ल॰) के निकाह में दे दिया जाए। लेकिन आप (सल्ल॰) एक बड़ी उलझन में थे। आप (सल्ल॰) लोगों की आपत्तियाँ सोच कर परेशान थे कि लोग कहेंगे कि आप (सल्ल॰) ने अपने मुंह बोले बेटे की तलाक़शुदा पत्नी से शादी कर ली। लेकिन ग़लत चली आ रही इस रस्म को तोड़ना भी ज़रूरी था। अल्लाह की ओर से आई इस वह्य ने समस्या का समाधान कर दिया। आयत अवतरित हुई—

"ऐ नबी! याद करो वह अवसर जब तुम उस व्यक्ति (हज़रत ज़ैद रज़ि॰) से कह रहे थे कि जिस पर अल्लाह ने और तुमने परोपकार किया था कि अपनी पत्नी को न छोड़ और अल्लाह से डर। उस समय तुम अपने दिल में यह बात छुपाए हुए थे, जिसे अल्लाह खोलना चाहता था। तुम लोगों से डर रहे थे, हालाँकि अल्लाह इसका अधिक हक़दार है कि तुम उससे डरो। फिर जब ज़ैद (रज़ि॰) उससे अपना सम्बन्ध समाप्त कर लिया, तो हमने उस (तलाक़शुदा महिला) का तुमसे निकाह कर दिया, ताकि मोमिनों पर अपने मुँह बोले बेटों की पत्नियों के विषयों में कोई तंगी न रहे, जबकि वे उनसे अपनी आवश्यकता पूरी कर चुके हों और अल्लाह का आदेश तो अमल में आना ही चाहिए था।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-37)

बाद में हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) इस बात पर गर्व किया करती थीं कि उनका रिश्ता आसमानों में तय पाया। हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) ऊँचे ख़ानदान और ऊँचे चरित्र के लिए जानी जाती थीं। ग़रीबों और मिसकीनों के लिए इनका हाथ हमेशा खुला रहता था। नबी (सल्ल॰) ने अपने इन्तिक़ाल से पहले यह कहा था कि उनकी पत्नियों में सबसे पहले वह पत्नी उनसे मिलेंगी जिनके हाथ सबसे लम्बे हैं। आप (सल्ल॰) के चले जाने के बाद नबी (सल्ल॰)

की पत्नियों ने अपने-अपने हाथ नापे। लेकिन जब हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) की मृत्यु सबसे पहले हुई तो "लम्बे हाथ" का मतलब स्पष्ट हुआ।

हज़रत जुवैरिया-बिन्त-हारिस (रज़ि॰)

हज़रत जुवैरिया, हारिस की बेटी थीं, जो बनू-मुस्तलिक़ क़बीले का सरदार था। इनकी पहली शादी मुसाफ़ह-बिन-सफ़वान से हुई थी। वह मुरैसीअ् की जंग में मारा गया। जुवैरिया (रज़ि॰) उन 600 लोगों में शामिल थीं जिन्हें बन्दी बना लिया गया था।

उस युद्ध के बाद हारिस (रज़ि॰) ने इस्लाम क़बूल कर लिया और अपनी बेटी की रिहाई के बदले एक बड़ी रक़म की पेशकश की थी। आप (सल्ल॰) ने जुवैरिया को बिना कोई रक़म लिए आज़ाद कर दिया। सौभाग्य से उनका रिश्ता नबी (सल्ल॰) से हो गया। जब जुवैरिया (रज़ि॰) की शादी नबी (सल्ल॰) से हो गई तो वे मुसलमान जिनके पास बनू-मुस्तलिक़ क़बीला के क़ैदी थे, उन्होंने उन सभी क़ैदियों को रिहा कर दिया। इस प्रकार हज़रत जुवैरिया (रज़ि॰) 600 लोगों की रिहाई की वजह बनीं। हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती हैं कि मुझे नहीं पता कि इतिहास में कोई दूसरी औरत जुवैरिया (रज़ि॰) से ज़्यादा अपनी क़ौम के लिए फ़ायदेमन्द रही हो। इनका इन्तिक़ाल 55 या 56 हिजरी में 65 साल की उम्र में हुआ।

हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰)

हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) क़ुरैश के सुप्रसिद्ध सरदार अबू-सुफ़ियान की बेटी थीं। इनका अस्ल नाम रमला था। इनका निकाह उबैदुल्लाह-बिन-जहश (रज़ि॰) से हुआ था। दोनों पति-पत्नी बिलकुल शुरुआती दौर में इस्लाम क़बूल करनेवालों में शामिल हैं। हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) हब्शा की ओर हिजरत करनेवाले दूसरे क़ाफ़िले में शामिल थीं। लेकिन उबैदुल्लाह हब्शा पहुँचकर ईसाई हो गया और उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) को तलाक़ दे दी। उबैदुल्लाह ने उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) को भी ईसाई बनाने की कोशिश की, लेकिन सफल न हुआ। कुछ दिनों बाद उबैदुल्लाह की मृत्यु हो गई।

अब उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) हब्शा में अकेली थीं और उनके साथ उनकी

बच्ची हबीबा थी। यह ख़बर नबी (सल्ल॰) को पहुँची तो आप (सल्ल॰) ने हब्शा के बादशाह के ज़रिए से उनके लिए रिश्ता भेजा। उनको यह ख़बर सुनकर इतनी ख़ुशी हुई कि उन्होंने सारा ज़ेवर जो वे पहने हुई थीं, उतारकर उस औरत को दे दिया जो यह ख़बर लेकर आई थी। निकाह हब्शा में हुआ और फिर वह मदीना के लिए रवाना हो गईं। हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) नबी (सल्ल॰) के निकाह में सन् 7 हिजरी में आईं।

उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) एक मज़बूत और साहसी महिला थीं। हबशा में ज़बरदस्त परेशानियों और आज़माइशों के उपरान्त उनके पाँव नहीं लड़खड़ाए। विशेष रूप से उस समय उन्होंने नबी (सल्ल॰) का अपने जीवन में महत्व स्पष्ट कर दिया जब उन्होंने अपने पिता अबू-सुफ़ियान को नबी (सल्ल॰) के बिस्तर पर बैठने से साफ़ मना कर दिया।

(देखिए, अध्याय 3.11)

हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) का इंतिक़ाल सन् 44 हिजरी में हुआ।

हज़रत सफ़िया-बिन्त-हुयय (रज़ि॰)

हज़रत सफ़िया (रज़ि॰) का अस्ल नाम ज़ैनब था। यह मशहूर यहूदी सरदार हुयय-बिन-अख़तब की बेटी थीं। हुयय, बनू-नज़ीर का सरदार था और हज़रत हारून (अलैहि॰) की नस्ल से था। हज़रत सफ़िया (रज़ि॰) की पहली शादी सलाम-बिन-मिशकम अल-क़ुरैज़ी से हुई थी। जब उससे तलाक़ हो गई तो फिर उन्होंने किनाना-बिन-अबी-अल-हुक़ैक़ से निकाह कर लिया।

किनाना ख़ैबर की जंग में मारा गया और सफ़िया (रज़ि॰) को क़ैद कर लिया गया। ग़नीमत के वितरण में ये हज़रत दिह्या कलबी के संरक्षण में आईं। कुछ सहाबियों का विचार था कि यदि बनू-नज़ीर और बनू-क़ुरैज़ा उनको दासी के रूप में देखेंगे तो उनपर ग़लत प्रभाव पड़ेगा। नबी (सल्ल॰) ने दिह्या कलबी (रज़ि॰) को एक रक़म देकर उनको आज़ाद करने को कहा।

नबी (सल्ल॰) ने हज़रत सफ़िया (रज़ि॰) से कहा : "तुम स्वतन्त्र हो, यदि चाहो तो अपने क़बीले में वापस चली जाओ या मेरे दाम्पत्य में आ जाओ। उन्होंने आप (सल्ल॰) के दाम्पत्य में आना अपना अधिक सम्मान

समझा। यह घटना सफ़र महीना सन् 7 हिजरी की है। बाद में उन्होंने नबी (सल्ल०) से कहा कि उन्होंने एक सपने में इस रिश्ते का संकेत पाया था। हज़रत सफ़िया (रज़ि०) बहुत ही धैर्यवान और कृतज्ञता प्रकट करनेवाली महिला थीं। उनमें सुपरामर्श और विषय की समझ कूट-कूट कर भरी हुई थी। ज्ञान और विद्या में उनका जवाब नहीं था। सन् 50 हिजरी में 60 वर्ष की आयु में इनका इन्तिक़ाल हुआ।

हज़रत मैमूना-बिन्त-हारिस (रज़ि०)

ये हारिस-बिन-हज़न की बेटी थीं और वास्तविक नाम बर्रा था। इस्लाम क़बूल करने के बाद इनका नाम मैमूना रखा गया। इनकी पहली शादी मसऊद-बिन-अम्र से हुई थी, लेकिन उसने इन्हें तलाक़ दे दी। दूसरी शादी अबू रहम-बिन-अब्दुल-उज़्ज़ा से हुई जिसका कुछ दिनों बाद इन्तिक़ाल हो गया। सन् 7 हिजरी में इनकी शादी नबी (सल्ल०) से हुई। यह नबी (सल्ल०) की आख़िरी शादी थी। उसके बाद आपने कोई निकाह नहीं किया। सन् 51 हिजरी में 71 वर्ष की आयु में इनका इन्तिक़ाल हुआ।

हज़रत मारिया क़िब्तिया (रज़ि०)

हज़रत मारिया क़िब्तिया (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के घर में इकलौती ग़ैर-अरब महिला थीं। इनको मिस्र के बादशाह मक़ूक़स ने आप (सल्ल०) को भेंट किया था। यह हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) के बाद पहली महिला थीं जिनसे नबी (सल्ल०) की कोई सन्तान हुई। हज़रत मारिया क़िब्तिया (रज़ि०) सन् 6 हिजरी में आप (सल्ल०) के पास आईं। ज़िलहिज्जा 8 हिजरी में उन्होंने एक बेटे इबराहीम को जन्म दिया। इबराहीम का 18 महीने के बाद इन्तिक़ाल हो गया। यह नबी (सल्ल०) के लिए बहुत ही गहरा सदमा था। इस अवसर पर आप (सल्ल०) ने दुख प्रकट करते हुए कहा : "हमारी आँखें भीगी हुई हैं और दिल टूटे हुए हैं। लेकिन इस हालत में भी हम ऐसी कोई बात मुँह से नहीं निकालेंगे जो अल्लाह तआला को अप्रिय हो। ऐ इबराहीम! हम तुम्हारे जाने से दुखी हैं, लेकिन हमारे मुँह से वही निकलेगा जिसका अल्लाह ने हमें आदेश दिया है। हम अल्लाह के हैं और उसी की ओर हमें लौट कर जाना है।"

इबराहीम के इन्तिक़ाल के दिन सूर्यग्रहण हो गया। यह देखकर लोगों ने कहना आरम्भ कर दिया कि इबराहीम की मृत्यु पर सूरज भी दुखी है और यह कि सूर्यग्रहण का कारण इबराहीम की मौत है।

जब नबी (सल्ल॰) को इसका पता चला तो आप (सल्ल॰) ने एक ख़ुतबा (प्रवचन) दिया और उसमें इस बात का खण्डन किया। आप (सल्ल॰) ने कहा : "सूरज और चाँद अल्लाह की निशानियों में से हैं। उनपर किसी की मृत्यु से ग्रहण नहीं लगता और न ही किसी के जन्म लेने से। जब भी सूर्यग्रहण हो अल्लाह को याद करो और उसकी इबादत में लग जाओ।"

परिजनों से नबी (सल्ल॰) का व्यवहार

नबी (सल्ल॰) का पारिवारिक जीवन यह बताता है कि आप (सल्ल॰) बाहरवालों से भी स्नेह से पेश आते थे और घरवालों से भी। आप (सल्ल॰) के व्यवहार में कोई अन्तर्विरोध नहीं था। आप (सल्ल॰) मानवता के लिए एक बेहतरीन आदर्श हैं।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उम्महातुल-मोमिनीन (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) से जो शिक्षा और ज्ञान प्राप्त किया वह एक सहज व सामान्य घरेलू वातावरण में किया। पत्नी अपने पति से अपनी नज़दीकी के कारण न केवल दिन-प्रति-दिन के साधारण विषयों पर बात कर सकती है, वह उन संवेदनशील और गुप्त विषयों पर भी बात कर सकती है जिनपर बात करने से दूसरे मर्द या औरत झिझकते हैं।

इसी लिए उम्महातुल-मोमिनीन (रज़ि॰) हमको व्यक्तिगत जीवन और सदाचार के बारे में आप (सल्ल॰) के आदेशों की बहूमुल्य जानकारियाँ उपलब्ध कराती हैं।

नबी (सल्ल॰) की धर्म पत्नियों के अनुसार आप (सल्ल॰) घरेलू कामों में उनकी मदद करते और हाथ बटाते। आपके कपड़े फट जाते तो ख़ुद सी लेते और जूते ख़ुद टाँक लेते, बच्चों के साथ खेलते और हमेशा सुस्वभाव से पेश आते। यह केवल पाक पत्नियों और परिवार के लोगों के साथ ही नहीं था, नौकरों से भी आप (सल्ल॰) का व्यवहार ऐसा ही था।

हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं : "मैंने आप (सल्ल॰) की दस वर्ष तक सेवा की। इन दस वर्षों में न तो आप (सल्ल॰) ने मुझे बुरा भला कहा और न ही कभी डाँटा।"

हमें उम्महातुल-मोमिनीन से यह भी पता चलता है कि नबी (सल्ल॰) रात में घंटों इबादत करते, अल्लाह से प्राथनाएँ करते और पवित्र क़ुरआन का पाठ करते। कभी-कभी तो आप (सल्ल॰) का सजदा इतना लम्बा हो जाता कि परिजन आशंकित हो जाते। एक बार आइशा (रज़ि॰) ने पूछा—

"अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त ने तो आप (सल्ल॰) को पहले ही क्षमा कर दिया है तो आप (सल्ल॰) अपने ऊपर इतना बोझ क्यों डालते हैं?"

आप (सल्ल॰) ने जवाब दिया : "क्या फिर मैं उसका सबसे अधिक कृतज्ञ और शुक्रगुज़ार (आभारी) बन्दा न बन जाऊँ।"

आप (सल्ल॰) की ज़िन्दगी का एक महत्वपूर्ण पहलू सादगी है। न केवल आप (सल्ल॰) बल्कि आप (सल्ल॰) की पाक पत्नियाँ भी सादगी, त्याग और संतोष का मूर्तरूप थीं। मदीना हिजरत के बाद शुरू में तो कहा जा सकता है कि मोटा-झोटा खाना आर्थिक तंगी के कारण हो सकता था। लेकिन बाद में, विशेषकर तबूक की जंग के बाद तो मुसलमानों की आर्थिक स्थिति पहले से बहुत अच्छी हो गई थी और मुसलमानों में खुशहाली आ गई थी। इस खुशहाली की वजह से मदीना के ग़रीब मुसलमानों की स्थिति में भी स्पष्ट अन्तर आ गया था।

लेकिन इस आर्थिक सुधार का नबी (सल्ल॰) के घर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। हज़रत आइशा (रज़ि॰) के एक वाक्य से आप (सल्ल॰) के घर के हालात पर रौशनी पड़ती है। हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती हैं : "मुझे याद नहीं कि आप (सल्ल॰) के जीवन में हमने तीन दिनों तक लगातार चूल्हा जलाया हो।"

नबी (सल्ल॰) के देहानवास के बाद भी आप (सल्ल॰) की पवित्र पत्नियों ने उसी हालात में अपना जीवन बिताना बेहतर समझा। हज़रत उमर (रज़ि॰) के ख़िलाफ़त के दौर में जब पवित्र पत्नियों (रज़ि॰) के लिए अच्छे-ख़ासे

वज़ीफ़े की रक़म तय हो गई, प्रायः उम्महातुल-मोमिनीन (रज़ि॰) ये सारी रक़म सदक़ा (दान) कर देतीं।

एक बार हज़रत उमर (रज़ि॰) ने हज़रत आइशा (रज़ि॰) की सेवा में एक बड़ी रक़म भेंट के रूप में भेजी। यह रक़म सुबह में उनको मिली और शाम तक सारी रक़म सदक़े में दे दी गई। उस दिन हज़रत आइशा (रज़ि॰) रोज़े (उपवास) से थीं। जब शाम में उन्होंने सेविका से इफ़्तार (उपवास समापन) में खाने के लिए कुछ लाने को कहा तो उसने बताया कि घर में खाने के लिए कुछ भी नहीं है। हज़रत आइशा (रज़ि॰) ने उससे कहा : "यदि तुमने मुझे बताया होता तो मैंने कुछ रोक लिया होता।" हज़रत आइशा (रज़ि॰) ने केवल पानी से रोज़ा इफ़्तार किया।

नबी (सल्ल॰) के जीवन से एक महत्वपूर्ण शिक्षा मिलती है कि सादगी और विशालहृदयता ही वास्तविक संपत्ति है।

4:3 राष्ट्र के व्यवस्थापक एवं नेता

नबी (सल्ल॰) ने मदीना के कल्याणकारी राज्य को इस्लाम की मज़बूत बुनियादों पर स्थापित किया। केवल आठ साल की छोट-सी अवधि में आप (सल्ल॰) ने अरब के झगड़ालू और बद्दू क़बीलों को इस्लाम में दाख़िल करके उनको शक्तिशाली एवं संगठित कर दिया। लेकिन ऐसा करना आप (सल्ल॰) के लिए कदापि सम्भव न होता यदि आप (सल्ल॰) को अल्लाह तआला की सहायता प्राप्त न होती।

क़ुरआन ने इस सम्पूर्ण परिवर्तन का उल्लेख निम्नलिखित शब्दों में किया है—

"सब मिलकर अल्लाह की रस्सी को मज़बूत पकड़ लो और विभेद में न पड़ो। अल्लाह के उस उपकार को याद रखो जो उसने तुम पर किया है। तुम एक-दूसरे के शत्रु थे, उसने तुम्हारे दिल जोड़ दिए और उसकी कृपा एवं करुणा से तुम भाई-भाई बन गए। तुम आग से भरे हुए एक गढ़े के किनारे खड़े थे, अल्लाह ने तुमको उससे बचा लिया। इस प्रकार अल्लाह अपनी निशानियाँ तुम्हारे सामने स्पष्ट करता है, शायद कि इन संकेतों से तुम्हें अपनी सफलता का सीधा रास्ता दिखाई दे जाए।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-103)

इस्लामी समाज की दो धरोहर हैं—

(1) एकेश्वरवाद (तौहीद) और अल्लाह (ईश्वर) की पूर्ण सत्ता

(2) मानव-समानता

क़ुरआन अल्लाह तआला की पूर्ण सत्ता के बारे में कहता है—

"अत्यन्त श्रेष्ठ और महान् है वह जिसके हाथ में (सृष्टि का) साम्राज्य है और वह हर चीज़ की सामर्थ्य रखता है। जिसने मृत्यु और

जीवन को आविष्कृत किया, ताकि तुम लोगों का परीक्षण करे कि तुममें से कौन उत्तम कर्म करनेवाला है, और वह ज़बरदस्त भी है और क्षमा करनेवाला भी।"

(क़ुरआन, सूरा-67 मुल्क, आयतें-1, 2)

इन दोनों जहानों को पैदा करनेवाले ने मनुष्य को सारे जीवों से श्रेष्ठ बनाया है और उसको दुनिया में अपना ख़लीफ़ा (अधिनायक) नियुक्त किया है। अल्लाह तआला कहता है—

"वही है जिसने तुमको पृथ्वी पर अधिनायक बनाया, और तुममें से कुछ को कुछ के मुक़ाबले में अधिक ऊँचे दर्जे दिए, ताकि जो कुछ तुमको दिया है उसमें तुम्हारी परीक्षा ले। निस्सन्देह तुम्हारा रब सज़ा देने में भी बहुत तेज़ है और बहुत क्षमा करनेवाला और कृपा करनेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-165)

यह बात क़ुरआन से स्पष्ट है कि पद ग्रहण का मतलब सत्ता नहीं है, बल्कि यह ज़िम्मेदारियों का भारी बोझ है। जितना बड़ा और महत्वपूर्ण पद, उतना ही अधिक उत्तरदायित्व और जवाबदेही। व्यक्तिगत स्तर पर सब मनुष्य बराबर हैं। जन्म, रंग, नस्ल और राष्ट्र की बुनियादों पर कोई छोटा बड़ा नहीं। इस बात को नबी (सल्ल॰) ने अपने अन्तिम ख़ुतबे में स्पष्टतः उल्लेख कर दिया। आप (सल्ल॰) ने कहा—

"ऐ लोगो! अल्लाह का फ़रमान है कि हे मानव! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुमको ख़ानदान और क़ौमों में बाँटा, ताकि तुम एक-दूसरे को जान सको। अल्लाह के निकट तुममें सबसे इज़्ज़तवाला वह है जो तुम में सबसे ज़्यादा परहेज़गार (ईशपरायण) है। किसी अरबी को किसी अजमी (ग़ैर-अरबी) पर और किसी अजमी को किसी अरबी पर कोई वरीयता हासिल नहीं है, न ही किसी गोरे को किसी काले पर और न ही किसी काले को किसी गोरे पर प्राथमिकता प्राप्त है। प्राथमिकता का आधार केवल और केवल ईशपरायणता है। पूरी मानवता आदम की सन्तान है और आदम मिट्टी से पैदा किए गए थे।"

ये वे मज़बूत बुनियादें हैं जिन्होंने इस्लामी राज्य को दुनिया की बेहतरीन कल्याणकारी साम्राज्य की शक्ल दे दी। हम केवल आश्चर्य ही प्रकट कर सकते हैं जब हम उस इस्लामी राज्य का अध्ययन करते हैं।

शान्ति एवं सुरक्षा

एक कल्याणकारी राज्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें प्रत्येक नागरिक की सुरक्षा एवं शान्ति सुनिश्चित होती है।

आप (सल्ल॰) को पैग़म्बरी मिलने के बाद एक बार मक्का में एक सहाबी हज़रत ख़ब्बाब-बिन-अरत (रज़ि॰) ने मक्कावालों की ओर से होनेवाले अत्याचार की आप (सल्ल॰) से शिकायत की। आप (सल्ल॰) ने कहा—

> "अल्लाह निस्सन्देह इस दीन को पूरा करेगा और एक अवसर ऐसा आएगा कि सनआ से हज़्रमौत तक मुसाफ़िर बिना किसी भय के सफ़र करेंगे। उनको अल्लाह के अलावा किसी और का कदापि कोई भय न होगा।"

आप (सल्ल॰) का कथन जल्द ही सच साबित हुआ और पूरे अरबद्वीप में आप (सल्ल॰) की ज़िन्दगी में ही शान्ति और सुरक्षा स्थापित हो गई।

न्याय

न्याय के सम्बन्ध में अल्लाह तआला फ़रमाता है—

> "ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! न्याय के ध्वजावाहक और अल्लाह के वास्ते गवाह बनो, यद्यपि तुम्हारे न्याय और तुम्हारी गवाही की चोट स्वयं तुम्हारे अपने व्यक्तित्व, या तुम्हारे माता-पिता और रिश्तेदारों पर ही क्यों न पड़ती हो। कोई भी पक्ष चाहे वह मालदार हो या ग़रीब, अल्लाह तुमसे ज़्यादा उनका शुभचिन्तक है। लिहाज़ा अपने मन की इच्छाओं की पैरवी में न्याय से बाज़ न रहो और यदि तुमने लगी-लिपटी बात कही या सच्चाई से पहलू बचाया तो जान लो कि जो कुछ तुम करते हो, अल्लाह को उसकी ख़बर है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-135)

क़ुरआन की यह शिक्षा इस बारे में पूर्ण और बिलकुल स्पष्ट है। यह केवल सामाजिक समस्याओं के समाधान की ओर रहनुमाई नहीं करती, बल्कि इनसानी ज़िन्दगी के उन पहलुओं पर भी रौशनी डालती हैं जो न्याय के मार्ग में रुकावट हों।

इस्लामी राज्य में न्याय क़ुरआन के मुताबिक़ होता था।

फ़ातिमा-बिन्ते-असवद ने, जिसका सम्बन्ध बनू-मखज़ूम के एक सरदार ख़ानदान से था, चोरी कर ली थी। उसके प्रकरण ने लोगों को चिन्ता में डाल दिया। उसके क़बीले के लोगों ने हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) के पास, जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को बहुत प्रिय थे, नबी (सल्ल॰) से सिफ़ारिश के लिए लोगों ने भेजा और कहलवाया कि वे नबी (सल्ल॰) से हमारी सिफ़ारिश कर दें। हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) आप (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुए और अपनी बात रखी तो आप (सल्ल॰) ने कहा—

> "क्या तुम अल्लाह की अवतरित की हुई सज़ा में नर्मी करवाना चाहते हो?"
>
> फिर आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "तुमसे पहले के लोग इसी कारण बर्बाद कर दिए गए कि जब उनमें से ताक़तवर चोरी करता तो वे उसको छोड़ देते और यदि कमज़ोर चोरी करता तो उसपर दण्ड लागू कर देते। अल्लाह की क़सम! यदि मुहम्मद की बेटी फ़ातिमा भी चोरी करतीं तो मैं उसका भी हाथ काट देता।"
>
> (हदीस : सहीह बुख़ारी-3475)

एक अवसर पर नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "लोगो! सुनो, जो कोई भी तुममें से किसी ऐसे ग़ैर-मुस्लिम नागरिक को सताएगा जो मुस्लिम राज्य में रहता हो, या उसे उसके अधिकार से वंचित करेगा, या उस पर उसके सामर्थ्य से अधिक बोझ डालेगा, या उससे उसकी अनुमति के बिना उसकी कोई चीज़ ज़बरदस्ती छीन लेगा तो मैं उसके ख़िलाफ़ (उस ग़ैर-मुस्लिम के समर्थन में) अल्लाह के यहाँ क़ियामत के दिन वकील होऊँगा।" (हदीस : अबू-दाऊद)

आर्थिक समानता

मानव-इतिहास में सबसे ख़तरनाक शोषण आर्थिक शोषण है और आर्थिक शोषण का सबसे ख़तरनाक रूप ब्याज की बीमारी है। आज की दुनिया में जब व्यक्तिगत स्वतंत्रता के नारे दुनिया भर में लगाए जाते हैं, इस समय भी यह शोषण न केवल शेष है, बल्कि जीवन के हर विभाग में उसका प्रभाव दिखाई देता है। यह ब्याज ही है जिसके कारण सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक असमानता कभी भी समाज में समाप्त नहीं की जा सकती। नबी (सल्ल०) ने इस सिलसिले की अल्लाह की वह्य अवतरित होने के बाद ब्याज की तमाम क़िस्मों पर पूरे समाज में पाबन्दी लगा दी।

क़ुरआन उन लोगों को भीषण परिणाम की चेतावनी देता है जो ब्याज लेकर दूसरों का शोषण करते हैं। क़ुरआन ऐसे लोगों की भर्त्सना करते हुए कहता है--

"जो लोग सूद (ब्याज) खाते हैं, उनकी दशा उस व्यक्ति जैसी होती है जिसे शैतान ने छूकर बावला कर दिया हो और इस दशा में उनके घिर जाने का कारण यह है कि वे कहते हैं : "व्यापार भी तो आख़िर ब्याज ही जैसी चीज़ है।" हालाँकि अल्लाह ने व्यापार को वैध किया है और ब्याज को वर्जित। अतः जिस व्यक्ति को उसके रब की ओर से यह नसीहत पहुँचे और वह आगे के लिए ब्याज खाने से बाज़ आ जाए, तो जो कुछ वह पहले खा चुका, सो खा चुका, उसका मामला अल्लाह के हवाले है और जो इस आदेश के बाद भी उसी हरकत को दोहराता रहा, वह जहन्नमी (नारकीय) है, जहाँ वह हमेशा रहेगा। अल्लाह ब्याज का मठ मार देता है और सदक़ात (दान) को बढ़ाता है और अल्लाह किसी नाशुक्रे बदअमल इनसान को पसन्द नहीं करता। हाँ! जो लोग ईमान ले आएँ और नेक अमल करें और नमाज़ स्थापित करें और ज़कात दें उनका प्रतिफल बेशक उनके रब के पास है और उनके लिए किसी भय और रंज का अवसर नहीं।"

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! अल्लाह से डरो और जो कुछ तुम्हारा ब्याज लोगों पर शेष रह गया है, उसे छोड़ दो, यदि वास्तव में तुम

ईमान लाए हो, लेकिन यदि तुमने ऐसा नहीं किया तो जान लो कि अल्लाह और उसके रसूल की ओर से तुम्हारे ख़िलाफ़ जंग का एलान है। अब भी तौबा कर लो (और ब्याज छोड़ दो) तो अपना मूल-धन लेने के तुम हक़दार हो। न तुम ज़ुल्म करो, न तुमपर ज़ुल्म किया जाए।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयतें-275 से 279)

इस्लाम ने आर्थिक शोषण का चोर दरवाज़ा पूर्णतः बन्द कर दिया। किन्तु केवल इसी पर बस नहीं किया, बल्कि ज़कात (अनिवार्य दान) की बुनियाद डाली। ज़कात, मुस्लिम समाज में आर्थिक असमानता समाप्त करने का एक बहुत महत्वपूर्ण साधन है। क़ुरआन, अल्लाह के अधिकारों के साथ-साथ बन्दों के अधिकारों पर भी बहुत ज़ोर देता है। बन्दों के अधिकार और उसमें विशेष रूप से ज़कात को इतना महत्व है कि क़ुरआन कम-से-कम 26 जगहों पर नमाज़ और ज़कात का उल्लेख एक साथ करता है। ज़कात को कैसे जमा करना और उसको किस प्रकार ख़र्च करना है यह आप (सल्ल॰) के तरीक़े से स्पष्ट है। ज़कात की बुनियादी विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) यह वार्षिक आय नहीं, बल्कि वार्षिक बचत या जमा की हुई सम्पत्ति की एक निश्चित मात्रा से अधिक सम्पत्ति पर एक निश्चित दर से अदा करना अनिवार्य होता है।

(2) इसको उस समय अदा करना होता है, जब बचत पर एक वर्ष पूरा हो जाता है। बचत की सम्पत्ति का मूल्य कम-से-कम 85 ग्राम शुद्ध सोने के मूल्य के बराबर होना चाहिए।

(3) विभिन्न पैमाने निम्नलिखित हैं–

(अ) बचत पर 2.5%।

(ब) वह खेती जिसमें पानी की व्यवस्था खुद करनी होती है, उस पर 5%

(ज) वह खेती जिसमें सिंचाई की व्यवस्था खुद नहीं करनी होती है, बल्कि प्राकृतिक साधनों से हो जाती है, उस पर 10%

(द) अचानक कहीं से आई हुई दौलत पर 20%।

इस्लामी राज्य में सरकार ही अपने साधनों से ज़कात जमा करेगी। इसको

समाज में ग़रीबी ख़त्म करने के लिए इस्तेमाल किया जाएगा। या ग़रीबों की सहायता करने के लिए।

ज़कात इकट्ठा करने और उसे वितरित करने की व्यवस्था कितनी प्रभावकारी थी। इसको समझने के लिए यमन का उदाहरण काफ़ी है। हज़रत उमर (रज़ि॰) के ज़माने में यमन के गवर्नर ने ज़कात जमा करने के बाद मदीना भेज दी। वहाँ से ज़कात की रक़म इस निर्देश के साथ वापस कर दी गई कि इसको यमन के लोगों के हालात ठीक करने के लिए ख़र्च किया जाए। अगले वर्ष गवर्नर ने आधी रक़म भेजी और कहा कि आधी रक़म यमन के ग़रीबों के लिए काफ़ी होगी। उसके अगले साल उन्होंने केवल एक तिहाई रक़म रोकी और दो तिहाई रक़म मदीना भेज दी और चौथे साल उन्होंने पूरी रक़म भेज दी। उनका कहना था कि यमन में ज़कात लेनेवाला कोई नहीं रहा। अतः इस रक़म को वहाँ इस्तेमाल किया जाए जहाँ इसकी अधिक आवश्यकता है।

सामाजिक समानता

नबी (सल्ल॰) के अन्तर्गत इस्लामी हुकूमत की विशेषता यदि किसी चीज़ को कहा जा सकता है तो वह है सामाजिक समानता और न्याय। एक ऐसा समाज जहाँ तानाशाही, झूठी बड़ाई, कुलीन-अकुलीन का भेद-भाव समाज के स्वभाव में शामिल हो, जहाँ लोगों से भेदभाव युक्त व्यवहार समाज का अभिन्न अंग बन चुका हो, उस समाज में नबी (सल्ल॰) ने एक ऐसा इन्क़िलाब ला खड़ा कर दिया जिसकी किसी और जगह आज तक कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

जब मदीना से मुसलमानों की छोटी-सी सेना बद्र के मैदान के लिए निकली तो सवारियों की कमी के कारण तीन-तीन लोग एक ऊँट पर बारी-बारी बैठते थे। आप (सल्ल॰) के साथी उस समय हज़रत अबू-लुबाबा (रज़ि॰) और हज़रत अली (रज़ि॰) थे। दोनों सहाबी चाहते थे कि केवल आप (सल्ल॰) ऊँट पर बैठें। लेकिन आप (सल्ल॰) ने यह कहते हुए मना कर दिया कि "न तो तुम दोनों मुझ से मज़बूत हो और न ही मैं आख़िरत (मरणोत्तर जीवन) के

फल का तुम दोनों से कम इच्छुक हूँ।"

ख़न्दक़ की जंग में आप (सल्ल॰) के घरवालों को उसी क़िले और उसी हालत में रखा गया था जहाँ शेष मुसलमानों की औरतों और बच्चों को रखा गया था। उनके लिए अलग से कोई व्यवस्था नहीं की गई थी।

बराबरी का यह सुलूक और समानता का जो पाठ नबी (सल्ल॰) ने मुसलमानों के सामने रखा उसने तमाम मुसलमानों में आत्मसम्मान की भावना जगा दी और यही कारण है कि वे क़ैसर व किसरा (रोमन एवं ईरानी सम्राट) से बराबरी के स्तर पर बात करने की क्षमता रखते थे।

दूसरी हुकूमतों के साथ सम्बन्ध

क़ुरआन स्पष्ट शब्दों में आदेश देता है—

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! अल्लाह के लिए सीधे मार्ग पर जमे रहनेवाले और न्याय की गवाही देनेवाले बनो। किसी समुदाय की शत्रुता तुमको इतना न भड़का दे कि न्याय से फिर जाओ। न्याय करो, यह ईशपरायणता के अधिक अनुकूल है। अल्लाह से डरकर काम करते रहो, जो कुछ तुम करते हो अल्लाह (ईश्वर) उसकी पूरी ख़बर रखता है।" (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-8)

यह बात कि इस्लाम ने सदाचार और चरित्र पर बहुत ज़ोर दिया है और मुस्लिम समाज को उच्च-चरित्र का एक आदर्श बनाया है, एक ऐतिहासिक सच्चाई है। जब हम इसपर विचार करते हैं कि मुसलमान और उनकी यह हुकूमत चारों ओर से धोखेबाज़, जँगजू और झगड़ालू दुश्मनों से घिरी थी जो किसी भी क़ानून-व्यवस्था को मानने को तैयार न थे, तो इस बात पर आश्चर्य होता है कि मुसलमानों ने ऐसी कठोर परिस्थितियों में भी इतने उच्च-चरित्र का आदर्श कैसे पेश किया। लेकिन यह एक सच्चाई है कि इस्लाम ने हमेशा मानवता के कल्याण की बात की है।

परिस्थितियों की ख़राबी और तमाम कठिनाइयों के उपरांत भी आप (सल्ल॰) ने हमेशा उच्चतम-चरित्र एवं आचरण का आदर्श पूरे संसार के सामने पेश किया। आप (सल्ल॰) ज़बरदस्त फ़ौजी कमाण्डर थे, जिन्होंने कम-से-कम

जानी नुक़सान में बेहतरीन विजय और नतीजे हासिल किए। आप (सल्ल॰) ने कुछ ऐसे क़दम भी उठाए जिनसे पूरे अरब समाज में शान्ति एवं सुरक्षा की स्थापना हो सकी। उनमें कुछ कार्रवाइयों का उल्लेख यहाँ पर किया जाता है—

(1) आप (सल्ल॰) ने सूचनाओं को इकट्ठा करने की एक मज़बूत व्यवस्था क़ायम की, जिससे आप (सल्ल॰) को दुश्मनों की तमाम योजनाओं के बारे में समय पर सूचना मिल जाती थी। ऐसी मज़बूत व्यवस्था के बिना मुसलमान ख़न्दक़ की लड़ाई में समय पर कार्रवाई न कर पाते।

(2) जैसे ही आप (सल्ल॰) को दुश्मनों के बारे में पक्की सूचनाएँ मिलती, आप (सल्ल॰) जल्द-से-जल्द दुश्मनों के क़दम उठाने से पहले ही ज़रूरी कार्रवाई करके समस्याओं का समाधान कर लेते।

(3) आप (सल्ल॰) अपनी सेना की गतिविधियों को इस तरह रहस्य में रखते कि शत्रु को उस समय पता चलता जब वह उसके सर पर जा पहुँचती। अधिकांश अवसरों पर तो शत्रु बिना मुक़ाबले के ही भाग खड़ा होता।

(4) सैनिकों को यह स्पष्ट आदेश थे कि महिलाओं पर न हाथ उठाएँगे, और न उनको किसी प्रकार की हानि पहुँचाएँगे। न ही वे बच्चों, बूढ़ों, धार्मिक स्थानों में शरण लेनेवालों और ऐसे लोगों को जो युद्ध में शामिल न हों, नुक़सान पहुँचाएँगे। उनको आदेश था कि न तो खेती को नुक़सान पहुँचाएँगे और न ही धन-सम्पत्ति को। यदि कुछ अवसरों पर लोगों ने आदेश पालन में ग़लती की तो आप (सल्ल॰) ने स्पष्ट शब्दों में अपनी नाराज़गी प्रकट की।

इसलिए इसमें किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि 82 छोटी बड़ी जंगों के बावजूद मुसलमानों और दुश्मनों को मिलाकर कुल 600 लोगों की ही जानें गईं। (कुछ इतिहासकारों ने इसे 1200 तक लिखा है।) और इस्लामी साम्राज्य पूरे अरबद्वीप में स्थापित हो गया।

क़ुरआन में ईश्वर कहता है—

"जब अल्लाह की मदद आ जाए और विजय प्राप्त हो जाए और

(ऐ नबी!) तुम देख लो कि लोग समूह-के-समूह सत्य-धर्म में दाख़िल हो रहे हैं तो अपने प्रभु की स्तुति के साथ उसका महिमागान करो और उससे क्षमा की दुआ माँगो। बेशक वह बड़ा तौबा क़बूल करनेवाला है। (क़ुरआन, सूरा-110 नस्र, आयतें-1 से 3)

4:4 नबी (सल्ल॰) के कथन

क़ुरआन के बाद इस्लाम और इस्लामी क़ानून का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के कथन (हदीस) हैं। हदीस के तीन प्रकार हैं—

(1) **कथन (क़ौल) :** नबी (सल्ल॰) की ज़बानी शिक्षाएँ।

(2) **कर्म व आचरण (फ़ेअल) :** नबी (सल्ल॰) के द्वारा किए गए काम, जो उन्होंने विभिन्न अवसरों पर किए। नबी (सल्ल॰) ने अपने पूरे जीवन में जो कुछ किया, वे सब हदीस हैं।

(3) **तक़रीर :** सहाबी (रज़ि॰) के द्वारा किया गया वह सारा काम जिनके बारे में नबी (सल्ल॰) को पता चला और आप (सल्ल॰) ने उनको नहीं रोका।

आप (सल्ल॰) के प्यारे साथियों ने इन कथनों और कर्मों को ताबईन[1] तक, ताबईन ने तबा ताबईन[2] तक पहुँचाया और उसको लिखकर भविष्य में आनेवाली नस्लों के लिए सुरक्षित कर लिया।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के सहाबी, ताबईन, तबा ताबईन और बाद के उलमा (इस्लाम के विद्वजनों) ने बड़ी मेहनत से इन हदीसों को संकलित किया और सुरक्षित रखा। यदि आपको असमाउर-रिजाल या इल्मुल-रिजाल[3] का ज्ञान है तो आप समझ सकते हैं कि हमारे पूर्वजों ने कितनी मेहनत और लगन से इस काम को किया और किस तरह हदीस को सुरक्षित रखने की कोशिश की। किसी दूसरे धर्म में इस तरह की कोई मिसाल नहीं मिलती। असमाउर-रिजाल बाद में अपने आप में एक कला (विद्या) समझी जाने लगी। यह कला वास्तव में उन लोगों के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी उपलब्ध कराती

---

1. सहाबा के बाद वाली पीढ़ी।
2. ताबईन के बाद वाली पीढ़ी।
3. हदीस बयान करनेवालों के जीवन के अध्ययन की परिक्रिया।

है जो या तो हदीस के रावी (उल्लेख करनेवाले) हैं या उसी सिलसिले की एक कड़ी। उन लोगों के बारे में निम्नलिखित सूचनाएँ हमें मिलती हैं।

(1) उनकी स्मरण शक्ति कैसी थी?

(2) अपने व्यक्तिगत जीवन में उनमें कितनी ईमानदारी थी?

(3) यदि वे अपने से पहले किसी रावी से कोई रिवायत उद्धृत कर रहे हैं तो क्या इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण है कि उनसे भेंट हुई हो? आदि, आदि।

असमाउर-रिजाल की बुनियाद पर हदीसों की मज़बूती को परखा जाता है और रावियों के बारे में जानकारियाँ आम तौर पर हदीस की विभिन्न किताबों में विद्यमान होती हैं।

आगे के पन्नों में हम कुछ महत्वपूर्ण विषयों पर हदीस के दो सबसे अधिक प्रमाणिक संकलन, सहीह बुख़ारी और सहीह-मुस्लिम से हदीसों को उद्धृत कर रहे हैं। हदीसों के नीचे जो नाम दिए गए हैं वे उन रिवायतों के सिलसिले के प्रथम रावी यानी सहाबा (रज़ि॰) हैं। इन हदीसों की संख्या वही है जो हदीस की दो प्रमाणिक किताबों में मौजूद हैं।

अहादीस-ए-क़ुदसी

अहादीस-ए-क़ुदसी उन हदीसों को कहते हैं जिनमें विषय-वस्तु अल्लाह की ओर से कही जाती है और शब्द नबी (सल्ल॰) के होते हैं।

नबी (सल्ल॰) ने कहाः "अल्लाह तआला फ़रमाता है कि आदम के बेटे ने मुझे झुठलाया, हालाँकि उसके लिए यह उचित न था। उसने मुझे गाली दी, हालाँकि उसके लिए यह उचित न था। उसका झुठलाना तो यह है कि वह कहता है कि मैं उसे दोबारा जीवित करने की सामर्थ्य नहीं रखता और उसका गाली देना यह है कि मेरे लिए सन्तान बताता है। मेरी हस्ती इससे पाक है कि मैं अपने लिए पत्नी या सन्तान बनाऊँ।"

(हदीस : बुख़ारी-4482)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला फ़रमाता है कि आदम का

बेटा ज़माने को बुरा-भला कहता है, हालाँकि ज़माना मैं हूँ। मेरे ही हाथ में रात और दिन हैं।" (हदीस : बुख़ारी-6181, मुस्लिम-5580)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह कहता है कि मैं अपने बन्दे के गुमान के साथ हूँ और जब वह मुझे अपने दिल में याद करता है तो मैं भी उसे अपने दिल में याद करता हूँ और जब वह मुझे मजलिस में याद करता है तो मैं उससे बेहतर फ़रिश्तों की मजलिस में उसे याद करता हूँ और यदि वह मुझसे एक बालिश्त क़रीब आता है तो मैं उससे एक हाथ क़रीब हो जाता हूँ और यदि वह मुझसे एक हाथ क़रीब आता है तो मैं उससे दो हाथ क़रीब हो जाता हूँ और यदि वह मेरी तरफ़ चलकर आता है तो मैं उसके पास दौड़कर आता हूँ।" (हदीस : बुख़ारी-7405)

नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"सुनो! अल्लाह सत्ता का स्वामी क़ियामत के दिन कहेगा, ऐ आदम के बेटे! मैं बीमार था, किन्तु तुम मेरा हाल-चाल पूछने नहीं आए। वह कहेगा : ऐ मेरे प्रभु! मैं आपका हाल-चाल पूछने कैसे आ सकता था, आप तो सम्पूर्ण जगत् के पालनहार हैं? तब अल्लाह कहेगा : क्या तुम्हें पता नहीं था कि मेरा अमुक-अमुक बन्दा बीमार था, लेकिन तुम उसके बीमार होने पर सहानुभूति प्रकट करने नहीं गए। यदि तुम उसका हाल-चाल पूछने उसके पास गए होते तो मुझे उसके निकट पाते।

अल्लाह कहेंगे—

"ऐ आदम की संतान! मैंने तुम से खाना माँगा लेकिन तुमने मुझे नहीं खिलाया।"

वह कहेगा : "ऐ मेरे रब! मैं आपको किस तरह खिला सकता था, आप तो पूरी दुनिया के पालनहार हैं?"

इस पर अल्लाह कहेगा : "क्या तुम्हें पता नहीं था कि अमुक-अमुक व्यक्ति ने खाना माँगा, किन्तु तुमने उसे नहीं खिलाया। यदि तुमने उसे खाना खिलाया होता तो तुम उसे मेरे पास पाते।"

अल्लाह कहेगा—

"ऐ आदम के बेटे! मैंने तुमसे पानी माँगा, लेकिन तुमने मुझे पानी नहीं दिया।"

वह कहेगा "ऐ मेरे रब! मैं आपको पानी कैसे पिलाता, आप तो तमाम दुनिया के रब हैं।"

इसपर अल्लाह सत्ता का स्वामी फ़रमाएगा : "मेरा अमुक और अमुक बन्दा प्यासा था और उसने तुमसे पानी माँगा था। यदि तुम उसे पानी पिलाते तो तुम उसे मेरे पास पाते।" (हदीस : मुस्लिम-6232)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : अल्लाह कहता है : "मेरे बन्दो! मैंने ज़ुल्म को अपने ऊपर हराम कर लिया है और तुम्हारे लिए भी। तो तुम लोग एक-दूसरे पर ज़ुल्म न करो।

ऐ मेरे बन्दो! तुम में से हरेक पथभ्रष्ट हो सकता है, सिवाए उसके जिसको मैं सीधे रास्ते पर चलाऊँ। तो मुझसे मार्गदर्शन चाहो, ताकि मैं तुम्हें सीधे रास्ते पर चलाऊँ। ऐ मेरे बन्दो! तुममें से हर व्यक्ति भूखा है, सिवाए उसके जिसको मैं खिलाऊँ। तो तुम मुझसे रोज़ी माँगो, ताकि मैं तुमको रोज़ी दूँ।"

"ऐ मेरे बन्दो! तुम में से हर व्यक्ति नंगा है, सिवाए उसके जिसको मैं पहनाऊँ। तो मुझ से ही कपड़े माँगो, ताकि मैं तुम को कपड़े दूँ।"

"ऐ मेरे बन्दो! तुम सुबह-शाम ग़लतियाँ करते हो। मैं तुम्हारी ग़लतियों को माफ़ करनेवाला हूँ। तो मुझसे माफ़ी चाहो, ताकि मैं तुम्हें माफ़ कर दूँ।"

"ऐ मेरे बन्दो! न तो तुम मुझे नुक़सान पहुँचा सकते हो, न ही लाभ पहुँचा सकते हो।"

"ऐ मेरे बन्दो! यदि तुम में से पहला या अन्तिम व्यक्ति या समस्त मनुष्य जाति और तमाम जिन्न, अल्लाह से सबसे ज़्यादा डरनेवाले आदमी के दिल की तरह हो जाएँ तब भी मेरी महानता में तनिक भी वृद्धि नहीं कर सकते।"

"ऐ मेरे बन्दो! यदि तुम में पहला और आख़िरी और तमाम-के-तमाम इनसान और जिन्न सब मिल जाएँ और सबसे बुरे आदमी के दिल की तरह

हो जाएँ तब भी मेरी महानता में कमी नहीं कर सकते।"

"ऐ मेरे बन्दो! यदि तुम में का पहला और तुममें का आख़िरी व्यक्ति और पूरी इनसानियत और जिन्न एक ख़ाली मैदान में खड़े हो जाएँ और मुझ से माँगते जाएँ और मैं सबको वह देता जाऊँ जो वह माँगते जाएँ तो मुझे इतनी भी कमी नहीं होगी जितनी कि उस समुन्द्र में होती है जिसमें एक सूई डूबोकर निकाल ली जाए।"

"ऐ मेरे बन्दो! तुम्हारे वे कर्म जो लिखे हुए हैं, मैं तुम्हें उसका बदला दूँगा। तो जिसको अच्छा बदला मिले तो उसको अल्लाह का शुक्र अदा करना चाहिए और जिसको इसके विपरीत मिले तो उसे अपने आप को दोष देना चाहिए।" (हदीस : मुस्लिम-6246)

नबी (सल्ल०) ने कहा—

"अल्लाह तआला फ़रमाता है कि अभिमान मेरा इज़ार है और बुज़ुर्गी मेरी चादर है और (अल्लाह तआला) फ़रमाता है कि जो इन बातों के बारे में मुझसे झगड़ता है मैं उसे ज़रूर यातना दूँगा।" (हदीस : मुस्लिम-6349)

नबी (सल्ल०) ने कहा—

"अल्लाह फ़रमाता है : मैं वह हूँ, जिसे किसी साझी या शरीक की ज़रूरत नहीं। यदि कोई ऐसी बात कहे या करे जिससे वह किसी को मेरा साझी ठहराए तो मैं उसको उसके साथ छोड़ दूँगा जिसको वह अल्लाह का शरीक ठहराता था।" (हदीस : मुस्लिम-7114)

अच्छी आदतें

नबी (सल्ल०) ने कहा : "ईमान की साठ से ज़्यादा शाखाएँ (भाग) हैं और 'लज्जा' ईमान का अंग है।" (हदीस : बुख़ारी-9, मुस्लिम-56)

एक आदमी ने नबी (सल्ल०) से पूछा : कौन-सा इस्लाम अच्छा है? आप ने कहा : "तुम खाना खिलाओ और सलाम करो, उसको भी जिसको पहचानो और उसको भी जिसको न पहचानो।" (हदीस : बुख़ारी-12)

हिश्शाम कहते हैं कि उनके पिता ने उन्हें बताया कि हकीम-बिन-हिज़ाम

(रज़ि॰) ने अपने इस्लाम लाने से पहले समय में सौ ग़ुलाम आज़ाद किए और सौ ऊँट लोगों की सवारी के लिए दिए थे। फिर जब इस्लाम लाए तो सौ ऊँट सवारी के लिए दिए और सौ ग़ुलाम आज़ाद किए। फिर उन्होंने उल्लेख किया कि मैंने नबी (सल्ल॰) से पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! इन नेक कर्मों के सम्बन्ध में आपका क्या ख़्याल है जिन्हें इस्लाम लाने से पहले समय में किया करता था।" उन्होंने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : जो नेकियाँ तुम पहले कर चुके हो वे सब क़ायम रहेंगी।" (हदीस : बुख़ारी-2538)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया : जो कोई अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान (आस्था) रखता हो वह अपने पड़ोसी को तकलीफ़ न पहुँचाए और जो कोई अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो वह अपने मेहमान का सम्मान करे और जो कोई अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो वह अच्छी बात मुख से निकाले वरना चुप रहे।"

(हदीस : बुख़ारी-6018)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : मालदारी यह नहीं कि सामान ज़्यादा हो, बल्कि मालदारी यह है कि दिल ग़नी (धनवान) हो।" (हदीस : बुख़ारी-6446)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जब किसी व्यक्ति की मृत्यु होती है तो उसके कर्म उससे विलग हो जाते हैं, सिवाए तीन चीज़ों के। (एक) वह शुभ कर्म जिससे लोगों को निरन्तर लाभ पहुँचता रहे (यानी सदक़ा-ए-जारिया), (दूसरा) वह ज्ञान जिससे लोग सदैव लाभान्वित होते रहें और (तीसरा) वह नेक संतान जो सदैव उसके लिए दुआ करती रहे।" (हदीस : मुस्लिम-4005)

हज़रत अनस (रज़ि॰) उल्लेख करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने खड़े होकर पानी पीने से मना किया। क़तादा (रज़ि॰) कहते हैं कि हमने कहा : खड़े होकर खाने के बारे में आप (सल्ल॰) का क्या आदेश है। जिस पर (अनस, रज़ि॰) ने कहा : यह तो और भी ज़्यादा ख़राब और निकृष्ट चीज़ है।

(हदीस : मुस्लिम-4018)

हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) तीन सांसों में पानी पीते थे। (हदीस : मुस्लिम-5029)

नवास-बिन-समआन अनसारी (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने नबी (सल्ल॰) से नेकी और बुराई के बारे में पूछा। आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "नेकी एक अच्छी दशा है जबकि बुराई वह है जो तुम्हारे दिल में खटक पैदा कर दे और तुम्हें बुरा लगे कि लोग उसे जान जाएँ।" (हदीस : मुस्लिम-6195)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह का वह बन्दा जो दूसरों की कमियों को इस दुनिया में छुपाएगा अल्लाह उसकी कमियों को आख़िरत में छुपाएगा।" (हदीस : मुस्लिम-6267)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "(सोते समय) बर्तन ढ़ाँक दिया करो, दरवाज़े बन्द कर लिया करो और चिराग़ बुझा दिया करो, क्योंकि चूहा कभी-कभी चिराग़ की बत्ती खींच लेता है और घरवालों को जला देता है।" (हदीस : बुख़ारी-6295)

अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने कहा : "सच बात कहना नेकी है और नेकी जन्नत की ओर ले जाती है। वह बन्दा जो सच बोलने की हिम्मत करता है, उसका नाम सादिक़ीन (सच्चे लोगों) की सूची में शामिल कर दिया जाता है। झूठ अश्लीलता है और अश्लीलता जहन्नम की आग की तरफ़ ले जाती है। जो बन्दा झूठ बोलने का साहस करता है उसका नाम झूठ की सूची में सम्मल्लित कर लिया जाता है।" (हदीस : मुस्लिम-6308)

जवाबदेही

मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को कहते हुए सुना : "तुममें हर व्यक्ति ज़िम्मेदार है और उससे उसके अधीनस्त के बारे में पूछा जाएगा। शासक अपनी प्रजा (जनता) का ज़िम्मेदार है और उससे उनके बारे में प्रश्न किया जाएगा। पति अपने घर का ज़िम्मेदार है और वह उनके बारे में उत्तरदायी है। पत्नी अपने पति के घर और अपने बच्चों की अभिभावक है और वह उसके बारे में जवाबदेह है। नौकर अपने मालिक की चीज़ों का रखवाला है और वह उसके बारे में जवाबदेह है।" मैंने रसूल (सल्ल॰) को यह भी कहते हुए सुना : "एक आदमी अपनी बाप की सम्पत्ति का भी रखवाला है और उसके बारे में जवाबदेह है और इस तरह तुम सब लोग (किसी-न-किसी रूप में) रखवाले हो

और अपने बच्चों और अपनी सम्पत्ति के बारे में जवाबदेह हो।"

(हदीस : बुख़ारी-2409, मुस्लिम-4496)

वैवाहिक जीवन

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "वे शर्तें जिनके द्वारा तुमने स्त्रियों को अपने दाम्पत्य में लिया है, पूरी की जाने की सबसे अधिक पात्र हैं।"

(हदीस : बुख़ारी-2721)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) कहते हैं कि हम नबी (सल्ल॰) के ज़माने में नवजवान थे और हमें कोई चीज़ प्राप्त नहीं थी (यानी हमारे पास कुछ भी नहीं था)। नबी (सल्ल॰) ने हमसे कहा : "नवजवानो! तुममें से जिसे भी शादी करने के लिए आर्थिक शक्ति प्राप्त हो उसे निकाह कर लेना चाहिए। क्योंकि यह नज़र को नीची रखनेवाला और पाक-दामनी की रक्षा करनेवाला कर्म है और जो कोई ग़रीबी (निर्धनता) के कारण विवाह करने की शक्ति न रखता हो, उसे चाहिए कि रोज़े रखे, क्योंकि रोज़ा उसकी यौन-शक्ति की प्रबलता को तोड़ देगा।" (हदीस : बुख़ारी-5066)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "महिलाओं से शादी चार चीज़ों के आधार पर की जाती है। उसके माल की वजह से, उसके ख़ानदान की वजह से, उसकी ख़ूबसूरती की वजह से और उसकी ईशपरायणता (दीन) की वजह से। तो ईशपरायण स्त्री से शादी करके कामयाबी हासिल करो। अन्यथा तुम घाटे में रहोगे।" (हदीस : बुख़ारी-5090, मुस्लिम-3547)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "विधवा औरत की शादी उस समय तक न की जाए जब तक कि उसकी अनुमति न ली जाए और कुंवारी की शादी उस समय तक न की जाए जब तक उसकी अनुमति न मिल जाए।"

सहाबियों (रज़ि॰) ने पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! कुंवारी औरत (शर्म के कारण) अपनी इच्छा कैसे व्यक्त करेगी? नबी (सल्ल॰) ने कहा : "उसकी सूरत यह है कि वह चुप रह जाए। उसका चुप रहना उसकी अनुमति समझी जाएगी।" (हदीस : बुख़ारी-5136, मुस्लिम-3303)

ख़नसा-बिन्त-ख़ज़ाम अनसारिया (रज़ि॰) ने कहा कि उनके पिता ने उनका

विवाह कर दिया था। वह सय्यबा थीं यानी उनकी पहले भी शादी हो चुकी थी। उन्हें यह शादी स्वीकार नहीं थी इसलिए अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सेवा में हाज़िर हुईं। नबी (सल्ल॰) ने उनके विवाह को अवैध घोषित कर दिया।" (हदीस : बुख़ारी-1538)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "लोगों में अल्लाह की दृष्टि में सबसे बुरा क़ियामत के दिन वह होगा जो अपनी पत्नी के पास जाए और वह उसके पास आए। उसके बाद वह उसके रहस्य को सबसे बताता फिरे।" (हदीस : मुस्लिम-3369)

नबी (सल्ल॰) ने कहा, "पूरी दुनिया लाभदायक है और सबसे अच्छी लाभदायक नेक औरत है।" (हदीस : मुस्लिम-3456)

सन्तुलित व्यवहार

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जब तुम में से कोई व्यक्ति क़िसी ऐसे व्यक्ति को देखे जो धन और रूप में उससे बढ़कर है तो उसे ऐसे व्यक्ति का ध्यान करना चाहिए जो उससे निम्न श्रेणी का है।"

(हदीस : बुख़ारी-6490, मुस्लिम-7068)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "निस्सन्देह धर्म सरल है और जो व्यक्ति धर्म में सख़्ती अपनाएगा तो वह उसको निभाने में असमर्थ रहेगा। इसलिए अपनी कार्यशैली में स्थायित्व पैदा करो और जहाँ तक सम्भव हो बीच की राह अपनाओ और ख़ुश हो जाओ कि इस (कार्यशैली) से तुमको दोनों जहान के फ़ायदे प्राप्त होंगे) सुबह, दोपहर, और शाम और कुछ रात में (इबादत) से मदद हासिल करो। (पाँचों वक़्त की नमाज़ भी मुराद हो सकती है कि पाबन्दी से अदा करो।) (हदीस : बुख़ारी-39)

तीन लोग नबी (सल्ल॰) की धर्म पत्नियों के घरों की ओर आप (सल्ल॰) की इबादत के सम्बन्ध में पूछने आए। जब उन्हें नबी (सल्ल॰) का अमल बताया गया तो उसे उन्होंने उसे कम समझा और कहा : "हमारा नबी (सल्ल॰) से क्या मुक़ाबला! आप (सल्ल॰) की तो अगली-पिछली तमाम गलतियाँ माफ़ कर दी गई हैं।"

उनमें से एक ने कहा कि मैं आज से सदैव रात भर नमाज़ पढूँगा। दूसरे

ने कहा कि मैं हमेशा रोज़े से रहूँगा कभी न छोड़ूँगा। तीसरे ने कहा कि मैं औरतों से सदैव दूर रहूँगा और कभी शादी नहीं करूँगा। फिर नबी (सल्ल॰) आ गए और उनसे पूछा : "क्या तुमने ये बातें कही हैं? सुन लो! अल्लाह की क़सम! सर्वजगत् के स्वामी अल्लाह से मैं तुम से ज़्यादा डरनेवाला हूँ, मैं तुममें सबसे ज़्यादा परहेज़गार हूँ, लेकिन मैं यदि रोज़े रखता हूँ तो इफ़्तार भी करता हूँ। (रात में) नमाज़ पढ़ता हूँ और सोता भी हूँ और मैं औरतों से शादी भी करता हूँ। मेरे तरीक़े से जिसने अरुचि दिखाई वह मुझ से नहीं।

(हदीस : बुख़ारी-5063, मुस्लिम-3236)

पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा : "जब नमाज़ खड़ी हो चुके और रात का खाना भी सामने हो तो पहले खाना खाओ।" (हदीस :बुख़ारी-5465)

एक देहाती ने मस्जिद में पेशाब कर दिया। लोग उसकी तरफ़ मारने को बढ़े, लेकिन अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "उसे छोड़ दो और जहाँ उसने पेशाब किया है उस जगह पर एक बाल्टी पानी बहा दो, क्योंकि तुम आसानी पैदा करनेवाले बनाकर भेजे गए हो, तंगी करनेवाले बनाकर नहीं भेजे गए।" (हदीस : बुख़ारी-6128)

पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा : "तुममें से कोई व्यक्ति किसी कष्ट के कारण मौत की कामना न करे। यदि मौत की कामना आवश्यक हो जाए तो यह कहे कि ऐ अल्लाह! जब तक मेरे लिए ज़िन्दगी बेहतर है मुझे जीवित रख और जब मेरे लिए मौत बेहतर हो तो मुझे उठा ले।" (हदीस : बुख़ारी-6351)

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "मध्य चाल चलो और ऊँचा न उड़ो और अमल करते रहो। तुम में से किसी का कर्म उसे जन्नत में दाख़िल न कर सकेगा। सबसे प्रिय कर्म वह है जिसमें निरन्तरता अपनाई जाए चाहे कम ही क्यों न हो।" (हदीस : बुख़ारी-6464)

पैग़म्बर (सल्ल॰) ख़ुत्बा दे रहे थे कि एक व्यक्ति को धूप में खड़ा देखा। नबी (सल्ल॰) ने उसके बारे में पूछा तो लोगों ने बताया कि उसका नाम अबू-इसराईल है। उन्होंने मन्नत मानी है कि खड़े ही रहेंगे, बैठेंगे नहीं। न किसी चीज़ की छाया में बैठेंगे और न किसी से बात करेंगे और सदैव रोज़ा

रखेंगे। नबी (सल्ल॰) ने कहा कि उनसे कहो कि बात करें, साये में बैठें और अपना रोज़ा पूरा करें।" (हदीस : बुख़ारी-6704)

अल्लाह पर पूर्ण भरोसा

जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) कहते हैं कि हम पैग़म्बर (सल्ल॰) के साथ एक जंग में नज्द की तरफ़ गए। अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने हमको एक ऐसी घाटी में पाया जिसमें काँटेदार पेड़ थे। नबी (सल्ल॰) एक पेड़ के नीचे आराम करने लगे। आप (सल्ल॰) ने अपनी तलवार को पेड़ पर लटका दिया, जिसके नीचे आप (सल्ल॰) आराम कर रहे थे। लोग इधर-उधर बिखर गए और विभिन्न पेड़ों के नीचे आराम करने लगे।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने (बाद में) बताया : "मैं सो रहा था कि एक आदमी आया। उसने मेरी तलवार अपने क़ब्ज़े में ले ली और मेरे सिर के पास खड़ा हो गया। मैं जाग गया और मैंने देखा कि मेरी तलवार उसके हाथ में थी। उसने कहा : "अब तुमको मुझसे कौन बचाएगा?" मैंने कहा : "अल्लाह!" उसने फिर कहा : "तुमको मुझसे अब कौन बचा सकता है?" मैंने कहा : "अल्लाह!" उसने तलवार म्यान में रख दी। (तुम उस) आदमी को यहाँ बैठा हुआ देख रहे हो।" अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उसको कोई नुक़सान नहीं पहुँचाया। (हदीस : मुस्लिम-5665)

अल्लाह की रहमत

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा : "जब अल्लाह अपनी सृष्टि को पैदा कर चुका तो अपनी किताब (लोहे-महफ़ूज़) में, जो उसके पास अर्श पर विद्यमान है, उसने लिखा, "मेरी करुणा मेरे क्रोध पर प्रभावी है।"

(हदीस : मुस्लिम-6626)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "किसी आदमी का कर्म उसे जन्नत में दाख़िल नहीं कर सकेगा।" सहाबियों ने पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! आपका भी नहीं।" आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "मेरा भी नहीं, सिवाए इसके कि अल्लाह अपनी करुणा मुझ पर कर दे। इसलिए (अमल में) बीच का रास्ता अपनाओ और अपनी सामर्थ्य के अनुसार काम करो और तुममें से

कोई व्यक्ति भी मौत की इच्छा न करे, क्योंकि यदि वह नेक होगा तो उम्मीद है कि उसके कर्मों में अभिवृद्धि हो जाएगी और यदि वह बुरा है तो सम्भव है कि वह तौबा कर ले।" (हदीस : बुख़ारी-5673, मुस्लिम-6760)

पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह तआला ने कोई ऐसी बीमारी नहीं उतारी, जिसकी दवा भी न उतारी हो।" (हदीस : बुख़ारी-5678)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "दुख पहुँचानेवाली बात सुनकर अल्लाह से अधिक धीरज रखनेवाला कोई नहीं है, दुर्भाग्य से अनेकेश्वरवादी कहते हैं कि अल्लाह सन्तान रखता है और फिर भी वह उन्हें आजीविका देता है।" (हदीस : बुख़ारी-737, मुस्लिम-2673)

अल्लाह के पैग़म्बर (अलैहि॰)

अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) उल्लेख करते हैं कि एक आदमी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुआ और कहा : "ऐ ईश्वर के सर्वश्रेष्ठ बन्दे!" इसको सुनकर नबी (सल्ल॰) ने कहा : "वह तो इबराहीम (अलैहि॰) हैं।" (हदीस : मुस्लिम-5841)

एक बार एक यहूदी कुछ बेच रहा था, उसको क़ीमत दी गई तो वह प्रसन्न न हुआ या उसने बुरा जाना। अब्दुल-अज़ीज़ (एक रावी) को इसके बारे में सन्देह है। उस समय यहूदी ने कहा : "अल्लाह की क़सम! जिसने मूसा (अलैहि॰) को लोगों के बीच से चुन लिया।"

इस बात को अनसार में से किसी ने सुन लिया और उसने उस यहूदी के चेहरे पर एक थप्पड़ जड़ दिया और कहा : "तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई कि यह कहो कि क़सम उस ख़ुदा की जिसने मनुष्यों में से मूसा (अलैहि॰) को चुन लिया, यद्यपि अल्लाह का नबी (सल्ल॰) हमारे बीच विद्यमान है।"

यहूदी नबी (सल्ल॰) के पास गया और कहा : "ऐ अबुल-क़ासिम! मैं एक ज़िम्मी (ग़ैर-मुस्लिम) हूँ और अमान में हूँ।" फिर उसने कहा : "एक व्यक्ति ने मेरे चेहरे पर मुक्का मारा।" तब नबी (सल्ल॰) ने मारनेवाले से पूछा, "तुमने उसे क्यों मारा?" उसने कहा, "ऐ अल्लाह के रसूल! इस आदमी ने कहा : 'उस ख़ुदा की क़सम जिसने मूसा (अलैहि॰) को तमाम इनसानों में

से चुन लिया, हालाँकि आप (सल्ल॰) हमारे बीच मौजूद हैं।" नबी (सल्ल॰) को यह सुनकर ग़ुस्सा आया और ग़ुस्से के आसार आप (सल्ल॰) के चेहरे पर नज़र आने लगे। फिर आप (सल्ल॰) ने कहा : "नबियों के बीच भेद-भाव मत करो। जब सूर फूँका जाएगा और आकाश और पृथ्वी पर जो कोई भी होगा बेहोश होकर गिर जाएगा, सिवा उसके जिसको अल्लाह उससे बचा ले। तब दूसरा सूर फूँका जाएगा और मैं होश में आनेवालों में से पहले कुछ लोगों में से हूँगा और उस समय हज़रत मूसा (अलैहि॰) अर्श का पाया पकड़े हुए होंगे। मुझे नहीं पता कि यह बदला है उस समय का जब वह तूर पर बेहोश होकर गिर पड़े थे। या यह कि वह मुझसे पहले उठाए जाएँगे और मैं नहीं कह सकता कि नबियों में यूनुस-बिन-मती (अलैहि॰) से ज़्यादा बेहतर कोई दूसरा है।" (हदीस : मुस्लिम-5857)

न्याय

मैंने नोमान-बिन-बशीर (रज़ि॰) से सुना, वे मंच पर बयान कर रहे थे कि मेरे पिता ने मुझे एक उपहार दिया तो उमरा-बिन्ते-रवाहा (रज़ि॰) यानी नोमान की माँ ने कहा कि जब तक आप अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को इस पर गवाह न बनाएँ मैं राज़ी नहीं हो सकती। अतः मेरे पिता ने आप (सल्ल॰) की सेवा में हाज़िर होकर कहा कि उमरा-बिन्ते-रवाहा से अपने बेटे को मैंने एक उपहार दिया तो उन्होंने कहा कि पहले मैं आप (सल्ल॰) को गवाह बना लूँ।

आप (सल्ल॰) ने पूछा कि इस जैसा उपहार तुमने अपनी सभी संतान को दिया है? उन्होंने उत्तर दिया, नहीं। इस पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह से डरो, और अपनी सन्तान के बीच न्याय किया करो।" इस पर वे लौटे और उपहार वापस ले लिया।" (हदीस : मुस्लिम-3969)

एक मख़ज़ूमिया महिला (फ़ातिमा-बिन्ते-असवद) जिसने चोरी कर ली थी, उसके मामले ने क़ुरैश को चिन्ता में डाल दिया। उन्होंने आपस में विचार-विमर्श किया कि इस विषय में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से बात-चीत कौन करे। आख़िर यह तय पाया कि उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि॰) आप (सल्ल॰) के बहुत प्रिय हैं। उनके सिवा और कोई इसका साहस नहीं कर सकता।

अतएव उसामा (रज़ि॰) ने आप (सल्ल॰) से कुछ कहा तो आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "ऐ उसामा! क्या तू अल्लाह की मर्यादाओं के सम्बन्ध में मुझ से छूट की सिफ़ारिश करता है?" फिर आप (सल्ल॰) खड़े हुए और एक संक्षिप्त अभिभाषण दिया, जिसमें आप (सल्ल॰) ने कहा : "पिछले बहुत-से समुदाय इसलिए विनाश को प्राप्त हुए कि जब उनका कोई प्रभावशाली व्यक्ति चोरी करता तो उसे छोड़ देते और यदि कोई कमज़ोर चोरी करता तो उसपर दण्ड लागू कर दिया करते और अल्लाह की क़सम! यदि फ़ातिमा-बिन्ते-मुहम्मद (अर्थात् मेरी बेटी फ़ातिमा) भी चोरी कर ले तो मैं उसका भी हाथ काट डालूँ।" (हदीस : बुख़ारी-3475, मुस्लिम-4187)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुम लोग अपने झगड़ों का निर्णय कराने मेरे पास आते हो। तुममें से कुछ अपने विवाद को सामने रखते हुए दूसरों से अधिक ज़ोरदार शब्दों का प्रयोग करते हैं। तो मैं फ़ैसला उस बुनियाद पर देता हूँ जो मैं उन लोगों से सुनता हूँ। (मेरे फ़ैसले के बारे में ध्यान रहे) यदि मैं एक आदमी को उसके भाई के हक़ में से कुछ दे दूँ तो उसे ऐसी स्थिति में उसे स्वीकार नहीं करना चाहिए, क्योंकि मैंने उसे नरक के टुकड़े में से एक टुकड़ा दिया है।" (हदीस : मुस्लिम-4247)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जब एक जज फ़ैसला देता है और उसने सही नतीजे पर पहुँचने की पूरी कोशिश की और उसका फ़ैसला सही है तो ऐसी स्थिति में उसके लिए दो इनाम हैं। लेकिन यदि उसने सही निर्णय पर पहुँचने की पूरी कोशिश की, लेकिन फ़ैसले में चूक हो गई तब भी उसके लिए एक इनाम है। (हदीस : मुस्लिम-4261)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "क्या मैं तुम्हें सबसे अच्छे गवाह के बारे में बताऊँ? यह वह है कि पूछने से पहले ही वह प्रमाण पेश कर दे।" (हदीस : मुस्लिम-4268)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "लोगो सुनो! न्याय करनेवाले लोग प्रकाश के मंच पर सर्वोच्च अल्लाह के पास दाईं ओर बैठे होंगे। सर्वोच्च अल्लाह के दोनों ओर दाएँ तरफ़ ही होंगे और दोनों तरफ़ ही प्रशंसनीय होंगे। (इनसाफ़ करनेवाले) वे लोग हैं जो अपने फ़ैसलों में इनसाफ़ करते हैं, अपने घरवालों

के बारे में और हर उस चीज़ में जो वे करते हैं।" (हदीस : मुस्लिम-4493)

ईश्वर के पैग़म्बर (सल्ल०) ने कहा : "ईश्वर की दृष्टि में सबसे ज़्यादा अप्रिय वह व्यक्ति है जो सख़्त झगड़ालू है।" (हदीस : बुख़ारी-2457)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "जो लोग मर गए उनको बुरा न कहो, क्योंकि जो कुछ उन्होंने आगे भेजा था उसके बाद वे ख़ुद पहुँच चुके हैं। उन्होंने बुरे-भले जो भी कार्य किए थे वैसा बदला पा लिया।"

(हदीस : बुख़ारी-6516, मुस्लिम-555)

बुरी आदतें

नबी (सल्ल०) ने कहा : "करुणामय अल्लाह ने तुम पर माता (और पिता) की नाफ़रमानी, लड़कियों को जीवित दफ़्न करना, हक़ों को अदा न करना और दूसरे का माल (अवैध रूप से) दबा लेना, हराम (वर्जित) ठहरा दिया है और व्यर्थ की वार्तालाप करने और अधिक प्रश्न करने और माल को बरबाद करने को अप्रिय ठहरा दिया है।" (हदीस : बुख़ारी-2408)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "लोगों पर एक ऐसा समय आएगा कि मनुष्य कोई परवाह नहीं करेगा कि जो उसने प्राप्त किया है वह हलाल (वैध सूत्रों से) है या हराम (अवैध सूत्रों से)।" (हदीस : बुख़ारी-2059)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "चार आदतें ऐसी हैं कि जिस व्यक्ति में भी वह होंगी, वह मुनाफ़िक (पाखण्डी) होगा। या उन चार में से यदि एक आदत भी उसमें है तो उसमें कपट की एक आदत है। यहाँ तक कि वह उसे छोड़ दे। जब बोले तो झूठ बोले, जब वादा करे तो पूरा न करे, जब सन्धि करे तो विश्वासघात करे, और जब झगड़े तो अभद्रता पर उतर आए।"

(हदीस : बुख़ारी-2459)

नबी (सल्ल०) से बड़े गुनाहों के बारे में पूछा गया तो आप (सल्ल०) ने कहा : "अल्लाह के साथ किसी को शरीक ठहराना, माँ-बाप का अनादर करना, किसी की हत्या करना और झूठी गवाही देना।"

(हदीस : बुख़ारी-2653, मुस्लिम-158)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "मुनाफ़िक़ (कपट रखनेवाले) की तीन निशानियाँ

हैं। जब बात करे तो झूठ कहे, जब अमानत सौंपी जाए तो विश्वासघात करे जब वादा करे तो पूरा न करे।" (हदीस : बुख़ारी-2682, मुस्लिम-113)

नबी (सल्ल॰) ने कहा, "अगले ईशदूतों की बताई बातों में एक यह भी थी कि जब लज्जा ही न रहे तो फिर जो चाहे वह करे।" (हदीस : बुख़ारी-6120)

अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने नबी (सल्ल॰) से पूछा : "अल्लाह की दृष्टि में कौन-सा गुनाह बड़ा है? कहा कि तुम अल्लाह के साथ किसी को साझी ठहराओ जबकि अल्लाह ही ने तुमको पैदा किया है।" मैंने कहा : "यह तो वास्तव में सबसे बड़ा गुनाह है। फिर उसके बाद कौन-सा गुनाह सबसे बड़ा है? फ़रमाया : "तुम अपनी सन्तान को इस भय से मार डालो कि वे तुम्हारे साथ खाएंगे।" मैंने पूछा : "और उसके बाद?" फ़रमाया : "यह कि तुम अपने पड़ोसी की स्त्री से व्यभिचार करो।" (हदीस : बुख़ारी-4477)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुम क़ियामत के दिन अल्लाह के यहाँ उस व्यक्ति को सबसे अधम पाओगे जो कुछ लोगों के सामने एक मुँह से आता है और दूसरों के सामने दूसरे मुँह से आता है।" (हदीस : बुख़ारी-6302)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "बदगुमानी (शक करना) से बचते रहो, क्योंकि बदगुमानी की बातें अकसर झूठी होती हैं। लोगों की बुराई खोजने के पीछे न पड़ो, आपस में द्वेष न रखो, किसी की पीठ-पीछे बुराई न करो, बुग़्ज़ (दुर्भावना) न रखो, बल्कि सब अल्लाह के बन्दे आपस में भाई-भाई बनकर रहो।" (हदीस : बुख़ारी-6214)

श्रेष्ठ आचरण

अबू-ज़र-ग़िफ़ारी (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने नबी (सल्ल॰) से पूछा कि कौन-सा कर्म श्रेष्ठ है? आप (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह पर ईमान लाना और जिहाद करना।" मैंने पूछा : और किस तरह का ग़ुलाम आज़ाद करना श्रेष्ठ है? आप (सल्ल॰) ने कहा : "जो सबसे ज़्यादा क़ीमती हो और मालिक की नज़र में अत्यधिक प्रिय हो।" मैंने अर्ज़ किया कि यदि मुझसे यह न हो सका? आप (सल्ल॰) ने कहा : "फिर किसी कमज़ोर या ऐसे व्यक्ति की सहायता करना जो अपना काम करने में असमर्थ हो।" उन्होंने कहा यदि मैं

यह भी न कर सका? इसपर आप (सल्ल०) ने कहा : "फिर लोगों को अपनी बुराई से सुरक्षित कर दो यह भी एक सदक़ा है, जिसे तुम स्वयं अपने ऊपर करोगे।" (हदीस : बुख़ारी-2518)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "कोई किसी से झगड़ा करे तो चेहरे (पर मारने) से परहेज़ करे।" (हदीस : बुख़ारी-2559)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "भूखे को खाना खिलाओ, मरीज़ की इयादत करो (हाल-चाल पूछो) और क़ैदी को छुड़ाओ (उसका अर्थदण्ड अदा करके)।" (हदीस : बुख़ारी-5373)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "तुममें से सबसे बेहतर वे हैं जिनके आचरण और चरित्र सबसे बेहतर हों।" (हदीस : बुख़ारी-6029)

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने कहा : "रास्ते पर बैठने से बचो।" सहाबियों ने पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! "हमारी ये बैठकें तो बहुत ज़रूरी हैं। हम दैनिक बातें वहीं किया करते हैं।" आप (सल्ल०) ने कहा : "अच्छा, जब तुम इन सभाओं में बैठना चाहते हो तो रास्ते का हक़ अदा किया करो (यानी रास्ते को उसका हक़ दो)।" सहाबियों ने निवेदन किया : "ऐ अल्लाह के रसूल! रास्ते का हक़ क्या है?" कहा : "(महिलाओं को देखने से) दृष्टि नीची रखना, राहगीर को न सताना, सलाम का जवाब देना, भलाई का आदेश देना, बुराई से रोकना।" (हदीस : बुख़ारी-6229)

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "छोटे बड़ों को सलाम करें, गुज़रनेवाले बैठे हुए लोगों को सलाम करें और कुछ लोगों का गरोह बड़े गरोह को सलाम करे।" (हदीस : बुख़ारी-6231)

नबी (सल्ल०) ने मना किया कि एक व्यक्ति अपनी जगह से हटा दिया जाए, ताकि दूसरा उसकी जगह बैठ सके, लेकिन लोगों को जगह बनानी चाहिए और फैल जाना चाहिए। हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि०) इसको अप्रिय जानते थे कि एक व्यक्ति अपनी जगह छोड़े और दूसरा आदमी उसकी जगह बैठे।" (हदीस : बुख़ारी-2670)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "जब तीन लोग एक साथ हों तो दो लोगों को

तीसरे को छोड़कर आपस में रहस्यमय बातें नहीं करनी चाहिए।"

(हदीस : बुख़ारी-6288)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "जो व्यक्ति भी अल्लाह और आख़िरत के दिन पर विश्वास रखता है उसको चाहिए कि या तो अच्छी बात करे या चुप रहे और जो व्यक्ति अल्लाह और आख़िरत के दिन पर विश्वास रखता है उसे चाहिए कि अपने पड़ोसी को दुखः न पहुँचाए। जो व्यक्ति अल्लाह और आख़िरत के दिन पर विश्वास रखता है उसे चाहिए कि दिल खोलकर अपने मेहमान का आदर-सत्कार करे।" (हदीस : बुख़ारी-6476)

उमर-बिन-अबू-सलमा (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) की निगरानी में था। मेरा हाथ (खाना खाते समय) प्लेट में चारों ओर घूमता रहता था। यह देखकर आप (सल्ल०) ने कहा : "बच्चे! अल्लाह का नाम लो, दाहिने हाथ से खाओ, और अपने से क़रीब की जगह से खाओ।"

(हदीस : मुस्लिम-5012)

विधवा और अनाथ

नबी (सल्ल०) ने कहा : "जो व्यक्ति एक विधवा या एक ग़रीब व्यक्ति का ध्यान रखे वह धर्मयुद्ध में लड़नेवाले के समान है जो अल्लाह की राह में संघर्ष करता है, या उस इबादत करनेवाले की तरह है जो रात-भर अल्लाह की इबादत करता है और दिन-भर रोज़ा रखता है।" (हदीस : बुख़ारी-5353)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "मैं और वह व्यक्ति जो एक यतीम का पालन-पोषण करता है, और उसका ख़्याल रखता है जन्नत में इस तरह होंगे।" और आप (सल्ल०) ने शहादत की उंगुली (तर्जनी) और बीच की उंगुली को मिलाकर बताया।" (हदीस : बुख़ारी-6005)

पड़ोसियों का हक़

हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मैंने नबी (सल्ल०) से पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे दो पड़ोसी हैं, मैं उन दोनों में से किसको हदिया (तोहफ़ा) भेजूँ?" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : "उसके पास जिसका द्वार तुम से अधिक निकट हो।" (हदीस : बुख़ारी-2259)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "जिबरील (अलैहि॰) मुझे पड़ोसी का हक़ अदा करने के बारे में बार-बार इस तरह उपदेश देते रहे कि मुझे ख़याल हुआ कि शायद पड़ोसी को विरासत में सम्मिलित न कर दें।

(हदीस : बुख़ारी-6014, मुस्लिम-6354)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "अल्लाह की सौगन्ध! वह ईमानवाला नहीं, अल्लाह की सौगन्ध! वह ईमानवाला नहीं, अल्लाह की सौगन्ध! वह ईमानवाला नहीं।" निवेदन किया गया : "कौन ऐ अल्लाह के रसूल?" फ़रमाया : "वह जिसकी बुराई से उसका पड़ोसी सुरक्षित न रहे।" (हदीस : बुख़ारी-6016)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुम में से कोई उस समय तक सच्चा मुस्लिम नहीं जब तक कि वह अपने भाई के लिए या आप (सल्ल॰) ने कहा कि अपने पड़ोसी के लिए वही चीज़ पसन्द न करे जो वह स्वयं अपने लिए पसन्द करता है।" (हदीस : मुस्लिम-72)

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "वह व्यक्ति जन्नत में नहीं जाएगा जिसके बुरे व्यवहार से उसका पड़ोसी सुरक्षित न हो।"

(हदीस : मुस्लिम-74)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता है उसे चाहिए कि अपने पड़ोसी को नुक़सान न पहुँचाए। जो व्यक्ति अल्लाह और आख़िरत के दिन पर विश्वास रखता है उसे चाहिए कि मेहमानों का आदर-सत्कार करे, और जो व्यक्ति अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता है उसे चाहिए कि अच्छी बात कहे या फिर चुप रहे।" (हदीस : मुस्लिम-76)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "ऐ अबू-ज़र! जब तुम सालन बनाओ तो उसमें पानी मिला दिया करो (मात्रा बढ़ाने के लिए) और उसको अपने पड़ोसी के पास भेज दिया करो।" (हदीस : मुस्लिम-6357)

अल्लाह से ताल्लुक़ (सम्बन्ध)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला (क़ियामत के दिन) उस व्यक्ति से पूछेगा, जिसे दोज़ख़ (नरक) का सबसे हलका अज़ाब (दंड) दिया

गया होगा, यदि दुनिया में तेरी कोई चीज़ होती तो क्या तू इस अज़ाब से छुटकारा पाने के लिए उसे बदले में दे सकता था? वह व्यक्ति कहेगा कि जी हाँ। इस पर अल्लाह कहेगा : "जब तू आदम के पीठ में था तो मैंने तुझसे इससे भी मामूली चीज़ की माँग की थी। (सृष्टि के आदि में ही) कि मेरा किसी को भी साझी न ठहराना, लेकिन (जब तू दुनिया में आया तो) तू ने इसी साझीदार ठहराने का कर्म अपना लिया।"

(हदीस : बुख़ारी-3334, मुस्लिम-7083)

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "जब अल्लाह तआला किसी के साथ अच्छा मामला करना चाहता है तो उसको आज़माइशों में डाल देता है।"

(हदीस : बुख़ारी-5645)

हज़रत मआज़-बिन-जबल (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) की सवारी पर आप (सल्ल०) के पीछे बैठा हुआ था और मेरे और नबी (सल्ल०) के बीच कजावे की पिछली लकड़ी के सिवा और कोई चीज़ रुकावट नहीं थी। इसी दशा में नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "ऐ मआज़!" मैं बोला : "हाँ, अल्लाह के रसूल मैं हाज़िर हूँ और आपकी पैरवी और आज्ञाकारिता के लिए तैयार हूँ।" फिर आप (सल्ल०) थोड़ी देर चलते रहे, उसके बाद फ़रमाया : "ऐ मआज़!" मैं बोला : "हाँ, अल्लाह के रसूल! हाज़िर हूँ आपकी पैरवी के लिए और आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार हूँ।" फिर आप (सल्ल०) थोड़ी देर चलते रहे, उसके बाद फ़रमाया : "ऐ मआज़!" मैंने कहा : "हाज़िर हूँ, आपकी पैरवी और आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार हूँ।" उसके बाद नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "तुम्हें मालूम है कि अल्लाह के अपने बन्दों पर क्या हक़ है?" मैंने निवेदन किया : "अल्लाह और उसके रसूल को ही अधिक मालूम है।" नबी (सल्ल०) ने कहा : "अल्लाह तआला का बन्दों पर हक़ यह है कि बन्दे उसी की विशिष्टतः इबादत करें और उसके साथ किसी को साझी न ठहराएँ।"

फिर आप (सल्ल०) थोड़ी देर चलते रहे, उसके बाद कहा : "ऐ मआज़! मैंने अर्ज़ किया, "हाज़िर हूँ ऐ अल्लाह के रसूल! आपकी इताअत के लिए तैयार हूँ।" नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "तुम्हें मालूम है कि बन्दों का अल्लाह पर क्या हक़ है जबकि वे ये काम कर लें?" मैंने कहा : "अल्लाह और उसके

रसूल ज़्यादा जानते हैं।" फ़रमाया : "फिर बन्दों का अल्लाह पर हक़ है कि वह उन्हें अज़ाब (दंड) न दे।" (हदीस : बुख़ारी-5967)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "जब तुम में से कोई दुआ करे तो अल्लाह से साफ़-साफ़ मांगे। यह न कहे कि ऐ अल्लाह! यदि तू चाहे तो मुझे दे दे। क्योंकि अल्लाह पर कोई ज़बरदस्ती करनेवाला नहीं है।" (हदीस : बुख़ारी-6338)

कुछ अनसारी सहाबियों ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से मांगा और जिसने भी नबी (सल्ल॰) से मांगा आप (सल्ल॰) ने उसे दिया, यहाँ तक कि जो माल आप (सल्ल॰) के पास था वह समाप्त हो गया। जब सब कुछ ख़त्म हो गया जो नबी (सल्ल॰) ने अपने दोनों हाथों से दिया था तो आप (सल्ल॰) ने कहा : "जो भी अच्छी चीज़ मेरे पास होती है मैं उसे तुमसे बचाकर नहीं रखता हूँ। बात यह है कि जो तुम में (माँगने से) बचता रहेगा अल्लाह भी उसे अपने पास से दे देगा और जो व्यक्ति सब्र करेगा अल्लाह भी उसे सब्र देगा और जो बेपरवाह रहना चाहेगा अल्लाह भी उसे बेपरवाह कर देगा और अल्लाह की कोई नेमत सब्र से बढ़कर तुमको नहीं मिली।"

(हदीस : बुख़ारी-6470, मुस्लिम-2291)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "अल्लाह तीन चीज़ें तुम्हारे लिए पसन्द करता है और तीन चीज़ें तुम्हारे लिए पसन्द नहीं करता है। वह तुमसे ख़ुश है कि तुम उसकी इबादत करते हो और उसके साथ किसी को उसका साझी नहीं ठहराते हो और यह कि तुम अल्लाह की रस्सी मज़बूती से पकड़े हुए हो और विभेद में नहीं पड़ते हो और वह तुम्हारे लिए नापसन्द करता है तुम्हारी बेकार बातें, लगातार माँगते रहना और धन की बरबादी।"

(हदीस : मुस्लिम-4255)

मिसालें

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "नेक और बुरे दोस्त की मिसाल मुश्क (कस्तूरी) साथ रखनेवाले और भट्टी धौंकने वाले जैसी है। जिसके पास मुश्क है वह उसमें से या तो तुम्हें कुछ तोहफ़े के रूप में देगा या तुम उससे ख़रीद सकोगे या (कम-से-कम) तुम उसकी सुगन्ध से आनन्दित हो ही सकोगे और भट्टी

धौंकने वाला या तो तुम्हारे कपड़े (भट्टी की आग से) जला देगा या तुम्हें उसके पास से एक बदबूदार धुवाँ पहुँचेगा।"

(हदीस : बुख़ारी-5534, मुस्लिम-6361)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "उस व्यक्ति की मिसाल जो अपने रब को याद करता है और उसकी मिसाल जो रब को याद नहीं करता, जीवित और अजीवित जैसी है।" (हदीस : बुख़ारी-6407)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "दो नेमतें ऐसी हैं कि प्रायः लोग उनकी क़द्र नहीं करते—स्वास्थ्य और (अच्छा काम करने के लिए) फ़ुरसत का समय।"

(हदीस : बुख़ारी-6412)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "हलाल (वैध) स्पष्ट है और हराम (अवैध) है और इन दोनों के बीच कुछ चीज़ें संदिग्ध हैं जिनको प्रायः लोग नहीं जानते, तो वे लोग जो इन संदिग्ध चीज़ों से होशियार रहते हैं वे अपना धर्म और इज़्ज़त सुरक्षित रखते हैं और वे जो इन संदिग्ध चीज़ों में पड़ते हैं वे वास्तव में अवैध चीज़ों में पड़ जाते हैं। जिस तरह एक चरवाहा अपने जानवर को एक खेत के चारों ओर चरा रहा हो वह जल्द ही अपने जानवरों को उस (खेत) के अन्दर चराने लगेगा। जान लो कि हर शासक की सीमाएं हैं और वे चीज़ें जिनको अल्लाह ने हराम कर दिया है वह उसकी सीमाएं हैं। जान लो कि शरीर में एक मांस का टुकड़ा है। यदि वह टुकड़ा सही है तो पूरा शरीर स्वस्थ है और यदि यह ख़राब हो गया तो पूरा शरीर ख़राब हो गया और सुनो, यह मांस का टुकड़ा हृदय है।" (हदीस : मुस्लिम-3882)

ज़ाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) उल्लेख करते हैं कि एक बार अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) बाज़ार में आलिया की ओर से आ रहे थे और लोग आप (सल्ल॰) के दोनों ओर मौजूद थे। वहाँ आप (सल्ल॰) ने एक मृत बकरा देखा जिसके बहुत छोटे कान थे। आप (सल्ल॰) ने उसके कान को पकड़ा और कहा : "तुममें से कौन है जो इसको एक दिरहम में ख़रीद ले? लोगों ने कहा : "हम तो इसको इससे कम पर भी नहीं ख़रीदेंगे, क्योंकि यह तो किसी काम का नहीं रहा।" पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा : "क्या कोई इसको बग़ैर क़ीमत लेगा?" लोगों ने कहा : "यदि यह जीवित होता तब भी हम उसको नहीं लेते

क्योंकि इसमें त्रुटि है, उसके कान बहुत छोटे हैं और अब तो यह मर चुका है।"

तब पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया : "अल्लाह की क़सम! यह दुनिया अल्लाह की दृष्टि में इससे भी अधिक महत्वहीन है जितना यह (मृत) बकरा तुम्हारी दृष्टि में।" (हदीस : मुस्लिम-7059)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "रात (स्वप्न में) मैंने दो आदमी देखे। वे दोनों मेरे पास आए और मुझे बैतुल-मक़दिस ले गए। फिर हम वहाँ से चले यहाँ तक कि हम एक ख़ून की नहर पर उतरे। वहाँ (नहर के किनारे) एक व्यक्ति खड़ा हुआ था और नहर के बीच में भी एक व्यक्ति खड़ा था। (नहर के किनारे) खड़े होने वाले के सामने पत्थर पड़े हुए थे। बीच नहरवाला आदमी आता और ज्यों ही वह आदमी चाहता कि बाहर निकल जाए तुरन्त ही बाहरवाला व्यक्ति उसके मुँह पर पत्थर खींच मारता जो उसे वहीं लौटा देता था, जहाँ वह पहले था। इसी प्रकार जब भी वह निकलना चाहता किनारे पर खड़ा हुआ व्यक्ति उसके मुँह पर पत्थर खींचकर मारता और वह जहाँ था वहीं लौट जाता। मैंने (अपने साथियों से, जो फ़रिश्ते थे) पूछा कि यह क्या है? तो उन्होंने इसका उत्तर दिया कि नहर में आप जिस व्यक्ति को देखा वह ब्याज खानेवाला व्यक्ति है।" (हदीस : बुख़ारी-2085)

तौबा

नबी (सल्ल०) ने कहा : "ख़ुदा की सौगंध! मैं दिन में सत्तर (70) बार से अधिक अल्लाह से इसतिग़फ़ार (क्षमा याचना) और तौबा करता हूँ।" (हदीस : बुख़ारी-6307)

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : "अल्लाह अपने बन्दे की तौबा पर तुममें से उस व्यक्ति से भी अधिक ख़ुश होता है जिसका ऊँट जो मरुस्थल में खो गया हो, उसे अचानक मिल जाए।" (हदीस : बुख़ारी-6309)

अंधविश्वास

पैग़म्बर (सल्ल०) के ज़माने में उस दिन सूर्य ग्रहण लगा जिस दिन (आप के बेटे) इबराहीम की मृत्यु हुई। कुछ लोग कहने लगे कि ग्रहण इबराहीम की

मौत की वजह से लगा है। इसलिए पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा : ग्रहण किसी की मृत्यु या जीवन से नहीं लगता। परन्तु जब तुम उसे देख लो तो नमाज़ पढ़ा करो और दुआ किया करो।" (हदीस : बुख़ारी-1043)

नबी (सल्ल॰) ने हुदैबिया में फ़ज्र (प्रभातकाल) की नमाज़ पढ़ाई। वहाँ रात में बारिश के कुछ निशान थे। नमाज़ ख़त्म होने के बाद आप (सल्ल॰) ने लोगों की ओर मुँह किया और फ़रमाया : "क्या तुम्हें पता है कि तुम्हारे प्रभु ने क्या फ़रमाया है?" लोगों ने उत्तर दिया : "अल्लाह और उसके रसूल अच्छी तरह जानते हैं।" यह सुनकर आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "अल्लाह कहता है "मेरे कुछ बन्दों ने सुबह मोमिन की हैसियत से की और कुछ लोगों ने इनकार करनेवाले की हैसियत से। वे लोग जिन्होंने कहा कि वर्षा अल्लाह की करुणा और कृपा से होती है वे मोमिन हैं और ज्योतिष का इनकार करते हैं और जिन्होंने कहा कि वर्षा उस (तारे) की गति की वजह से हुई, वे ईश्वर के इनकारी हैं और उन्होंने सितारों में अपना ईमान और पक्का कर लिया।"

(हदीस : मुस्लिम-132)

मूसा-बिन-तलहा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि मैं और पैग़म्बर (सल्ल॰) एक बार कुछ लोगों के पास से गुज़रे, जो खजूरों के पेड़ों के पास थे। आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : ये लोग क्या कर रहे हैं? लोगों ने कहा : "ये लोग पेड़ों की पैवन्दकारी कर रहे हैं, ताकि पैदावार ज़्यादा हो।" नबी (सल्ल॰) ने कहा : "मुझे नहीं लगता कि इसका कोई लाभ है।" लोगों को जब इसका पता चला तो लोगों ने पैवन्दकारी करनी रोक दी। बाद में नबी (सल्ल॰) को बताया गया कि इस साल पैदावार कम हुई। इस पर आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : यदि इस क्रिया से कोई लाभ है तो लोग इसे करते रहें और यह तो मेरी एक व्यक्तिगत राय थी और मेरी व्यक्तिगत राय को हमेशा सही न समझो। जब मैं अल्लाह की ओर से बात करूँ तो उसको मान लो। क्योंकि मैं अल्लाह की तरफ़ से कोई झूठ नहीं कहता।" (हदीस : मुस्लिम-5830)

प्राणों का आदर

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जिसने आत्महत्या किसी हथियार से की वह

हमेशा-हमेशा के लिए नरक में रहेगा और उसके हाथ में वही हथियार होगा जिसको वह बार-बार अपने पेट में मारता रहेगा। जो व्यक्ति विष खाकर अपने आपको मारे वह जहन्नम की आग में वही पिएगा जहाँ उसको हमेशा-हमेशा के लिए रहना है और जो अपने आपको किसी पहाड़ी की चोटी से गिराकर मारेगा वह बार-बार नरक की आग में गिरता रहेगा और वहीं हमेशा रहेगा।" (हदीस : मुस्लिम-199)

पैग़म्बर (सल्ल॰) के पास एक व्यक्ति (के मृत शरीर) को लाया गया जिसने अपने आपको एक चौड़े तीर से मार डाला था, तो आप (सल्ल॰) ने उसकी जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ी थी। (हदीस : मुस्लिम-2133)

इब्ने-अबू-लैला (रह॰) से रिवायत है कि क़ैस-बिन-साद (रज़ि॰) और सेहल-बिन-हुनैफ़ (रज़ि॰) दोनों क़ादसिया में थे कि एक जनाज़ा उनके सामने से गुज़रा तो दोनों खड़े हो गए। उनको बताया गया कि यह उस भूभाग के लोगों में से है यानी (सत्य का विरोध करनेवालों में से है) उन्होंने कहा कि नबी (सल्ल॰) के सामने से एक जनाज़ा गुज़रा तो आप (सल्ल॰) खड़े हो गए। आप (सल्ल॰) को बताया गया कि मरनेवाला तो यहूदी है। यह सुनकर आप (सल्ल॰) ने कहा : "क्या वह एक मनुष्य नहीं था और क्या उसकी आत्मा नहीं थी?" (हदीस : मुस्लिम-2098)

जानवरों पर दया

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "एक व्यक्ति जा रहा था। उसे बहुत प्यास लगी थी। उसने एक कुंए में उतरकर पानी पी लिया। फिर बाहर आया तो देखा कि एक कुत्ता हाँप रहा है। उसने (अपने दिल में) कहा : यह भी इस समय वैसा ही प्यासा है जैसा कुछ समय पहले मैं था। (इसलिए वह फिर कुँए में उतरा और) अपने चमड़े के मोज़े को (पानी से) भर कर उसे अपने मुंह से पकड़े हुए बाहर आया और कुत्ते को पानी पिलाया। अल्लाह तआला ने उसके इस कर्म को क़बूल किया और उसकी मुक्ति निश्चित कर दी।"

सहाबियों (रज़ि॰) ने पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! क्या हमें चौपायों पर

भी अज्र (बदला) मिलेगा?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "हर प्राणधारी (की सहायता) में सवाब (अज्र) है।" (हदीस : बुख़ारी-2363)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "एक महिला को यातना दी गई इस कारण से कि उसने एक बिल्ली को बन्द कर रखा था और वह भूख से मर गई और वह महिला इसी कारण से नरक में प्रविष्ट कर दी गई।" पैग़म्बर (सल्ल॰) ने आगे कहा : "अल्लाह ने उससे कहा और अल्लाह उससे अधिक जाननेवाला है, कि जब तूने उस बिल्ली को बांधे रखा उस वक़्त तक न तूने उसे खिलाया और न पिलाया और न छोड़ा कि वह धरती के कीड़े-मकोड़े खाकर ही अपना पेट भर लेती।" (हदीस : बुख़ारी-2365, मुस्लिम-6345)

सईद-बिन-ज़ुबैर (रज़ि॰) ने कहा कि मैं हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) के साथ था। वे कुछ नौजवानों (या यह कहा कि कुछ व्यक्तियों) के पास से गुज़रे, जिन्होंने एक मुर्ग़ी बांध रखी थी और उसपर तीर से निशाना लगा रहे थे। जब उन्होंने इब्ने-उमर (रज़ि॰) को देखा तो वहाँ से भाग गए। इब्ने-उमर (रज़ि॰) ने कहा : "यह कौन कर रहा था? ऐसा करनेवालों पर नबी (सल्ल॰) ने शाप भेजा है।" अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) ने कहा : "नबी (सल्ल॰) ने ऐसे व्यक्ति पर शाप भेजा है जो किसी जीवित पशु के पाँव या दूसरे अंग काट डाले।" (हदीस : बुख़ारी-5515, मुस्लिम-4815)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) जानवरों के चेहरे पर निशान लगाने को नापसन्द करते थे और इब्ने-उमर (रज़ि॰) ने बयान किया कि नबी (सल्ल॰) ने चेहरे पर मारने से मना किया है। (हदीस : बुख़ारी-5541)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जब तुम किसी उपजाऊ ज़मीन में सफ़र करो तो तुम्हें चाहिए कि अपनी गति कम रखो और ऊँटों को ज़मीन में चारा खाने का अवसर दो और जब तुम बंजर इलाक़े से गुज़रो जहाँ हरियाली कम हो तो ऊँटों को तेज़ चलाओ (कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे ऊँट चारे की कमी के कारण कमज़ोर हो जाएँ) और जब रात में कहीं ठहरो तो सड़क पर (ख़ेमा लगाने से) परहेज़ करो, क्योंकि रात में ऐसी जगह पर हानि पहुँचानेवाले कीड़े आराम करते हैं।" (हदीस : मुस्लिम-4723)

युद्ध की अवस्था

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "शत्रु से लड़ाई की कामना मत करो। लेकिन यदि जंग हो तो डट जाओ।" (हदीस : मुस्लिम-4313)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि एक महिला जंग में मुर्दा पाई गई। इस पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने महिलाओं और बच्चों की जंग में हत्या करना पूरी तरह मना कर दिया। (हदीस : मुस्लिम-4320)

हुज़ैफ़ा-बिन-यमान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि उन्होंने कहा : "बद्र की लड़ाई में भाग लेने से मुझे बस एक चीज़ ने रोका। मैं अपने पिता हुज़ैल के साथ जंग में भाग लेने के लिए आया। लेकिन हमारा सामना क़ुरैश के इस्लाम-दुश्मनों से हो गया। उन्होंने कहा : "क्या तुम मुहम्मद (सल्ल॰) के पास जा रहे हो?" हमने कहा : "हमारा उनके पास जाने का कोई इरादा नहीं। हम तो मदीना वापस जा रहे हैं। इसलिए उन्होंने हम से ख़ुदा के नाम पर वादा लिया कि हम मदीना वापस जाएंगे और मुहम्मद (सल्ल॰) के साथ मिलकर नहीं लड़ेंगे। हम नबी (सल्ल॰) के पास गए और सारी घटना कह सुनाई। आप (सल्ल॰) ने कहा : "तुम दोनों (मदीना) जाओ। हम उस वचन को पूरा करेंगे जो उन्होंने तुम से लिया है और अल्लाह से मदद चाहेंगे।"

(हदीस : मुस्लिम-4411)

सरकार की ज़िम्मेदारियाँ

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जो व्यक्ति (अपनी मृत्यु के समय) माल छोड़े तो वह उसके वारिसों का है और जो क़र्ज़ छोड़े तो वह हमारे ज़िम्मे है।"

(हदीस : बुख़ारी-2398, मुस्लिम-3948)

"पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़ैसला किया था कि जब रास्ते (की ज़मीन) के बारे में झगड़ा हो तो सात हाथ रास्ता छोड़ देना चाहिए।" (हदीस : बुख़ारी-2437)

आज़र क़बीले के एक सहाबी को जिनको इब्ने-अतबिया (रज़ि॰) कहते थे, अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने सदक़ा वुसूल करने के लिए ज़िम्मेदार बनाया। फिर जब वे वापस आए तो कहा कि यह तुम लोगों का है (यानी बैतुल-माल

का है) और यह उपहार मुझे मिला है। इस पर पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा कि वह अपने माता-पिता के घर में क्यों न बैठा रहा? देखता वहाँ भी उसे उपहार मिलता है या नहीं। उस ईश्वर की सौगन्ध जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं! इस (ज़कात के माल) में से यदि कोई व्यक्ति कुछ भी (नाजाइज़ तौर पर) लेगा तो क़ियामत के दिन वह उसे अपनी गर्दन पर उठाए हुए आएगा। अगर ऊँट है तो वह अपनी आवाज़ लगाता हुआ आएगा, गाय है तो वह अपनी और बकरी है तो वह अपनी आवाज़ निकालती हुई आएगी। फिर आप (सल्ल॰) ने अपने हाथ उठाए यहाँ तक कि हमने आप (सल्ल॰) के बगल मुबारक की सफ़ेदी भी देख ली (और कहा) : "ऐ अल्लाह! क्या मैंने तेरा आदेश पहुँचा दिया? ऐ अल्लाह! क्या मैंने तेरा आदेश पहुँचा दिया? (तीन बार आप ने यही कहा)।" (हदीस : बुख़ारी-2597, मुस्लिम-4509)

हज़रत अबू-मूसा अल-अशअरी (रज़ि॰) कहते हैं कि जब नबी (सल्ल॰) ने मुझे और मआज़-बिन-जबल (रज़ि॰) को (यमन) भेजा तो कहा कि (लोगों के लिए) आसानियाँ पैदा करना, तंगी में न डालना, उन्हें ख़ुशख़बरी सुनाना, नफ़रत न दिलाना और तुम दोनों आपस में मिल-जुलकर काम करना। अबू-मूसा (रज़ि॰) ने कहा : "ऐ अल्लाह के रसूल! हम ऐसे भूभाग में जा रहे हैं जहाँ शहद से शराब बनाई जाती है और उसे "अल-बित्अ" कहा जाता है और जौ से शराब बनाई जाती है और उसे "अल-मिज़्र" कहा जाता है।" नबी (सल्ल॰) ने कहा : "हर नशा लानेवाली चीज़ हराम (वर्जित) है।"

(हदीस : बुख़ारी-6124)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "आसानी पैदा करो, तंगी न पैदा करो, लोगों को धीरज और सान्त्वना दो, नफ़रत न दिलाओ!"

(हदीस : बुख़ारी-6125, मुस्लिम-4300)

हज़रत अबू-मूसा अशअरी (रज़ि॰) ने बयान किया है कि मैं पैग़म्बर (सल्ल॰) के पास अपनी क़ौम के दो आदमियों को लेकर उपस्थित हुआ। उनमें से एक ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! हमें कहीं का प्रशासक बना दीजिए। दूसरे ने भी यही इच्छा जताई। इस पर नबी (सल्ल॰) ने कहा : "हम ऐसे व्यक्ति को उत्तरदायित्व नहीं सौंपते जो उसकी चाहत करे और न उसे

देते हैं जो उसका लालची हो।" (हदीस : बुख़ारी-7149)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "यदि कोई व्यक्ति मुसलमानों का प्रशासक बनाया गया और उसने उसके मामले में बेईमानी की और उसी दशा में मर गया तो अल्लाह तआला उसपर जन्नत को अवैध कर देगा।"

(हदीस : बुख़ारी-7151)

अबू-बक्र (रज़ि॰) ने अपने बेटे (उबैदुल्लाह) को लिखा जो उस समय सजिस्तान में थे : दो आदमियों के बीच फ़ैसला उस समय न करना जब तुम ग़ुस्से में हो, क्योंकि मैंने पैग़म्बर (सल्ल॰) से सुना है कि कोई न्यायधीश दो आदमियों के बीच उस समय फ़ैसला न करे जब वह ग़ुस्से में हो।"

(हदीस : बुख़ारी-7158)

जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने मआज़-बिन-जबल (रज़ि॰) को यमन भेजा तो उनसे कहा : "तुम किताबवालों में से एक समुदाय के पास जा रहे हो। इसलिए उनका सबसे पहले इस ओर आह्वान करना कि वे अल्लाह को एक मानें (और मेरी रिसालत को समझें), जब वे इसे समझ लें तो फिर उन्हें बताना कि अल्लाह ने दिन और रात में उन पर पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ (अनिवार्य) की हैं। जब वे नमाज़ पढ़ने लगें तो उन्हें बताना कि अल्लाह ने उनपर उनके मालों में ज़कात फ़र्ज़ की है जो उनके अमीरों से ली जाएगी और उनके ग़रीबों को लौटा दी जाएगी। जब वे इसका भी इक़रार कर लें तो उनसे ज़कात वुसूल करो, लेकिन उसकी वुसूली में लोगों से अच्छा माल लेने से बचना।" (हदीस : बुख़ारी-7372)

हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-समरा (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने मुझसे कहा : "अब्दुर्रहमान! कभी भी हुकूमत की ज़िम्मेदारी मत मांगना। क्योंकि यदि तुम्हारे मांगने से यह तुम्हें मिल गई तो तुम अकेले छोड़ दिए जाओगे (यानी ज़िम्मेदारियों की अदायगी के सिलसिले में अल्लाह की सहायता शामिल नहीं होगी।) लेकिन यदि तुम्हें यह ज़िम्मेदारी बिना मांगे मिल जाए तो तुम्हारी मदद की जाएगी। (यानी ज़िम्मेदारियों की अदायगी के सिलसिले में अल्लाह की मदद तुम्हारे साथ होगी।) (हदीस : मुस्लिम-4487)

हज़रत अबू-ज़र गिफ़ारी (रज़ि॰) कहते हैं मैंने नबी (सल्ल॰) से निवेदन किया : "ऐ अल्लाह के रसूल! क्या आप मुझे किसी सरकारी पद पर नियुक्त नहीं करेंगे? आप (सल्ल॰) ने अपने हाथ से मेरे कंधे पर हलके से हाथ मारा और कहा : "अबू-ज़र! तुम कमज़ोर आदमी हो और पद एक धरोहर है और क़ियामत के दिन यह बेइज़्ज़ती की वजह बनेगा, सिवाए उन लोगों के जो अपने कर्तव्यों को निभाते रहे और अपनी ज़िम्मेदारियों को जो उन पर डाली गई है अच्छे ढंग से पूरा करते हैं।" (हदीस : मुस्लिम-4491)

हिश्शाम अपने पिता से उल्लेख करते हैं कि हकीम-बिन-हिज़ाम (रज़ि॰) कुछ लोगों के पास से गुज़रे जो सीरिया के किसान थे। उन लोगों को धूप में खड़े होने का आदेश दिया गया था। उन्होंने पूछा : "तुम लोगों का क्या प्रकरण है?" उन लोगों ने कहा : "हमको जिज़िया की वजह से गिरफ़्तार कर लिया गया है।" यह सुनकर हकीम-बिन-हिज़ाम (रज़ि॰) ने कहा : मैं यह गवाही देता हूँ कि मैंने नबी (सल्ल॰) को कहते हुए सुना कि अल्लाह तआला उन लोगों को अज़ाब देंगे जो इस दुनिया में लोगों को दुख पहुँचाते हैं।"
(हदीस : मुस्लिम-6328)

ख़ानदान

अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जब आदमी पुण्य की नीयत से अपने बाल-बच्चों पर ख़र्च करे तो वह भी उसके लिए सदक़ा (नेकी) है।"
(हदीस : बुख़ारी-55)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जो भी तुम अल्लाह को प्रसन्न करने के लिए ख़र्च करोगे वह तुम्हारे लिए पुण्य प्राप्ति का साधन होगा। यहाँ तक कि अगर एक निवाला (कोर) जो तुम अपनी पत्नी के मुँह में डालो।" (हदीस : बुख़ारी-56)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "जो व्यक्ति अपनी आमदनी में वृद्धि चाहता हो या लम्बी आयु चाहता हो तो उसे चाहिए कि रिश्ते-नाते को जोड़े रखे।" (हदीस : बुख़ारी-2067, मुस्लिम-6206)

एक सहाबी (साद-बिन-उबादा) ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से कहा कि मेरी माँ की अचानक मौत हो गई। मेरा विचार है कि यदि उन्हें बात-चीत

का अवसर मिलता तो वह सदक़ा करतीं। तो क्या मैं उनकी ओर से ख़ैरात कर सकता हूँ। आप (सल्ल॰) ने कहा : "हाँ, उनकी तरफ़ से ख़ैरात करो।"
(हदीस : बुख़ारी-2760)

हज़रत साद-बिन-उबादा (रज़ि॰) ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से मसला पूछा कि मेरी माँ का इन्तिक़ाल हो गया है और उसके ज़िम्मे एक नज़र थी। आप (सल्ल॰) ने कहा : "उनकी ओर से नज़्र पूरी कर दें।"
(हदीस : बुख़ारी-2761)

एक सहाबी नबी (सल्ल॰) की ख़िदमत में हाज़िर हुए और कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे सद्व्यवहार का सबसे अधिक हक़दार कौन है? आप (सल्ल॰) ने कहा : "तुम्हारी माँ।" पूछा : उसके बाद कौन है? फिर कहा : "तुम्हारी माँ।" पूछा : उसके बाद कौन? नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुम्हारी माँ"। उन्होंने पूछा : "उसके बाद कौन?" नबी (सल्ल॰) ने कहा : "फिर तुम्हारा बाप।" (हदीस : मुस्लिम-6180)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "वह व्यक्ति जो रिश्तेदारी के सम्बन्ध को तोड़ता है वह जन्नत में प्रवेश नहीं कर सकेगा।" (हदीस : मुस्लिम-6199)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "रहम यानी रिश्तेदारी को जोड़ने का शब्द का ताल्लुक़ रहमान से है। अतः जो कोई इससे अपने आप को जोड़ता है अल्लाह ने कहा कि मैं भी उसको अपने से जोड़ लेता हूँ और जो कोई उसे तोड़ता है मैं भी अपने आपको उससे तोड़ लेता हूँ।" (हदीस : बुख़ारी-5988)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "किसी काम का बदला देना रिश्ते-नाते को जोड़ना नहीं है। बल्कि रिश्ते-नाते को जोड़नेवाला वह है कि जब उसके साथ रिश्ते-नाते को जोड़ने का मामला न किया जा रहा हो तब भी वह रिश्ते-नाते को जोड़े।" (हदीस : बुख़ारी-5991)

जब यह आयत उतरी "अपने निकटतम संबंधियों को ईश्वर का भय दिलाओ।" (क़ुरआन, सूरा-26 शुअरा, आयत-214) तो नबी (सल्ल॰) ने क़ुरैश को आवाज़ दी तो वे लोग जमा हो गए। आप (सल्ल॰) ने उनको आम चेतावनी दी। फिर आप (सल्ल॰) ने कुछ ख़ास क़बीलों का नाम लिया और

कहा : "ऐ काब के बेटो और ऐ लवी के बेटो! अपने आपको आग से बचाओ। ऐं अब्दुश्शम्स के बेटो! अपने आपको आग से बचाओ। ऐ अब्दे-मनाफ़ के बेटो! अपने आपको आग से बचाओ। ऐ हाशिम के बेटो! अपने आपको आग से बचाओ। ऐ अब्दुल-मुत्तलिब के बेटो! अपने आपको आग से बचाओ। ऐ फ़ातिमा! अपने आपको आग से बचाओ। क्योंकि मेरे पास कोई शक्ति नहीं कि तुमको अल्लाह की पकड़ से बचा लूँ, सिवाए इसके कि मैं अपना नाता तुमसे शेष रखूँ।" (हदीस : मुस्लिम-399)

मैंने कहा : "ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी माँ जो अनेकेश्वरवादी है वह मेरे पास आती है। क्या मैं (उसकी इस्लाम-शत्रुता के होने पर भी) उससे अच्छा सुलूक करूँ?" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "हाँ।" (हदीस : मुस्लिम-2149)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "(किसी व्यक्ति के लिए) सबसे ज़्यादा नेकी का काम यह है कि वह अपने पिता (की मौत) के बाद उसके प्रियजनों का ध्यान रखे।" (हदीस : मुस्लिम-6193)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "वह व्यक्ति जिसने दो बेटियों का बेहतरीन अन्दाज़ में पालन-पोषण किया, यहाँ तक कि वह बड़ी हो गईं, तो वह व्यक्ति और मैं क़ियामत के दिन इस तरह आएँगे।" आप (सल्ल०) ने अपनी दो उंगलियों को मिलाकर बताया। (हदीस : मुस्लिम-6366)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "ख़ुशहाली यह नहीं है कि सामान ज़्यादा हो, ख़ुशहाली यह है कि दिल ग़नी (सन्तुष्ट) हो।"

(हदीस : बुख़ारी-6446, मुस्लिम-2287)

ईमानदारी

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा : "एक व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति से मकान ख़रीदा और मकान के ख़रीदार को उस मकान में एक घड़ा मिला जिसमें सोना भरा था। उसने जिससे वह मकान ख़रीदा था, उससे कहा : "भाई घड़ा ले जा। क्योंकि मैंने तुमसे घर ख़रीदा था, सोना नहीं ख़रीदा था।" लेकिन पहले मालिक ने कहा कि मैंने घर को उन तमाम चीज़ों समेत तुम्हें बेच दिया था जो उसके अन्दर थीं। ये दोनों एक तीसरे व्यक्ति के पास

अपना यह मामला लेकर गए। फ़ैसला करनेवाले ने उनसे पूछा : क्या तुम्हारी कोई सन्तान है?" उसपर एक ने कहा : मेरा एक लड़का है और दूसरे ने कहा कि मेरी एक लड़की है। फ़ैसला करनेवाले ने उनसे कहा कि लड़के से लड़की का ब्याह कर दो और सोना उन्हीं पर ख़र्च कर दो और बाक़ी ख़ैरात (दान) भी कर दो।" (हदीस : बुख़ारी-3427, मुस्लिम-4271)

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "अल्लाह जमील (सुन्दर) है और इसलिए वह केवल अच्छी चीज़ें ही पसन्द करता है और अल्लाह ने मोमिनों को हुक्म दिया जिस तरह रसूलों को यह कहते हुए आदेश दिया : "ऐ रसूलो! पवित्र चीज़ें कमाओ और अच्छे कर्म करो और जान लो कि मैं उन कर्मों से अवगत हूँ जो तुम करते हो।" (क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयत-51)

और अल्लाह ने कहा : "ऐ लोगो, जो ईमान लाए हो! उन पवित्र चीज़ों में से खाओ जो हमने तुम्हें दी हैं।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-172)

"...फिर नबी (सल्ल॰) ने उस व्यक्ति का उल्लेख किया जो बहुत दूर की यात्रा करता है। जिसके बाल बिखड़े होते हैं और जिसके पैर मिट्टी से सने होते हैं। वह अपने हाथ आसमान की ओर उठाता है (और दुआ करता है): ऐ मालिक! ऐ पालनहार! हालांकि उसका खाना हराम है, उसका पीना हराम है, उसका कपड़ा हराम है और वह हराम पर पला है। उसकी दुआ कैसे क़बूल हो सकती है।" (हदीस : मुस्लिम-2214)

अन्याय

नबी (सल्ल॰) ने कहा : जो व्यक्ति कोई ऐसी झूठी क़सम ख़ाए जिसके द्वारा वह किसी ईमानवाले के माल पर क़ब्ज़ा कर ले तो वह अल्लाह से उस हाल में मिलेगा कि अल्लाह उसपर बहुत अधिक क्रोधित होगा।" फिर आप (सल्ल॰) ने इस आयत का पाठ किया : "जो लोग अल्लाह के वचन और अपनी क़समों के ज़रिए से दुनिया की थोड़ी दौलत ख़रीदते हैं उन लोगों का आख़िरत में कोई हिस्सा न होगा और क़ियामत के दिन अल्लाह उनसे बात नहीं करेगा और न उनकी ओर देखेगा और न उन्हें पवित्र करेगा और उनके लिए दर्दनाक अज़ाब है।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-77; हदीस : बुख़ारी-2356)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "ज़ालिम (अत्याचारी) क़ियामत के दिन अंधेरे में होंगे।" (हदीस : बुख़ारी-2447)

नबी (सल्ल॰) ने जब मआज़ (रज़ि॰) को यमन का अधिकारी बनाकर भेजा तो आप (सल्ल॰) ने उन्हें उपदेश दिया कि उत्पीड़ित की बद-दुआ से डरते रहना, क्योंकि उस (दुआ) के और अल्लाह के बीच कोई परदा नहीं होता।" (हदीस : बुख़ारी-2448)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह संप्रभु ज़ालिम को छूट देता है, लेकिन जब उसकी पकड़ करता है तो वह उसको नहीं छोड़ता। (उस समय नबी सल्ल॰) ने यह आयत पढ़ी—

> "और तेरा रब जब किसी ज़ालिम बस्ती को पकड़ता है तो फिर उसकी पकड़ ऐसी ही हुआ करती है। वास्तव में उसकी पकड़ बड़ी सख़्त और दर्दनाक होती है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयत-102)(हदीस : मुस्लिम-6253)

दया

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह उन लोगों पर दया नहीं करेगा जो मनुष्यों पर दया नहीं करते।" (हदीस : बुख़ारी-7376)

नबी (सल्ल॰) की सेवा में कुछ बद्दू हाज़िर हुए और कहा : "क्या आप अपने बच्चों को प्यार करते (चुम्बन) हैं?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "हाँ।" इसपर उन लोगों ने कहा : "ईश्वर की सौगन्ध! हम अपने बच्चों को प्यार नहीं करते।" इसपर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "तब मैं क्या कर सकता हूँ जब अल्लाह ने तुमको दया से वंचित कर रखा है।"

(हदीस : मुस्लिम-5735)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह ने करुणा के सौ हिस्से बनाए और अपने पास उनमें से 99 हिस्से रखे। केवल एक हिस्सा पृथ्वी पर उतारा और उसकी वजह से तुम देखते हो कि सृष्टि के जीव एक-दूसरे पर दया करते हैं। यहाँ तक कि घोड़ी भी अपने बच्चे को अपना 'खुर' नहीं लगने देती, बल्कि

अपने खुर को उठा लेती है कि कहीं इससे उसके बच्चे को तकलीफ़ न पहुँचे।" (हदीस : बुख़ारी-6000, मुस्लिम-6629)

जन-कल्याण

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "कोई भी मुसलमान जो एक पौधा लगाए या खेत में बीज बोए, फिर उसमें से पशु, पक्षी या मनुष्य जो भी खाते हैं वह उसकी ओर से सदक़ा (दान) है।" (हदीस : बुख़ारी-2320)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुममें से जो भी बुरा काम होता देखे उसे चाहिए कि उसे अपने हाथ से रोक दे, यदि उसे उसकी ताक़त नहीं है तो अपनी ज़बान से रोक दे और यदि इतनी भी शक्ति न हो तो दिल में बुरा महसूस करे और यह ईमान की सबसे दुर्बल श्रेणी है।" (हदीस : मुस्लिम-79)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "यदि किसी के पास खेत है तो उसमें स्वयं खेती करे। लेकिन यदि वह स्वयं खेती नहीं करता तो अपने किसी भाई को उसमें खेती करने दे।" (हदीस : मुस्लिम-3716)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जमाख़ोरी केवल गुनाहगार (पापी) ही करते हैं।" (हदीस : मुस्लिम-3911)

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) ने बताया कि नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि आप (सल्ल॰) ने एक व्यक्ति को जन्नत में मज़े से घूमते हुए देखा। उसकी वजह यह थी कि उस व्यक्ति ने सड़क के बीच के एक पेड़ को इसलिए काटा, ताकि लोगों की परेशानी को दूर किया जा सके। (हदीस : मुस्लिम-6341)

हुमैद-बिन-अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) ने उम्मे-कुलसूम-बिन्ते-उक़बा-बिन-अबी-मुईत (रज़ि॰) से सुना, जो पैग़म्बर (सल्ल॰) के हाथ पर ईमान लानेवाली मुहाजिरीन में शुरुआती महिलाओं में से थीं। उन्होंने कहा कि मैंने नबी (सल्ल॰) को कहते हुए सुना—

"झूठा वह नहीं जो लोगों के बीच सुलह (मेल-मिलाप) कराने की कोशिश करता है और उस उद्देश्य के लिए कुछ अच्छी बात कह देता है (ताकि झगड़ा समाप्त हो) या अच्छी बात कहलवाता है।" (हदीस)

इब्ने-शहाब (रह०) कहते हैं : "मैंने नहीं सुना कि किसी झूठ में छूट दी गई हो, मगर तीन जगहों पर—जंग के दौरान या लोगों के बीच सुलह करवाने के उद्देश्य से या पति का पत्नी की तारीफ़ में कुछ बोलना और पत्नी का पति की तारीफ़ करना।" (हदीस : मुस्लिम-6303)

सामाजिक सम्पर्क

नबी (सल्ल०) लोगों के तोहफ़े स्वीकार करते थे और बदले में कुछ तोहफ़े भी देते थे।" (हदीस : बुख़ारी-5285)

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "ऐसा व्यक्ति जो तोहफ़े देकर वापस ले ले वह उस कुत्ते की तरह है जो उल्टी करने के बाद उसे चाट ले।" (हदीस : बुख़ारी-2589)

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के सामने से एक जनाज़ा (अर्थी) गुज़रा तो लोगों ने मरने वाले की तारीफ़ की। आप (सल्ल०) ने कहा : "(उसपर जन्नत) वाजिब हो गई।" फिर दूसरा जनाज़ा गुज़रा तो लोगों ने उसकी बुराई की या उसके सिवा और शब्द (उसी भाव को अदा करने के लिए) कहे (उल्लेखकर्ता को इस पर सन्देह है) आप (सल्ल०) ने कहा : "इस पर (दोज़ख़) वाजिब हो गई।" अर्ज़ किया गया : "ऐ अल्लाह के रसूल! आपने इस जनाज़े के बारे में कहा कि वाजिब हो गई और पहले जनाज़े पर भी यही कहा। आप (सल्ल०) ने कहा : "ईमानवालों की गवाही अल्लाह के दरबार में मानी जाती है। ये लोग ज़मीन पर अल्लाह के साक्षी हैं।" (हदीस : बुख़ारी-2642, मुस्लिम-2073)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "मेहमान का सत्कार तीन दिनों के लिए है और बहुत अधिक सद्व्यवहार और सुहृदयता एक दिन और एक रात के लिए है। यह मुसलमान के लिए गुनाह का काम है कि वह अपने भाई के यहाँ ठहरे यहाँ तक कि उसे गुनाहगार बना दे।" लोगों ने पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! एक मेहमान अपने मेज़बान को कैसे गुनाहगार बना सकता है?" आप (सल्ल०) ने कहा : "वह उसके यहाँ ठहरे यहाँ तक कि उसके पास उसके सत्कार के लिए कुछ भी शेष न बचे।" (हदीस : मुस्लिम-4287)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "जब तीन आदमी साथ हों तो तीसरे साथी को

छोड़कर दो आपस में काना-फूसी न करें।"

(हदीस : बुख़ारी-6288, मुस्लिम-5421)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "वह व्यक्ति जो एक रोगी व्यक्ति से मिलने जाता है वह जन्नत के बाग़ों में से एक बाग़ में है और यह उस समय तक है जब तक कि वह वहाँ से वापस न आ जाए।"

(हदीस : मुस्लिम-6227)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "अच्छी बातों में से किसी बात को भी महत्वहीन न समझो चाहे वह तुम्हारा तुम्हारे भाई से ख़ुशदिली से मिलना ही क्यों न हो।" (हदीस : मुस्लिम-6359)

धैर्य एवं संयम

एक बार हम अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के साथ थे कि आप (सल्ल॰) की किसी बेटी ने सन्देश भेजकर आप (सल्ल॰) को बुलाया और आप (सल्ल॰) को सूचित किया कि उनके किसी बच्चे का अन्तिम समय है। नबी (सल्ल॰) ने सन्देश देनेवाले से कहा कि वापस जाए और कह दे कि जो अल्लाह ने वापस ले लिया वह अल्लाह ही का था और जो अल्लाह ने दिया था वह तो उसका ही था और हर चीज़ का समय सुनिश्चित है; तो तुम उससे जाकर कहो कि सब्र करे और अल्लाह से पुण्यफल की मांग करे।"

सन्देश देनेवाला दुबारा वापस आया और कहा कि उसने आप (सल्ल॰) को आने की क़सम दी है। आप (सल्ल॰) खड़े हुए और साद-बिन-उबादा (रज़ि॰), मआज़-बिन-जबल (रज़ि॰) और मैं भी आप (सल्ल॰) के साथ चल पड़े। बच्चे को आप (सल्ल॰) की गोद में दिया गया। उसकी रूह ऐसी बेचैन लग रही थी मानो कि एक मशक में हो। आप (सल्ल॰) की आँखें भर आईं। साद (रज़ि॰) ने अर्ज़ किया : "ऐ अल्लाह के रसूल! यह क्या है?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "यह वह मुहब्बत और हमदर्दी है जो अल्लाह ने अपने प्रत्येक बन्दे के दिल में डाल रखी है और अल्लाह केवल अपने उन बन्दों से सहानुभूति दिखाता है जो सहानुभूति रखते हैं।" (हदीस : मुस्लिम-2008)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "वह व्यक्ति हम में से नहीं जो रोते हुए अपने

गालों पर मारे, गरेबान फाड़े और अज्ञानकाल की पुकार पुकारे।"
(हदीस : बुख़ारी-3519)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "बहादुर वह व्यक्ति नहीं जो बेहतरीन तरीक़े से कुश्ती लड़े, बल्कि बहादुर वह है जो ग़ुस्से के समय अपने ऊपर क़ाबू रखे।"
(हदीस : मुस्लिम-6313)

दान-पुण्य

नबी (सल्ल०) ने कहा : "जब औरत अपने घर का खाना (ग़ल्ला आदि) ख़र्च करे तो उसे ख़र्च करने का पुण्य मिलता है शर्त यह है कि उसकी नीयत घर बिगाड़ने की न हो और उसके पति को कमाने का और ख़ज़ाँची को भी ऐसा ही पुण्य मिलता है। एक का पुण्य दूसरे के पुण्य को कम नहीं करता।"
(हदीस : बुख़ारी-2056, मुस्लिम-2332)

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "यदि मेरे पास उहुद पहाड़ के बराबर भी सोना होता तब भी मुझे यह पसन्द नहीं कि तीन दिन बीत जाएँ और उस (सोने) का कोई हिस्सा मेरे पास रह जाए, सिवाए उसके जो मैं किसी को क़र्ज़ की वापसी के लिए रख छोड़ूँ।" (हदीस : बुख़ारी-2398)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "मनुष्य के शरीर में (तीन सौ साठ जोड़ों में से) हर जोड़ पर उस दिन का सदक़ा आवश्यक है, जिसमें सूरज उदय होता है और लोगों के बीच न्याय करना भी सदक़ा है।" (हदीस : बुख़ारी-2707)

हज़रत उमर-बिन-ख़त्ताब (रज़ि०) को ख़ैबर में ज़मीन का एक टुकड़ा मिला तो वे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की सेवा में विचार-विमर्श के लिए उपस्थित हुए और कहा : "ऐ अल्लाह के रसूल! मुझे ख़ैबर में ज़मीन का एक टुकड़ा मिला है। इससे अच्छा माल मुझे अब तक कभी नहीं मिला था। आप (सल्ल०) इसके बारे में क्या आदेश देते हैं?" आप (सल्ल०) ने कहा : "यदि जी चाहे तो अस्ल ज़मीन अपने पास रख और पैदावार सदक़ा कर दे।"

इब्ने-उमर (रज़ि०) बयान करते हैं कि हज़रत उमर (रज़ि०) ने उसको इस शर्त के साथ सदक़ा कर दिया कि न उसे बेचा जाएगा और न उसे किसी को भेंट किया जाएगा और न उसमें विरासत चलेगी। उसे उन्होंने मुहताजों के

लिए, रिश्तेदारों के लिए और ग़ुलाम आज़ाद कराने के लिए, अल्लाह के दीन के प्रचार-प्रसार के लिए और मेहमानों के लिए सदक़ा (दान) कर दिया और यह कि उसका देखरेख करनेवाला यदि दस्तूर के मुताबिक़ उसमें से अपनी ज़रूरत के अनुसार वसूल कर ले या किसी मुहताज को दे तो उसपर कोई आरोप नहीं। (हदीस : बुख़ारी-2737)

एक सहाबी ने नबी (सल्ल॰) से पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! कौन-सा सदक़ा अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "सदक़ा उस समय करना जब तुम स्वस्थपूर्ण हो कि (तुझको माल को बचाए रखने की) इच्छा भी हो जिससे कुछ माल जमा हो जाने की तुम्हें उम्मीद हो और (उसे ख़र्च करने की दशा में) ग़रीबी का भय हो और उसमें देरी न कर कि जब प्राण हलक़ तक पहुँच जाए तो कहने बैठ जाए कि इतना माल फ़ुलाँ के लिए, फ़ुलाँ को इतना देना। अब तो फ़ुलाँ का हो ही गया (जब तू दुनिया से चला)।"
(हदीस : मुस्लिम-2250)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "सबसे बेहतरीन सदक़ा वह है जिसे देकर देनेवाला मालदार ही रहे और हर हाल में ऊपर वाला हाथ (देनेवाले का) नीचे के (लेने वाले के) हाथ से बेहतर है और ख़र्च की शुरुआत उनसे करो जो तुम्हारी निगरानी में हैं।" (हदीस : बुख़ारी-5355)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "हर मुसलमान पर सदक़ा करना ज़रूरी है।" सहाबियों ने निवेदन किया : "यदि कोई चीज़ किसी को (सदक़ा के लिए) उपलब्ध न हो?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "फिर हाथ से काम करे और उससे खुद को भी लाभ पहुँचाए और सदक़ा भी करे।" सहाबियों ने पूछा : "यदि उसमें इसकी ताक़त न हो या कहा कि न कर सके?" नबी (सल्ल॰) ने कहा : "फिर किसी परेशानी में घिरे व्यक्ति की मदद करे।" सहाबियों ने निवेदन किया : "यदि वह यह भी न कर सके?" कहा : "फिर भलाई के लिए लोगों को उभारे या भलाई के काम करे।" निवेदन किया : "और यदि यह भी न करे सके तो?" नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : "फिर बुराई से रुका रहे कि यह भी उसके लिए सदक़ा है।" (हदीस : बुख़ारी-6022)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुम में कौन है जिसे अपने माल से ज़्यादा

अपने वारिस का माल प्यारा हो?" सहाबियों ने कहा : "ऐ अल्लाह के रसूल! हम में कोई भी ऐसा नहीं जिसे अपना माल ज़्यादा प्यारा न हो।" फिर नबी (सल्ल॰) ने कहा : "फिर उसका माल वह है जो उसने (मृत्यु से) पहले (अल्लाह के रास्ते में) ख़र्च किया और उसके वारिस का माल वह है जो वह छोड़कर मरा।" (हदीस : बुख़ारी-6442)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "दुनिया का वह हिस्सा जो तुम अल्लाह की राह में ख़र्च करते हो या उससे किसी ग़ुलाम को आज़ाद करते हो या किसी निर्धन को सदक़ा देते हो या अपने परिजनों की मदद करते हो, सबसे ज़्यादा पुण्य उसमें है जो तुम अपने परिजनों पर ख़र्च करते हो।"

(हदीस : मुस्लिम-2181)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "कोई दिन ऐसा नहीं गुज़रता कि अल्लाह का बन्दा सुबह उठे और उसके पास दो फ़रिश्ते न आएँ। उनमें से एक कहता है : "ऐ अल्लाह! जो तेरी राह में ख़र्च करता है उसको और अधिक दे।" दूसरा फ़रिश्ता कहता है : "उसको बरबाद कर जो उसको रोके रखता है।"

(हदीस : मुस्लिम-2205)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "एक आदमी अपनी हलाल कमाई में से एक खजूर दे और सर्वोच्च अल्लाह से उम्मीद करे कि वह उसे क़बूल कर ले तो अल्लाह उसको अपने दाहिने हाथ से क़बूल करते हैं। यदि यह केवल एक ख़जूर है तो वह भी अल्लाह के हाथ में बढ़ता रहता है जैसे तुम अपने घोड़े का पालन-पोषण करते हो, यहाँ तक कि वह खजूर पहाड़ से भी बड़ा हो जाता है।" (हदीस : मुस्लिम-2211)

एक बार हम नबी (सल्ल॰) के साथ सुबह-सुबह बैठे हुए थे कि कुछ लोग आए जो नंगे पैर, ऊपर का शरीर नंगा था, जो कम्बल या चादर लपेटे हुए थे और उनकी तलवारें उनकी गर्दनों में पड़ी हुई थीं। उनमें से तमाम लोग क़बीला-ए-मुज़र से सम्बन्ध रखते थे।

आप (सल्ल॰) के चेहरे का रंग बदल गया जब आप (सल्ल॰) ने उनको इतनी ग़रीबी की दशा में देखा। आप (सल्ल॰) घर आए और हज़रत बिलाल

(रज़ि॰) से अज़ान देने को कहा। उन्होंने अज़ान और इक़ामत कही और नबी (सल्ल॰) के पीछे लोगों ने नमाज़ अदा की। फिर आप (सल्ल॰) ने लोगों के सामने एक संक्षिप्त ख़ुतबा दिया जिसमें आप (सल्ल॰) ने क़ुरआन की आयत का पाठ किया कहा—

"लोगो! अपने रब से डरो जिसने तुमको एक जान से पैदा किया और उसी जान से उसका जोड़ा बनाया और उन दोनों से बहुत से पुरुष और स्त्रियाँ दुनिया में फैला दीं। उस अल्लाह से डरो जिसके माध्यम से तुम एक-दूसरे से अपना अधिकार माँगते हो, और नाते-रिश्तों के सम्बन्धों को बिगाड़ने से बचो। यक़ीन जानो कि अल्लाह तुमपर निगरानी कर रहा है।"

(क़ुरआन, सूरा-4, निसा, आयत-1)

फिर आप (सल्ल॰) ने सूरा हश्र की एक आयत पढ़ी : "ऐ लोगो, जो ईमान लाए हो! अल्लाह से डरो और हर व्यक्ति यह देखे (अच्छी तरह विचार करे) कि उसने कल के लिए क्या सामान किया है। अल्लाह से डरते रहो।"

(क़ुरआन, सूरा-59, हश्र, आयत-18)

तब जो लोग वहाँ उपस्थित थे सदक़ा देने में एक-दूसरे से आगे बढ़ जाने की कोशिश करने लगे। कुछ लोगों ने एक दीनार सदक़ा किया, कुछ ने दिरहम, दूसरों ने कपड़े, कुछ ने कुछ साअ् गेहूं, कुछ ने खजूर। यहाँ तक कि नबी (सल्ल॰) ने कहा : "(ले आओ) यदि आधी खजूर भी हो।"

फिर अनसार में से एक सहाबी रक़म से भरा थैला उठाकर लाए जो बड़ी मुश्किल से उठा पा रहे थे। दूसरे लोग भी उसी तरह लाते रहे। यहाँ तक कि मैंने दो बड़े-बड़े ढ़ेर खाने के सामान के और कपड़े के देखे और मैंने नबी (सल्ल॰) के चेहरे को (खुशी से) सोने की तरह चमकते हुए देखा। आप (सल्ल॰) ने कहा : "वह व्यक्ति जो इस्लाम में अच्छा उदाहरण स्थापित करे उसके लिए एक इनाम उस काम के करने पर है और एक इनाम उस वक़्त जब कोई उसको देखकर वही काम करे और अस्ल काम करनेवालों के इनाम में कोई कमी नहीं की जाएगी और यदि कोई इस्लाम में बुरे काम का उदाहरण स्थापित करे तो उसके ऊपर उस बुरे काम का बोझ और उसका भी बोझ

होगा जिसने उसको देखकर वह बुरा काम किया और करनेवाले के बोझ से कुछ भी कम नहीं किया जाएगा।" (हदीस : मुस्लिम-2219)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "ख़र्च करो और नापो नहीं! यदि ऐसा नहीं करोगे तो अल्लाह तुम्हारे बारे में भी हिसाब लेगा। जमाख़ोरी मत करो वरना अल्लाह तुम से छीन लेगा।" (हदीस : मुस्लिम-2244)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "ऐ आदम के बेटो! यह तुम्हारे लिए अच्छा है कि ज़्यादा माल ख़र्च करो। लेकिन अगर तुम उसको रोक लेते हो तो यह तुम्हारे लिए बुरा है। लेकिन तुम्हारे लिए इसमें कोई बुराई नहीं कि तुम वह रोक लो जो तुम्हारी ज़रूरत के लिए हो और सदक़ा अपने लोगों से शुरू करो। जान लो कि ऊपर वाला हाथ नीचे वाले हाथ से अच्छा है।"
(हदीस : मुस्लिम-2256)

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "फ़रिश्तों ने एक आदमी के प्राण निकाले जो तुम से पहले लोगों में रहता था। फ़रिश्तों ने पूछा : "क्या तुमने कभी कोई अच्छा काम किया?" उसने कहा : नहीं। फ़रिश्तों ने कहा : याद करने की कोशिश करो। उसने कहा : मैं लोगों को क़र्ज़ दिया करता था और अपने सेवकों से कहा करता था कि परेशान लोगों के साथ नर्म मामला करें और कठिन परिस्थितियों से जूझ रहे लोगों को और अवसर दें। अल्लाह ने फ़रिश्तों से कहा : तुम उस (की ग़लतियों) को अनदेखा करो।" (हदीस : मुस्लिम-3788)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "सदक़ा किसी भी स्थिति में सम्पत्ति को कम नहीं करता और वह बन्दा जो माफ़ कर दे, अल्लाह उसके सम्मान में वृद्धि करता है और जो विनम्रता दिखाए, अल्लाह लोगों की आँखों में ऊँचा कर देते हैं।" (हदीस : मुस्लिम-6264)

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : "एक बन्दा कहता है, 'मेरा माल, मेरा माल'। लेकिन उस दौलत में से केवल तीन चीज़ें उसकी हैं, जो कुछ वह खा ले या पहनकर इस्तेमाल कर ले और वह ख़राब हो जाए या फिर वह सदक़ा में दे दे और यह चीज़ वह है जिसे उसने अपने लिए सुरक्षित कर लिया। इसके अलावा जो कुछ है (वह तुम्हारे किसी काम का नहीं) क्योंकि तुम तो चले जाओगे और उसको दूसरों के लिए छोड़ दोगे।" (हदीस : मुस्लिम-7063)

ज़ुल्म

नबी(सल्ल॰) ने कहा : "जो व्यक्ति अपने धन की रक्षा करते हुए मारा जाए वह शहीद है।" (हदीस : बुख़ारी-2480)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "वह व्यक्ति जिसने ज़मीन के टुकड़े पर अन्यायपूर्ण क़ब्ज़ा किया। अल्लाह उसपर सातों ज़मीनों का बोझ डाल देगा।"

(हदीस : मुस्लिम-2920)

आत्म-सम्मान

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "मिसकीन वह नहीं है जो एक या दो खजूर, एक या दो निवाले (कौर) के लिए घर-घर माँगता फिरे, बल्कि मिसकीन वह है जो माँगने से बचता रहे और यदि तुम प्रमाण चाहो तो क़ुरआन से इस आयत को पढ़ लो जिसका अर्थ है कि वह लोगों से चिमटकर नहीं माँगते।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-273;
हदीस : बुख़ारी-4539, मुस्लिम-2261)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "वह व्यक्ति जो लकड़ी का गट्ठा अपनी पीठ पर लादकर लाए और उसको बेचे तो यह उसके लिए किसी व्यक्ति से माँगने से बेहतर है कि पता नहीं वह दे या न दे।"

(हदीस : बुख़ारी-2074, मुस्लिम-2267)

आस्था

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "इस्लाम का आधार पाँच चीज़ों पर है। पहला, गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं और निस्सन्देह मुहम्मद (सल्ल॰) अल्लाह के रसूल (पैग़म्बर) हैं और नमाज़ का आयोजन करना, ज़कात अदा करना, हज करना और रमज़ान के रोज़े रखना।"

(हदीस : बुख़ारी-8)

"एक साहब नबी (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुए और इस्लाम के बारे में पूछने लगे। आप (सल्ल॰) ने कहा : दिन और रात में पाँच नमाज़ें अदा करना। उसने पूछा : क्या इसके अलावा भी कुछ नमाज़ें हैं? आप

(सल्ल॰) ने कहा : "नहीं, यह दूसरी बात है कि तुम नफ़िल (स्वेच्छापूर्ण) पढ़ो। फिर रसूल (सल्ल॰) ने कहा : और रमज़ान के रोज़े हैं। उसने पूछा : इसके अलावा भी मुझ पर कुछ (रोज़े) वाजिब हैं? आप (सल्ल॰) ने कहा : नहीं, सिवाए उसके कि जो तुम स्वेच्छा से नफ़िल रखो।

तलहा (रज़ि॰) ने उल्लेख किया कि उनके समक्ष अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने ज़कात का भी उल्लेख किया तो उन्होंने पूछा : क्या जो फ़र्ज़ ज़कात आपने बताई है उसके अलावा भी मुझ पर कोई दान है? आप (सल्ल॰) ने कहा नहीं, सिवाए इसके जो तुम ख़ुद अपनी तरफ़ से दो। उसके बाद वह साहब यह कहते हुए जाने लगे कि अल्लाह गवाह है, न मैं इनमें कोई वृद्धि करूँगा और न कोई कमी। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : अगर उसने सच कहा तो सफल हुआ।" (हदीस : बुख़ारी-2678)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "सात तबाह कर देनेवाले गुनाहों से बचते रहो।" सहाबियों (रज़ि॰) ने पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! वे कौन-से गुनाह हैं?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह के साथ किसी को साझी ठहराना, जादू करना, किसी की नाहक़ जान लेना कि जिसे अल्लाह ने अवैध ठहरा दिया है, ब्याज खाना, अनाथ का माल खाना, लड़ाई में से भाग जाना, पाकदामन भोली-भाली ईमानवाली महिलाओं पर तोहमत लगाना।" (हदीस : बुख़ारी-2766)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "जिसने गवाही दी कि अल्लाह के सिवा कोई प्रभु-पूज्य नहीं, वह अकेला है। उसका कोई साझी नहीं और यह कि मुहम्मद (सल्ल॰) उसके बन्दे और रसूल हैं और यह कि ईसा (अलैहि॰) उसके बन्दे और रसूल हैं और उसका कलिमा (वाणी) है, जिसे पहुँचा दिया था अल्लाह ने मरयम तक और एक रूह है उसकी तरफ़ से और यह कि स्वर्ग सत्य है और नरक सत्य है। तो उसने जो भी अमल किया होगा (अन्ततः) अल्लाह तआला उसे जन्नत में दाख़िल करेगा। (हदीस : बुख़ारी-3435)

क़र्ज़

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पास जब किसी ऐसी मैयत (शव) को लाया जाता जिस पर किसी का क़र्ज़ होता तो आप (सल्ल॰) कहते कि क्या

उसने अपने क़र्ज़ के अदा करने के लिए भी कुछ छोड़ा है? फिर यदि कोई आप (सल्ल॰) को बता देता कि इतनी सम्पत्ति है जिससे क़र्ज़ अदा हो सकता है तो आप (सल्ल॰) उसकी नमाज़ पढ़ाते अन्यथा आप (सल्ल॰) मुसलमानों से ही कह देते कि अपने साथी की नमाज़ पढ़ लो। फिर जब अल्लाह ने आप (सल्ल॰) पर विजय के द्वार खोल दिए तो आप (सल्ल॰) ने कहा : "मैं मुसलमानों का स्वयं उनसे अधिक इसका पात्र हूँ। इसलिए जो भी मुसलमान मरे और वह क़र्ज़दार रहा तो उसका क़र्ज़ अदा करना मेरे ज़िम्मे है और जो मुसलमान माल छोड़ जाए वह उसके उत्तराधिकारियों का है।" (हदीस : मुस्लिम-3844)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "मालदार की ओर से (क़र्ज़ की अदायगी में) टाल-मटोल करना ज़ुल्म है।" (हदीस : मुस्लिम-2400)

अब्दुल्लाह-बिन-अबू-क़तादा (रज़ि॰) कहते हैं कि अबू-क़तादा (सल्ल॰) ने एक क़र्ज़दार से क़र्ज़ की अदायगी के लिए कहा। लेकिन क़र्ज़दार ग़ायब हो गया। जब बाद में उन्होंने उसको देखा तो उसने कहा : "आजकल मैं तंगी का शिकार हूँ, तो अबू-क़तादा (रज़ि॰) ने कहा कि क्या तुम अल्लाह की क़सम खाकर ऐसा कह सकते हो। तो उसने अल्लाह की क़सम खाई। इस पर अबू-क़तादा (रज़ि॰) ने कहा : मैंने नबी (सल्ल॰) को कहते हुए सुना कि जो व्यक्ति यह चाहे कि अल्लाह उसको क़ियामत की कठिनाइयों से बचा ले तो उसे चाहिए कि परेशान क़र्ज़दार को और समय दे या उसको छोड़ ही दे।"
(हदीस : मुस्लिम-3795)

जाबिर (रज़ि॰) कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) ने ब्याज लेने और देनेवाले, उसका हिसाब रखनेवाले और दोनों गवाहों पर लानत (कठोर निंदा) भेजी। आप (सल्ल॰) ने कहा : "ये सब बराबर हैं।" (हदीस : मुस्लिम-3881)

लालच और स्वार्थ

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तीन प्रकार के लोग वहाँ होंगे जिनकी ओर क़ियामत के दिन अल्लाह दृष्टिपात भी नहीं करेगा और न उन्हें पवित्र करेगा, बल्कि उनके लिए कठोर दण्ड होगा। एक वह व्यक्ति जिसके पास आवश्यकता से अधिक पानी हो और उसने किसी मुसाफ़िर को उसके इस्तेमाल से रोक

दिया। दूसरा वह व्यक्ति जो किसी शासक से केवल दुनिया के लिए वचन बद्ध हो कि यदि वह शासक उसे कुछ दे तो वह सन्तुष्ट हो अन्यथा असन्तुष्ट। तीसरा वह व्यक्ति जो अपना बेचने का सामान संध्याकाल के बाद लेकर खड़ा हो और कहने लगे कि उस अल्लाह की सौगन्ध जिसके सिवा कोई सच्चा पूज्य-प्रभु नहीं, मुझे इस सामान की क़ीमत इतनी-इतनी मिल रही थी, उसपर एक व्यक्ति ने उसे सच समझा और (उसकी बताई हुई क़ीमत पर उस सामान को ख़रीद लिया) फिर आप (सल्ल॰) ने इस आयत (क़ुरआन, सूरा-3, आले-इमरान, आयत-77) का पाठ किया (जो लोग अल्लाह को बीच में रखकर और झूठी सौगन्ध खाकर दुनिया का थोड़ा-सा माल मोल लेते हैं...)। (हदीस : बुख़ारी-2358)

मैंने नबी (सल्ल॰) को कहते हुए सुना : "बूढ़े आदमी का दिल दो चीज़ों के बारे में हमेशा जवान रहता है, दुनिया की मुहब्बत और लम्बी ज़िन्दगी की आशा।" (हदीस : बुख़ारी-6420, मुस्लिम-2277)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "यदि आदम (अलैहि॰) की सन्तान (अर्थात् मनुष्य) के पास दो घाटियों से भरा हुआ ख़ज़ाना भी हो तो वह तीसरी घाटी के भरे हुए ख़ज़ाने की इच्छा में लगा रहेगा और आदम (अलैहि॰) की सन्तान (अर्थात् मनुष्य) का पेट किसी चीज़ से नहीं भरता सिवाए (क़ब्र की) मिट्टी के और अल्लाह तौबा करनेवालों की तौबा क़बूल करता है।"

(हदीस : मुस्लिम-2282)

लेन-देन

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह ऐसे व्यक्ति पर दया करे जो बेचते समय और ख़रीदते समय और पैसे की वापसी की माँग करते समय उदारता और नर्मी से काम लेता है।" (हदीस : बुख़ारी-2076)

नबी (सल्ल॰) पर एक व्यक्ति का एक विशेष आयु का ऊँट क़र्ज़ था। वह व्यक्ति आप (सल्ल॰) से लौटाने की माँग करने आया तो आप (सल्ल॰) ने कहा कि उसे ऊँट दे दो। सहाबियों (रज़ि॰) ने ढूँढ़ा, लेकिन ऐसा ही ऊँट मिल सका जो क़र्ज़ देनेवाले ऊँट से अच्छी (अधिक) आयु का था। आप (सल्ल॰)

ने फ़रमाया कि उसे वही दे दो। इसपर उस व्यक्ति ने कहा कि आप (सल्ल॰) ने मुझे मेरा हक़ पूरी तरह दिया। अल्लाह आप (सल्ल॰) को भी इसका पूरा-पूरा बदला दे। आप (सल्ल॰) ने कहा कि तुम में बेहतर आदमी वह है जो क़र्ज़ अदा करने में भी सबसे अच्छा हो।" (हदीस : बुख़ारी-2393)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "किसी को नहीं चाहिए कि उस चीज़ का सौदा करे जब तुम्हारा भाई एक चीज़ का सौदा कर रहा हो और न ही विवाह का सन्देश भेजे यदि उसे पता हो कि किसी दूसरे भाई ने उस लड़की के लिए सन्देश भेजा है। अथवा यह कि दूसरा व्यक्ति उसकी अनुमति दे दे।" (हदीस : मुस्लिम-3618)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "यदि किसी ने अनाज ख़रीदा है तो उसे उस समय तक न बेचे जब तक वह उसे अपने क़ब्ज़े में न ले ले।" इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) कहते हैं कि मैं इस उसूल को खाने की हर चीज़ के बारे में सही समझता हूँ। (हदीस : मुस्लिम-3642)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "एक सौदा करते समय दोनों पक्ष उस सौदे को उस समय तक रद्द करने का अधिकार रखते हैं जब तक कि वे वहाँ से हट न जाएँ सिवाए उन सौदों के जिनमें दोनों पक्षों को सौदा रद्द करने का अधिकार दिया गया हो।" (हदीस : मुस्लिम-3656)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फलों को उस समय तक बेचने से मना किया जब तक वे पूरे तैयार न हो जाएँ। आप (सल्ल॰) ने बेचने और ख़रीदनेवालों, दोनों को इससे रोका।" (हदीस : मुस्लिम-3665)

मुहम्मद (सल्ल॰)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "मेरा सन्देश लोगों को पहुँचाओ चाहे एक ही आयत हो और बनी-इसराईल की घटनाएँ तुम बयान कर सकते हो, उनमें कोई हर्ज नहीं और जिसने मुझ पर जान-बूझ कर झूठ बांधा वह अपना ठिकाना नरक में बना ले।" (हदीस : बुख़ारी-3461)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "सौगन्ध है उसकी जिसके हाथ में

मेरी जान है! तुममें से कोई भी ईमानवाला न होगा जब तक कि मैं उसके पिता, सन्तान और तमाम लोगों से अधिक उसका प्रिय न बन जाऊँ।"

(हदीस : बुख़ारी-14)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "मुझ पर झूठ मत बोलो। क्योंकि जो मुझ पर झूठ बांधेगा वह दोज़ख़ में दाख़िल होगा।" (हदीस : बुख़ारी-106)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "हर मोमिन से मैं दुनिया और आख़िरत में सबसे अधिक निकट हूँ। यदि तुम चाहो तो यह आयत पढ़ लो : 'नबी मोमिनों से उनकी जान से भी अधिक निकट हैं।' (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-6) इसलिए जो मोमिन संसार से चला जाए और सम्पत्ति छोड़ जाए तो चाहिए कि उसके वारिस उसके मालिक हों और जो व्यक्ति क़र्ज़ छोड़ जाए या सन्तान छोड़ जाए तो वे मेरे पास आ जाएँ कि उनका वली (संरक्षक) मैं हूँ।"

(हदीस : बुख़ारी-2399)

अबू-सुफ़ियान (रज़ि॰) ने मुझसे कहा कि हिरक़ुलस ने उनसे कहा था कि मैंने तुमसे पूछा कि वह (मुहम्मद सल्ल॰) तुम्हें किस बात का हुक्म देते हैं तो तुमने बताया कि वे तुम्हें नमाज़, सच्चाई, सुचरित्रता, वादे को पूरा करने और अमानत को अदा करने का हुक्म देते हैं और ये नबी की विशेषताएँ हैं।"

(हदीस : बुख़ारी-2681)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "मैं ईसा-इब्ने-मरयम (अलैहि॰) से और लोगों की तुलना में अधिक निकट हूँ, दुनिया में भी और आख़िरत में भी और सारे नबी (वे दो भाई जिनकी माँ अलग-अलग हो और पिता एक हो) भाइयों की तरह हैं। उनकी समस्याएँ अलग-अलग हैं, लेकिन धर्म सबका एक ही है।"

(हदीस : बुख़ारी-3443)

मैंने नबी (सल्ल॰) से सुना : आप (सल्ल॰) ने कहा : "मुझे मेरे मर्तबे (पद) से ज़्यादा न बढ़ाओ जैसे ईसा-इब्ने-मरयम को ईसाइयों ने उनके पद से ज़्यादा बढ़ा दिया है। मैं तो केवल अल्लाह का बन्दा हूँ। इसलिए यही कहा करो (मेरे बारे में) कि मैं अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल हूँ।"

(हदीस : बुख़ारी-3445)

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा : "मेरे पाँच नाम हैं। मैं मुहम्मद, अहमद और माही (यानी मिटानेवाला) हूँ कि अल्लाह तआला मेरे ज़रिए से कुफ़्र (असत्य) को मिटाएगा और मैं हाशिर हूँ कि समस्त मनुष्यों का (क़ियामत के दिन) मेरे बाद हश्र (उठाया जाना) होगा और मैं आक़िब यानी ख़ातिमुन्नबीईन (नबूवत के क्रम का अन्त करनेवाला) हूँ। मेरे बाद कोई पैग़म्बर दुनिया में नहीं आएगा।" (हदीस : बुख़ारी-3532)

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा : "मेरी और मुझसे पहले के सभी नबियों की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति ने एक घर बनाया और उसमें हर तरह की सजावट की, लेकिन एक कोने में एक ईंट की जगह छूट गई। अब लोग आते हैं और मकान को चारों ओर से घूम कर देखते हैं और आश्चर्य में पड़ जाते हैं, लेकिन यह भी कहते हैं कि यहाँ पर एक ईंट क्यों न रखी गई, तो मैं ही वह ईंट हूँ और मैं ख़ातिमुन्नबीईन (अन्तिम नबी) हूँ।"
(हदीस : बुख़ारी-3535)

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के घरवालों ने आपके अन्तिम समय तक कभी तीन दिन लगातार पेट भरकर खाना नहीं खाया।" (हदीस : बुख़ारी-5374)

नबी (सल्ल०) के परिजनों ने यदि कभी एक दिन में दो बार खाना खाया तो ज़रूर उसमें एक केवल खजूरें होती थीं। (हदीस : बुख़ारी-6455)

पैग़म्बर (सल्ल०) का बिस्तर चमड़े का था और उसमें खजूर की छाल भरी होती थी। (हदीस : बुख़ारी-6456)

हज़रत आइशा (रज़ि०) ने बयान किया कि हमारे ऊपर ऐसा महीना भी गुज़र जाता कि चूल्हा नहीं जलता, केवल खजूर और पानी होता था। हाँ, यदि कभी किसी जगह से थोड़ा-सा गोश्त तोहफ़े में आ जाता था तो उसको भी खा लेते थे।" (हदीस : बुख़ारी-6458)

जब भी नबी (सल्ल०) को दो चीज़ों में से एक चीज़ का अधिकार दिया जाता तो आप (सल्ल०) उनमें से आसान चीज़ का चुनाव करते, जब तक कि उसमें गुनाह का ख़तरा न होता। लेकिन यदि गुनाह का ख़तरा होता तो आप (सल्ल०) उससे दूर रहते। आप (सल्ल०) ने कभी किसी से बदला केवल अपने

व्यक्तिगत कारण से नहीं लिया। आप (सल्ल॰) ने केवल उसी समय सज़ा दी जब अल्लाह की सीमाओं का उल्लंघन किया गया। ऐसी स्थिति में आप (सल्ल॰) अल्लाह के लिए बदला लेते।" (हदीस : बुख़ारी-6126, मुस्लिम-5725)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अब्बास (रज़ि॰) कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) दान देने में सबसे आगे थे। लेकिन रमज़ान में आप (सल्ल॰) की दानशीलता अपने शिखर पर होती। जिबरील (अलैहि॰) आप (सल्ल॰) के पास हर साल रमज़ान में आते और आप (सल्ल॰) उनको क़ुरआन सुनाते और जब जिबरील (अलैहि॰) आप (सल्ल॰) के पास आते तो उस समय आप (सल्ल॰) चलती हवा से भी ज़्यादा भलाई पहुँचाने में दानशील हो जाया करते थे।

(हदीस : मुस्लिम-5718)

अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) पर्दे के पीछे बैठी हुई कुँवारी कन्या से भी अधिक शरमीले थे और जब आप (सल्ल॰) को कोई चीज़ बुरी लगती तो हम आप (सल्ल॰) के चेहरे से अनुमान लगा लेते।

(हदीस : मुस्लिम-5739)

मसरूक़ (रह॰) उल्लेख करते हैं कि हम अब्दुल्लाह-बिन-अम्र (रज़ि॰) के पास गए जब अमीर मुआविया (रज़ि॰) कूफ़ा आए। उस समय उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का उल्लेख किया और कहा : "नबी (सल्ल॰) कभी भी असंयमित बात मुँह से नहीं निकालते थे और न ही कभी किसी को बुरा-भला कहते थे। आप (सल्ल॰) ने कहा : "तुम में से बेहतरीन वे हैं जो चरित्र में तुम में सबसे अच्छे हों।" (हदीस : मुस्लिम-5740)

जाबिर-बिन-सुमरा (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने आप (सल्ल॰) के साथ पहली नमाज़ पढ़ी। फिर आप (सल्ल॰) अपने घर गए और मैं भी आप (सल्ल॰) के साथ गया। रास्ते में आप (सल्ल॰) बच्चों से मिले। आप (सल्ल॰) ने उनके गाल थपथपाए। आप (सल्ल॰) ने मेरे गाल भी थपथपाए तो मैंने आप (सल्ल॰) के हाथों की ठण्डक और उनकी सुगन्ध महसूस की। ऐसा लगा कि इत्र की शीशी खुल गई हो। (हदीस : मुस्लिम-5758)

हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) का रंग बहुत साफ़ था

और आप (सल्ल॰) के पसीने के क़तरे मोती की तरह चमकते थे। जब आप (सल्ल॰) चलते थे तो आगे की ओर झुककर चलते थे और मैंने जब भी मख़मल और रेशम के कपड़े को छुआ तो मैंने कभी भी उनको इतना मुलायम नंहीं पाया जितना नबी (सल्ल॰) की हथेली और मैंने कभी भी कोई ख़ुशबू आप (सल्ल॰) के शरीर की ख़ुशबू से अधिक अच्छी नहीं पाई।

(हदीस : मुस्लिम-5760)

हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती है : "जब नबी (सल्ल॰) पर वह्य अवतरित होती, चाहे तीव्र सर्दी में भी, तो आप (सल्ल॰) की पेशानी पर पसीना आ जाता।" (हदीस : मुस्लिम-5764)

हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती हैं कि हारिस-बिन-हिश्शाम (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) से पूछा : "आप पर वह्य कैसे आती है?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "कभी तो मेरे ऊपर घंटी बजने की तरह आती है और यह मेरे लिए सबसे कठिन समय होता है और जब यह सिलसिला समाप्त होता है तो मैं उसे याद रखता हूँ (जो भी वह्य अवतरित होती है) और कभी-कभी फ़रिश्ता मनुष्य के रूप में मेरे पास आता है (और मुझसे बात करता है) और जो कुछ वह कहता है मैं उसको याद रखता हूँ।" (हदीस : मुस्लिम-5765)

बराअ्-बिन-आज़िब (रज़ि॰), कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) का चेहरा मुबारक मर्दों में सबसे अधिक ख़ूबसूरत और आप (सल्ल॰) के आचार-विचार सबसे अधिक अच्छे थे। आप (सल्ल॰) न बहुत लम्बे थे और न छोटे क़द के।

(हदीस : मुस्लिम-5772)

निष्ठावान मित्र

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "अपने भाई की सहायता करो चाहे वह अत्याचारी हो या (पीड़ित)।" सहाबियों ने पूछा : "ऐ अल्लाह के रसूल! हम पीड़ित की मदद तो कर सकते हैं, लेकिन अत्याचारी की मदद किस तरह करें?" आप (सल्ल॰) ने कहा : "ज़ुल्म से उसका हाथ पकड़ लो यही उसकी मदद है।"

(हदीस : बुख़ारी-2444)

जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) कहते हैं कि दो युवकं के बीच झगड़ा हो

गया। उनमें एक मुहाजिरीन (शरणार्थियों) में से था और दूसरा अनसार में से था। मुहाजिर युवक ने मुहाजिरों को अपनी मदद के लिए आवाज़ दी और अनसारी युवक ने अनसार को मदद के लिए बुलाया। उसी बीच नबी (सल्ल॰) वहाँ पहुँच गए और पूछा : "यह क्या हो रहा है? जाहिलियत के नारे लग रहे हैं? लोगों ने कहा : "ऐ अल्लाह के रसूल! कोई ख़ास बात नहीं। युवकों के बीच एक झगड़ा हुआ और एक ने दूसरे के पीठ पर मारा।" इस पर नबी (सल्ल॰) ने कहा : "सुनो! एक आदमी को अपने भाई की मदद करनी चाहिए, चाहे वह अत्याचारी हो या पीड़ित। यदि वह अत्याचारी है तो उसको अत्याचार से रोक रखना चाहिए। यह उसकी मदद है और अगर वह पीड़ित है तो उसकी अत्याचार के ख़िलाफ़ सहायता करनी चाहिए।" (हदीस : मुस्लिम-6245)

मिल-बाँटकर खाना

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "दो लोगों का खाना तीन के लिए पर्याप्त है और तीन लोगों का खाना चार के लिए पर्याप्त है।" (हदीस : बुख़ारी-5392)

कर्मचारियों से अच्छा सुलूक

मैं अबू-ज़र (रज़ि॰) से रबदा में मिला। वह एक जोड़ा पहने हुए थे और उनका ग़ुलाम भी वैसा ही जोड़ा पहने हुए था। मैंने उसका कारण पूछा तो कहने लगे कि मैंने एक व्यक्ति (यानी ग़ुलाम) को बुरा-भला कहा और उसकी माँ की ग़ैरत दिलाई (यानी गाली दी) तो रसूल (सल्ल॰) ने यह मालूम करके मुझ से कहा : "ऐ अबू-ज़र! तूने उसे माँ के नाम पर ग़ैरत दिलाई। निस्सन्देह तुझमें अज्ञानकाल का अब तक कुछ प्रभाव शेष है। (याद रखो) तुम्हारे अधीन लोग तुम्हारे भाई हैं। अल्लाह ने उन्हें तुम्हारे नियन्त्रण में दे रखा है। अतः जिसका अधीन उसका कोई भाई हो तो उसको भी वही खिलाए जो स्वयं खाता है और वही कपड़ा पहनाए जो स्वयं पहनता है और उनको इतने काम की तकलीफ़ न दो कि उनके लिए कठिन हो जाए और यदि उनपर सख़्त काम डालो तो तुम स्वयं भी उनकी मदद करो।"

(हदीस : बुख़ारी-30, मुस्लिम-4092)

अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) कहते हैं : "मैंने नबी (सल्ल॰) की दस वर्षों

तक सेवा की। अल्लाह की क़सम! आप (सल्ल॰) ने मुझ से कभी कोई सख़्त बात नहीं की, न कभी आप (सल्ल॰) ने मुझसे कहा कि तुमने यह क्यों किया या तुमने यह क्यों नहीं किया।" (हदीस : बुख़ारी-6938, मुस्लिम-5720)

एक बार हम हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अम्र (रज़ि॰) के साथ बैठे थे कि उनका एक कर्मचारी आया। अब्दुल्लाह-बिन-अम्र (रज़ि॰) ने उससे पूछा : क्या तुमने ग़ुलामों को खाना दे दिया? उसने कहा, नहीं। इस पर उन्होंने कहा : जाओ और उनको खाना दो, क्योंकि नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया है : "यह गुनाह (पाप) एक आदमी के लिए काफ़ी है कि वह उस व्यक्ति का खाना रोके जिस पर उसका पूर्ण नियन्त्रण हो।" (हदीस : मुस्लिम-2182)

हिलाल-बिन-यसाफ़ (रह॰) कहते हैं कि एक आदमी नाराज़ हो गया और उसने अपनी बांदी को थप्पड़ मार दिया। उस समय हज़रत सुवैद-बिन-मुक़रिन (रज़ि॰) ने कहा : "क्या तुम्हें उसके चेहरे के अलावा कोई दूसरी जगह मारने के लिए नहीं मिली?" देखो मैं मुक़रिन के सात बेटों में से एक था और हमारे पास केवल एक बांदी थी। हम में से सबसे छोटे ने उस लड़की को थप्पड़ मारा। उस पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि हम उसे आज़ाद कर दें।" (हदीस : मुस्लिम-4082)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तुममें से किसी को भी 'मेरा ग़ुलाम' नहीं कहना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अल्लाह का ग़ुलाम है। इसके बजाय यह कहना चाहिए, 'मेरे नौजवान' और ग़ुलाम को भी 'मेरे मालिक' नहीं कहना चाहिए, बल्कि 'मेरे सरदार' कहना चाहिए।" (हदीस : मुस्लिम-5592)

हज़रत ज़ैद-बिन-असलम (रज़ि॰) कहते हैं कि अब्दुल-मलिक-बिन-मरवान ने घर की सजावट के लिए कुछ सामान उम्मे-दर्दा (रज़ि॰) को अपने पास से भिजवाया। एक रात में वे उठे और सेवक को बुलाया। सेवक को उनके पास आने में कुछ देर लगी। अब्दुल-मलिक ने इस पर उसे बुरा-भला कहा। जब सुबह हुई तो उम्मे-दर्दा (रज़ि॰) ने उनसे कहा : "मैंने रात में तुमको नौकर को बुरा-भला कहते हुए सुना।" फिर उन्होंने कहा कि मैंने अबू-दर्दा (रज़ि॰) को कहते हुए सुना है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा : "लानत करनेवाले, बुरा-भला

कहनेवाले की न तो क़ियामत में सिफ़ारिश की जाएगी और न ही उसकी ओर से क़ियामत के दिन कोई गवाही देनेवाला होगा।" (हदीस : मुस्लिम-6281)

नीयत

उम्मे-कुलसुम-बिन्ते-उक़बा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि उन्होंने नबी (सल्ल०) को कहते हुए सुना : "वह व्यक्ति झूठा नहीं है जो लोगों में आपस में सुलह कराने का प्रयास करे और इसके लिए अपनी ओर से बनाकर कोई अच्छी बात कह दे।" (हदीस : बुख़ारी-2629)

नबी (सल्ल०) ने कहा : "वह व्यक्ति जो जान-बूझकर लोगों को अपने नेक कामों के बारे में सुनाता है, ताकि उनसे अपनी प्रशंसा सुने, अल्लाह तआला आख़िरत के दिन लोगों को उसकी अस्ल नीयत के बारे में बताएंगे और वह व्यक्ति जो लोगों के सामने केवल दिखावे के लिए भला काम करता है और लोगों की वाह-वाही लूटता है, अल्लाह ऐसे व्यक्ति की अस्ल नीयत बता देंगे (और उसको अपमानित कर देंगे)।

(हदीस : बुख़ारी-6499, मुस्लिम-7115)

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) उल्लेख करते हैं कि नबी (सल्ल०) ने कहा : "एक आदमी ने सदक़ा (दान) देने की नीयत की और वह इस उद्देश्य से सदक़ा लेकर बाहर आया और उसको एक व्यभिचारिणी के हाथ में दे दिया। सुबह लोग चर्चा कर रहे थे और कह रहे थे कि एक वैश्या को रात में सदक़ा दिया गया। वह व्यक्ति (सदक़ा देनेवाला) कहता है : "ऐ अल्लाह! प्रशंसा आप के लिए हैं। मैंने एक वैश्या को सदक़ा दे दिया।"

वह आदमी दोबारा सदक़ा करने की नीयत करता है और सदक़े के साथ बाहर जाता है और एक मालदार आदमी के हाथ में सदक़े की रक़म दे देता है। सुबह को लोग बातें कर रहे थे कि सदक़ा एक धनवान व्यक्ति को दे दिया गया। वह (सदक़ा देनेवाला) कहता है : "ऐ अल्लाह! प्रशंसा आप ही को शोभा देती है। सदक़ा धनवान व्यक्ति को चला गया।"

वह फिर सदक़ा देने की नीयत करता है और सदक़ा लेकर बाहर निकलता है और सदक़े की रक़म को एक चोर के हाथ में थमा देता है। सुबह लोग

फिर ये बातें बनाते हैं कि सदक़े की रक़म को एक चोर को थमा दिया गया। इसलिए (सदक़ा देनेवाला) कहता है : "ऐ अल्लाह! तारीफ़ आप ही को शोभा देती है। यह (कैसा दुर्भाग्य है) कि सदक़ा एक व्यभिचारिणी को, एक मालदार को और एक चोर को पहुँच जाता है।" (तभी) वहाँ एक फ़रिश्ता आता है और उसको बताता है कि "तुम्हारा सदक़ा क़बूल हो गया है। रही बात व्यभिचारिणी की (तो सदक़ा उसके लिए एक साधन बन सकता है) जिसकी मदद से वह अपने आपको व्यभिचार से बचा सकती है। मालदार आदमी सम्भवतः उससे सबक़ ले सकता है और अल्लाह की दी हुई दौलत में से उसके रास्ते में ख़र्च कर सकता है और रहा चोर, तो वह उसकी वजह से शायद चोरी करने से रुक जाए।" (हदीस : मुस्लिम-2230)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "कर्मों का दारोमदार नीयत पर है। एक आदमी को उसका बदला मिलेगा जिसकी उसने नीयत की हो। यदि किसी ने अल्लाह और रसूल (सल्ल॰) के लिए हिजरत की तो वह अल्लाह और उसके रसूल के लिए है और यदि कोई व्यक्ति किसी सांसारिक लाभ के लिए हिजरत करे या किसी महिला से शादी के लिए हिजरत करे तो उसकी हिजरत उसी चीज़ के लिए है जिसके लिए उसने हिजरत की।" (हदीस : मुस्लिम-4692)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "निस्सन्देह अल्लाह तुम्हारे चेहरों और तुम्हारी दौलत को नहीं देखता। वह तुम्हारे दिलों और तुम्हारे कर्मों को देखता है।" (हदीस : मुस्लिम-6221)

हिसाब का दिन

एक बार नबी (सल्ल॰) लोगों में बैठे हुए उनसे बातें कर रहे थे। इतने में एक देहाती आप (सल्ल॰) के निकट आया और पूछने लगा कि क़ियामत कब आएगी? आप (सल्ल॰) अपनी बात-चीत में व्यस्त रहे। कुछ लोग (जो सभा में थे) कहने लगे कि आप (सल्ल॰) ने देहाती की बात सुनी, लेकिन पसन्द नहीं की और कुछ कहने लगे कि नहीं, बल्कि आप (सल्ल॰) ने उसकी बात सुनी ही नहीं। जब आप (सल्ल॰) अपनी बातें पूरी कर चुके तो (मैं समझता हूँ कि) आप (सल्ल॰) ने इस प्रकार कहा : "वह क़ियामत के बारे में पूछने

वाला कहाँ गया?" उस (देहाती) ने कहा : "(ऐ अल्लाह के रसूल!) मैं मौजूद हूँ। आप (सल्ल॰) ने कहा : "जब अमानत (ईमानदारी) दुनिया से उठ जाए तो क़ियामत का इन्तिज़ार कर।" उसने कहा कि ईमानदारी उठने का क्या मतलब? आप (सल्ल॰) ने कहा : "जब (हुकूमत के कारोबार) अयोग्य लोगों को सौंप दिए जाएं तो क़ियामत की प्रतीक्षा कर।" (हदीस : बुख़ारी-59)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तीन व्यक्ति हैं जिनके लिए दो गुना प्रतिफल है। एक वह जो किताबवालों में से हो और अपने नबी (अलैहि॰) और मुहम्मद (सल्ल॰) पर ईमान लाए और (दूसरे) वह ग़ुलाम जो अपने मालिक और अल्लाह (दोनों) का हक़ अदा करे और (तीसरे) वह आदमी जिसके पास कोई लौंडी हो, उसे प्रशिक्षण दे तो अच्छा प्रशिक्षण (तरबियत) दे, शिक्षा दे तो अच्छी शिक्षा दे फिर उसे आज़ाद करके निकाह कर ले। तो उसके लिए दो गुना प्रतिफल है।"

फिर आमिर ने (सालेह-बिन-हय्यान से) कहा : "हमने यह हदीस तुम्हें किसी तरह की मशक़्क़त के बिना सुना दी (वरना) इससे कम दर्जे की हदीस के लिए मदीना तक का सफ़र किया जाता था।" (हदीस : बुख़ारी-97)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा : "अल्लाह कहता है कि तीन प्रकार के लोग ऐसे होंगे जिनके विरुद्ध क़ियामत के दिन मैं मुद्दई बनूँगा। एक वह व्यक्ति जिसने मेरे नाम पर वचन दिया और वह तोड़ दिया। दूसरा वह व्यक्ति जिसने किसी स्वतन्त्र मनुष्य को बेचकर उसकी क़ीमत खाई और तीसरा वह व्यक्ति जिसने कोई मज़दूर मज़दूरी पर रखा, उससे पूरी तरह काम लिया, लेकिन उसकी मज़दूरी नहीं दी।" (हदीस : बुख़ारी-2227)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "सबसे पहले (क़ियामत के दिन) लोगों के बीच ख़ून-ख़राबे के फ़ैसले किए जाएँगे।" (हदीस : बुख़ारी-6864, मुस्लिम-4185)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "सात आदमी ऐसे हैं जिन्हें अल्लाह क़ियामत के दिन अपने अर्श की छाया में जगह देगा, जबकि उस दिन उसके अर्श की छाया के सिवा और कोई छाया नहीं होगी। न्याय करनेवाला शासक, वह नौजवान जिसने अल्लाह की इबादत में जवानी लगाई, ऐसा व्यक्ति जिसने

अल्लाह को अकेले में याद किया और उसकी आँखों से आँसू निकल पड़े, वह व्यक्ति जिसका दिल मस्जिद में लगा रहे, वह दो आदमी जो अल्लाह के लिए एक दूसरे से मिलें और प्रेमपूर्ण सम्बन्ध रखें, वह व्यक्ति जिसे किसी उच्च श्रेणी वाली सुन्दर महिला ने (बुराई के लिए) अपनी ओर बुलाया और उसने जवाब दिया कि मैं अल्लाह से डरता हूँ और वह व्यक्ति जिसने इतने गुप्त तरीक़े से दान किया कि उसके बाएँ हाथ को भी पता न चल सका कि दाएँ हाथ ने कितना और क्या दान किया है।" (हदीस : बुख़ारी-6806, मुस्लिम-2248)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "क्या तुम जानते हो कि ग़रीब कौन है? सहाबियों ने उत्तर दिया : "हमारे बीच ग़रीब वह है जिसके पास न तो पैसा है और न दौलत।" नबी (सल्ल॰) ने कहा : "मेरी उम्मत में ग़रीब वह है जो क़ियामत के दिन नमाज़, रोज़ा और ज़कात के साथ आएगा, लेकिन (वह अपने आपको दीवालिया पाएगा, क्योंकि उसने अपनी नेकियों का ख़ज़ाना ख़त्म कर दिया होगा) उसने किसी को गालियाँ दी होंगी, किसी पर मिथ्यारोपण किया होगा, किसी की सम्पत्ति को उसकी अनुमति के बिना इस्तेमाल किया होगा, किसी की हत्या की होगी, या मारा होगा और इस तरह उसकी नेकियाँ दूसरे के खाते में डाल दी जाएंगी (उन लोगों के खाते में जिन पर उसने अत्याचार किया होगा) और यदि उसकी नेकियाँ लोगों का बदला न चुका सकीं तो ऐसे लोगों के पाप उसके खाते में डाल दिए जाएंगे और अन्ततः उसको नरक में फेंक दिया जाएगा।" (हदीस : मुस्लिम-6251)

नबी (सल्ल॰) ने कहा : "तीन चीज़ें एक मैयत (अर्थी) के पीछे-पीछे चलती हैं। उनमें से दो वापस आ जाती हैं और एक उसके साथ ही रह जाती है। ये हैं उसके घर के लोग, उसकी सम्पत्ति और उसके कर्म। उसके घरवाले और उसकी सम्पत्ति वापस आ जाती हैं और केवल उसके कर्म ही उसके साथ रह जाते हैं।" (हदीस : मुस्लिम-7064)